रातों जगी कथाएँ

[शिक्षा विभाग, राजस्थान के सृजनशील रचनाकारो का कथा सकलन]

रातो जगी कथाए

रातों जगी कथाएँ

सम्पादिका पद्मा सचदेव

शिक्षा विभाग राजस्थान
के लिए
चिन्मय प्रकाशन
153, चौड़ा रास्ता, जयपुर–302 003
द्वारा प्रकाशित

रातों जगी कथाएँ

सम्पादिका
पद्मा सचदेव

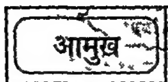


चिन्मय प्रकाशन, जयपुर

रातो जगी कथाएँ

- © शिक्षा विभाग राजस्थान, बीकानेर
- प्रकाशक शिक्षा विभाग, राजस्थान के लिए
  चिन्मय प्रकाशन
  153, चौड़ा रास्ता,
  जयपुर-302 003
- मूल्य 37.35
- संस्करण शिक्षक दिवस, 1992
- आवरण पारस भंसाली
- फोटो कम्पोजिंग इन्टरफेस इन्फॉमेशन टैक्नालॉजी
  सी 75 सरोजनी मार्ग,
  सी स्कीम जयपुर-302001
- मुद्रक एस० एन० प्रिंटस
  नवीन शाहदरा, दिल्ली 110032

RATON JAGI KATHAYEN (Collection of Stories)
Edited by Padma Sachdev Rs 37.35



रचना का जगत वास्तविक जगत का अग होते हुए भी इससे पृथक, निराला और समानान्तर होता है। रचना मे अनुभव का एक नया ससार सामने आता है और उन क्षणो को अद्वितीय बना देता है जिनमे रचना हो रही होती है। शब्दो की इस काया में रक्त, रस, माँस और अस्थियाँ सब शब्दो मे ही समाई रहती हैं। शब्द से इतर कुछ न होकर भी बहुत कुछ होता है इनमे यानी परिवेश, परिस्थितियो और समय के बदलाव के साथ अर्थ की गहरी, अनसोची और नई से नई परते खुलने की सभावना बराबर बनी रहती हैं। जब लेखक की रचनात्मक सवेदना पाठक को भी उसी स्तर पर झकझोरने लगे और सवेदना के स्तर पर दोनो एकमेक हो जाएँ तो समझा जाना चाहिए कि रचना अपनी अर्थवत्ता को सिद्ध कर रही है।

रचना के नाम पर लिखी जाने वाली सैकड़ो हजारो 'रचनाओं' मे से विरली ही समय की कसौटी पर खरी उतरती है। शेष या तो शब्दो की कसरत भर बनी रहती है या किसी अमर कृति के लिए उर्वरा जमीन तैयार करने मे खाद बनकर रह जाती हैं। अमर होने के लिए किसी कृति को समर्थ रचनाकार की साधना, उसकी अनुभूति की गहराई और प्रामाणिकता, प्रस्तुति का कौशल और सवेदनात्मक आवेगो की पकड़ से जुड़ा होना आवश्यक है। इसीलिए कहते हैं कि रचना के क्षण विरले भी होते है और निराले भी।

राजस्थान के सृजनशील शिक्षक साहित्यकार इन विरले और निराले क्षणों की पकड़ करने का प्रयास करते रहे हैं। इनमें से कुछेक शब्द शिल्पी एवम् कृतिकार ऐसे है जिन्हे देशव्यापी प्रतिष्ठा मिली है। इन लोगों ने शिक्षा विभाग के भी गौरव को बढ़ाया है। हमारे लिए रचना का यह ससार एक परम्परा है – आज से नही, सन् 1967 से, जब हमने इस परिक्रमा को शुरू किया था।

पूरे पच्चीस वर्षों की यानी एक चौथाई शताब्दी की साधना हमारे साथ है। इसे रजत-जयन्ती की सज्ञा से विभूषित करे, न कर – यह बेमानी है लेकिन इतना सत्य अवश्य है कि पूरे देश के शिक्षा विभागो म केवल राजस्थान का शिक्षा विभाग ही इस प्रकार के अनुष्ठान को चला रहा है। देश भर के चर्चित साहित्यकारो, समीक्षको और राजनेताओं ने इस तथ्य को स्वीकार किया है – उनकी यह मान्यता ही हमारी असली ताकत है।

रचना की इस अविरल श्रृखला मे अब तक कुल 123 पुस्तके प्रकाशित हो चुकी है और इस वर्ष की 6 पुस्तका को मिलाकर यह सख्या 129 तक पहुच जाएगी। सख्या के गौरव से कही अधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इन पुस्तको का सम्पादन देश के सुप्रसिद्ध, चर्चित और सर्वमान्य साहित्यकार करते रहे है। शिक्षा विभाग उन सबके प्रति आभारी है। इस वर्ष प्रकाशित होने वाली पुस्तको के नाम इस प्रकार हैं -

1	रेतघड़ी (कविता सकलन)	स मगलेश डबराल
2	रातो जगी कथाएँ (कहानी सकलन)	स पद्मा सचदेव
3	प्रतिमा के पख (हिन्दी विविधा)	स क्षेमचद्र 'सुमन'
4	आखर बेल (राजस्थानी विविधा)	स ओंकार श्री
5	शिक्षा समस्याए तथा सभावनाए (शिक्षा साहित्य)	स राजेन्द्र पाल सिह
6	बादल और पतग (बाल साहित्य)	स राजेन्द्र उपाध्याय

इस वर्ष हमने एक नया निर्णय लिया है। शिक्षक हो अथवा कर्मचारी – शिक्षा विभाग की कार्मिक सरचना मे दोनो का हाथ है अत इस वर्ष के सकलनो मे आपको सृजनशील शिक्षको और कर्मचारियो दोनो की रचनाओं का लाभ मिलेगा।

मुझे एक बात अपने रचनाकारो से कहनी है। यह सही है कि लब्ध-प्रतिष्ठ सम्पादको ने कुछ रचनाओं अथवा रचना अशो की सराहना

की है तो कई जगह कमियाँ भी बताई हैं। सराहना जहाँ हमे सुख देती है, वहाँ कमियाँ सुधार के अवसर प्रदान करती हैं। साहित्य की रचना करना भी एक शिक्षा कर्म है। साहित्य और शिक्षा को अलग थलग नही किया जा सकता। दोनो का काम लोकमानस को परिष्कृत और सस्कारित करना है। दोनो सत्य पथ के सहभागी है। दोनो एक ऐसा इसान गढ़ना चाहते है जो इन्सानियत की सही और सार्थक पहचान दे सके।

जिन लोगो की रचनाओं का इन सकलनो मे समावेश है, मैं उन्हे बधाई देता हू। जिनकी रचनाएँ नही छप पाई हैं, उनसे मेरा आग्रह है कि रचनाधारा से लगातार जुड़े रहे, लेखनी के पैनेपन को बनाये रखे और आगामी वर्ष के सकलनो के लिए अपनी श्रेष्ठतम और नवीनतम रचनाएँ दे। मै इस वर्ष के सम्पादको और प्रकाशक बधुओं का हृदय से आभारी हू जिन्होंने कम समय मे उत्कृष्ट सम्पादन एवम् प्रकाशन द्वारा विभाग के इस अनुष्ठान को सफल बनाने मे सहयोग दिया है।

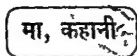
शिक्षक दिवस, 1992

मनोहर कान्त कलोहिया निदेशक,
प्राथमिक एव माध्यमिक शिक्षा,
राजस्थान, बीकानेर

'कथाकार यदि सचमुच जीवन का गहरा और व्यापक ज्ञान रखता है तो वह प्रसग स्थिति मे वद्ध मनुष्य की सवेदनात्मक प्रतिक्रियाओं को ही महत्त्व नही देना, वरन उस स्थिति से सम्वन्ध रखनेवाले जो वस्तु सत्य हैं उनको वनानेवाले तत्त्वो पर अर्थात् व्यक्ति स्वभाव की विशेषताओं, वास्तविकता की पेचीदगियो और अव तक चलते आये इन सवके विकास-क्रम पर, इन सव पर, अवश्य ही ध्यान देकर इस प्रसग स्थिति के वस्तु सत्य के ताने-वाने (कलात्मक प्रभावशाली रूप मे, भौंडे ढग से नही) प्रस्तुत करेगा । और इस प्रकार व्यक्ति समस्या को मानव समस्या वनाकर एक व्यापकतर पार्श्वभूमि मे उसे उपस्थित करेगा । वैसा करना चाहिए ।

—गजानन माधव मुक्तिवोध (एक साहित्यिक की डायरी पृष्ठ १०८)





उदासी तो शाम ढलते ही शुरू हो जाती है पर जब रात गहराने लगती है, तब उसकी कोख से जन्म लेती है कहानी, जैसे बरसात मे बीर-बहूटिया निकलती हैं। पहाड़ो की गोद में जहा तहा सोते फूट आते है जैसे पाव से दबा देने पर भी धरती फूल-उगेरती है, वैसे ही कहानी उगती है।

पहली कहानी का जन्म तब हुआ होगा जब किसी बच्चे ने सारे दिन की थकी हारी मा के गले मे अपनी आतुर बाहे डालकर मचलते हुए कहा होगा–

मा, कहानी

सारे दिन की थकी हारी मा के लाख मना करने पर भी जब बच्चे का ठुनकना, जिदियाना, तरह-तरह की दलीले देना भी मा को टस से मस न करता होगा, तब हथियार डाल देने के सिवाय कोई चारा न देखकर मा ने झुझला कर कहा होगा, लो सुनो कहानी।

एक था राजा
एक थी रानी,
दोनो मर गए
खत्म कहानी।

बच्चे ने तुरन्त विद्रोह किया होगा–

नही, यह कहानी नही है इतनी छोटी कहानी नही हो सकती।

इसे लम्बी करो।
करो, ना मा।

तब मा ने सारे हथियार डालकर अपनी सोच और तौफीक के मुताबिक राजा रानी की कहानी घड़ी होगी।

यही से शुरू होती है कहानी की कहानी।

किसी भी उमर मे कहानी सुनकर सुनना अच्छा लगता है, सिर्फ कहानियो के मायने बदल जाते हैं। हम सब की एक कहानी होती है इसलिए दूसरो की कहानी जान लेने की उत्सुकता हर मन म सिर उठाए रहती है।

आजकल मेरी अपनी जो करानी है वह घोर अस्वस्थता की कहानी है । जव भी मै विस्तर से उठ पाई हूँ यह कहानिया पढ़कर भरी हुई चौपालो गमा गभा कूचा, मदरसा खेल के मैदानो हस्पतालो नौकरी ढूढ़ते वच्चे के तेज कदमा और गहमा गहमी की वौछारो के चक्कर लगा आई हू । वीमारी के मेरे ये दिन वड़ी गैनक और वड़े मकून से कट गए है, और भी कितने ही दिन मै इनसे भरी भरी रहूँगी । कहानी तो हर किसी के पास होती है सिर्फ कहने का ढग मुख़तलिफ हो सकता है ! अध्यापका की ये कहानिया पढ़कर मुझे यह जानकर सुख मिला कि आस पास विखर दर्द को महसूसने जानने पहचानने और चुनने की उन्हे ललक है ।

कहानी वावड़ी से जल खीच लाने की तरह है । आपके पास कितना वड़ा घड़ा है कितना गहरा कुआ है कितनी भूमि वह सीच पायेगा इम पर कहानी का दारोमदार होता है । शिक्षको ने यह काम वखूवी किया है । मुझे आशा है वावड़ी से भरे इस जल से कित्नी ही वजर जमीन हरी होगी कितने ही अधिक फल उसमे उगेगे ।

म राजस्थान की धरती की तहेदिल से शुक्रगुजार हू, इतनी लू और धूप म भी उसने जल खीचकर वाटा है ओर मुझे भी दिया है ।

कहानी पढ़कर मुझे हमेशा सुख मिलता है । आशा है आपको भी मिलेगा । इसम जो सुन्दर है वह आपका है जो वाकी है वह मेरा ।

(पद्मा सचदेव)

मितवाघर
टोडरमल मार्ग
वगाली मार्केट नई दिल्ली

अनुक्रमणिका



लथपथ

जनक राज पारीक

बारात के साथ लौटते समय मेरा अन्तर्द्वन्द्व और भी तीव्र हो गया। क्या करूँ, घर तक चलूँ या रास्ते मे उतर जाऊँ ? तीन दिन की छुट्टी ले रखी है। रास्ते मे उतरने से थोडा मिलना-जुलना हो जाएगा। छुट्टियाँ भी काम आ जाएँगी। मैंने बस की खिडकी से सिर निकाल कर मील के पत्थर पर नजर डाली-मलोट सोलह किलोमीटर।

ठीक है, अभी पन्द्रह मिनट मे मलोट आ जाएगा, वहाँ उतर जाऊँगा। बारह वर्षों के बाद आज वर्षा से मिलूँगा, तो कैसी अनुभूति होगी उसे ? मुझे भी जाने कैसी-कैसी मानसिकताओ से गुजरना पडेगा। बारह वर्ष पहले जिस वर्षा को हमेशा के लिए अलविदा कह दिया था, आज उसका साक्षात्कार कितना आकस्मिक, कितना अपरिचित और कितना कसक भरा होगा। जिस वर्षा के लिए मैंने कल्पना मे शीश-महल बनाए थे, सपनो के स्वर्णिम ससार का निर्माण किया था और तूफानो मे रेत के घरौंदे खडे किये थे, उसकी विदाई पर बारह वर्ष पूर्व मेरी आँखो से आँसू का एक कतरा भी नहीं गिरा था। मैं अपनी हैसियत पर रोया था।

शादी के तीन साल बाद वर्षा राष्ट्रीय कला मन्दिर के सास्कृतिक समारोह मे मिली थी, गोद मे एक नन्हीं-सी बच्ची लिये। बहुत डूबते स्वर मे बोली थी, "भाषी, अब वे बातें तो रह नहीं गई हैं। अपने-अपने सुख-दु ख हैं, उन्हें देखो, भोगो। समय की दौड मे तू हमेशा ही हारा है। मैं भी क्या करती?" फिर आमन्त्रण के स्वर मे बोली थी, "कभी मलोट आओ न, अब जब मन मे एक-दूसरे के प्रति कोई पाप ही नहीं, तो मिलने मे क्या हर्ज है? फ्रेंड दोस्त के नाते मिलना तो गुनाह नहीं?" कुछ रुक कर कहा था, "ओसवाल धर्मशाला के पीछे मकान है- बारजे वाला। पीले रंग की पुताई की हुई है।

आग नीम का पेड है। उनका नाम लेकर किसी से पूछ लना। आओगे?" मैंन कोई उतर नहीं दिया तो नितान्त असहाय स्वर मे बोली थी" ह, क्या कहत हो ?"

"आऊँगा।" मैने बुझी आवाज मे कहा था।

"आज जाऊँगा।" मैने सोचा। वर्षा की लडकी अब ना वष की हो चुकी होगी। कम से कम चौथी मे पढती हागी।

वर्षा क्या अब भी वैसी ही होगी? मैने विस्मित हाकर सोचा, वैसी ही नटखट वैसी ही आकर्षक। बात-बात पर 'गुड' कहने वाली, हडल रेस मे हमेशा प्रथम आने वाली।

आज देखूँगा अभी पाँच मिनट बाद मलोट आ जाता है। लेकिन उसका पति क्या कहेगा? कहीं बुरा नहीं मान जाए-मैन साचा। फिर मलोट उतरन क बाद घर पहुँचने के लिए भी रोडवेज की बस पकडनी होगी। कम से कम दस-ग्यारह रुपये तो किराया लग जाएगा आर मरी जब मे कुल बीस-पच्चास रुपये हैं। पाँच रुपय वर्षा की लडकी के हाथ पर भी रखने पडगे, व्यर्थ मे दस-पन्द्रह रुपये के नीचे आ जाऊँगा- दस मिनट की आपचारिकतापूण मुला।त क लिये। पन्द्रह रुपये मे तो दोनों चारपाइयो का निवाड धुल जाएगा जो उन्ते समय उधड कर रख आया था। कोट की ड्राइक्लीन आर रफू के लिये भ। पैसे बचे रह जायेगे।

फिर उतरना ही है तो अबुल-खुराना उतर जाऊँगा। बीवी-बच्चो से मिल लूँगा पत्नी भी खुश हो जाएगी। न हुआ तो साथ ही लता आऊँगा। महीना तो हो गया मायके आए। सर्दिया भी आ रही हैं। रजाइया भरवा कर धागे डालन हैं बच्चा क स्वेटर आदि धोने हैं। नीटे क छमाही इम्तहान भी सिर पर हैं।

यही ठीक है ससुराल म उतरना ठीक रहेगा मैंन सोचा आर अबुल-खुराना उतर जान की योजना गढते हुए तेजी स पीछे छूटते मलाट का दखने लगा-जसवन्त थियेटर, विश्वकमा आटो वर्क्स वैरायटी इम्पारियम हलाली माट की दुकान कच्चा झटका ओसवाल धमशाला। आह! ओसवाल धर्मशाला सहसा अन्दर हा अन्दर कुछ हलाल हाती हुई मुर्गी की तरह फडफडाया आर धीमे-धीमे निष्कम्प होन लगा।

पड भागते रहे स्टेशन छूटते रह आर बस का भोपू भयावनी आवाज म रह-रह कर बजता रहा-बजरवाला टीकमगढ पजपियार चन्नन खडा और थोडी देर म अबुल-खुराना आ जाएगा।

अबुल-खुराना भी उतर कर क्या हागा। मुझ मालूम है, चाय क फौरन बाद पत्नी गुड्डू के स्वेटर क लिये ऊन क पैस मागगी। छाटा साली सिनमा

दिखाने की फरमाइश करेगी । नीटा दिब्बी मागेगा । खाली हाथ जाना वैसे भी ठीक नहीं । फल-फ्रूट का एकाध लिफाफा तो ले जाना पडगा । सभव है घर पहुँचने क लिये किराया भी पत्नी से मागना पडे । इसस ता यही अच्छा ह कि पत्र लिख कर बुलवा लूँ बच्चा की मौखिक परीक्षा शुरू हो रही है दीपक का साथ लकर आ जाओ । बडा साला खुद ही आकर छाड जाएगा। किराय की भी बचत हो जाएगी । यही ठीक है ।

भागती हुई बस म मरी चिन्तनधारा एकदम थम गई । इस निर्णय ने मर मन का सवथा निद्वन्द्व बना दिया आर मैं दूल्हे क पास गठरी की तरह रखी हुइ दुल्हन को निहारने लगा- निरापद भाव स- अब वह बिल्कुल शात-स्थिर बेठी थी । विदाइ क समय दहाडें मारने वाले रदन की सुबकिया तक शप नहीं बची थी ।

गठरी शाम का खुलेगी-मन सोचा और मुस्कराया । सहसा बस एक झटके के साथ रुकी आर 'चाय-चाय' की आवाज आने लगी । अबोहर आ गया । यहा चाय हागी । पन्द्रह मिनट चाय आर फिर रवानगी ।

"हे? अबाहर आ गया।" मैंने चकित हाकर पडासी से पूछा "अबुल-खुराना गया ?"

"वाह मास्टर जी सो रह थ क्या ?" उसन मर प्रश्न का प्रश्न स काट दिया ।

"अच्छा ता अबोहर आ गया।" मैंने पडोसी का बताया, "यहा से मैंन ट्रनिग की थी।" और मैं स्नात वप पुरान अतीत म डूबने लगा- नि शब्द । प्रम अबाहरवी की याद बिजली की तरह कडकी और विस्मृति की अध-कदराआ म चुधिया दने वाला उल्लास भर गया । आह, प्रम अबोहरवी, मेरा अभिन्न, मरा सुख-दु ख का साझेदार, मरा दोस्त । मैंन यहा से ट्रनिग की थी । तब प्रेम अबाहर की बदद सडका पर रिक्शा चलाया करता था आर कविताएँ लिखता था तारकाल की जलती सडका क किनार साँय-साँय करत वृक्षा क नीच अबोहरवी अपने रिक्शे पर बेठा लिखता था - "मैं जीण लइ किसी दा सहारा नहीं मगदा," आर एक पक्ति पूरी हात-होते काइ सवारी आ जाती थी, "नयी आबादी चलोग ?"

डूबती हुइ ठस्स आवाज क उत्तर म पचास पैसे- आर कापी पैंसिल रिक्शे की सीट क नीच रख कल्पना लाक स धुआ उगलती सडका पर आ जाता था । कलश फार्मेसी क आग रिक्शा खडा कर हम लोग साहिब दित्ते के ढाबे पर चाय पीने बैठते तो आवाज आती "रिक्शा, ए रिक्शा!"

प्रेम इस पुकार का उत्तर मुझे देता, " चलता हूँ । शाम का मिलग। ' मुझे लगता जैसे रिक्शा प्रेम अबोहरवी का उपनाम है। वह अपने नाम स इतना

सजग नहीं होता , जितना रिक्शा की पुकार से चोकस हो जाता है। शाम को प्रेम की गुनगुनाहट में किसी गजल का मत्ला या कविता का चरण होता ।

"सौ तसीहे जान पई सैंदी है यार ।" प्रेम को गजल मैंन कॉलेज के स्थापना -दिवस पर पढी थी । खुश होकर प्रिंसीपल ने मेरी फीस की दूसरी किस्त निर्धन छात्र कोष से भरवा दी थी । कुछ पुस्तके साल भर के लिए इश्यू करवा दी थी । मैं तीन-चार ट्यूशनें भी पढाता था ।

कभी-कभार जब ट्यूशन के पैसे मिलते या प्रेम को लम्बे रास्ते की कुछ अच्छी सवारिया मिल जाती तो हम लोग गुरदास की लाइसस शुदा दूकान से जगाधरी का पानी मिला हुआ अद्धा खींचते और फरिश्तो की तरह बोलते। हमारी बाता म धरती पर स्वर्ग, मानव शोषण, विकास की बाधाए और देश की अर्थनीति जैस गरिष्ठ विषय आ जाते जिनका एक ही निष्कष निकलता "भाषी अपनी हालत साली हमेशा ऐसी थोडी रहेगी। अपना समय आएगा, यार ।"

ट्रेनिंग पूरी होत-होते प्रम ने मेरी सलाह पर रेलवे-स्टेशन क बाहर एक लकडी का खोखा लगा लिया था । उसन खोखे मे हिन्दी-उर्दू क दो तीन अखबार और किराये पर देन के लिये रगभूमि, युग छाया, फिल्मी दुनिया जे बी जासूस आदि रख लीं। खोखे क ऊपर मैंने अपने हाथ से लिख कर लकडी का पट्टी लगाई थी - प्रेम न्यूज एजेन्सी ।

"हाय प्रेम, आज तुझस मिलूगा ।" मैंन निर्णय लिया, बारात क साथ वापस नहीं जाऊँगा । चाय के बाद प्रेम अबोहरवी से मिलूगा । आज खाएगे, पीयेगे और मौज उडाएगे । रेल्वे-स्टेशन के बाहर खोखा होगा खोखे मे प्रेम। जात ही गाली दूँगा, "साले स्टाल चल निकली तो क्या बहादुरशाह जफर का फारुख बन गया? लैटर-वैटर भी नहीं डालता ।"

प्रेम भौचक्का सा रह जाएगा । मैं दो चार मैगजीन एक तरफ हटाकर खोखे मे घुसकर बैठ जाऊँगा । मयूर रेस्टोरट मे चाय मगवा कर दोनों साथ-साथ सुडकेंगे और "रिक्सा-रिक्सा" की पागल पुकार पर बखौफ हँसेंगे ।

"लो जी गर्मा-गर्म ।" अचानक एक व्यक्ति मेरे हाथ मे चाय का प्याला थमा गया । दूसरा आया और एक प्लेट मे एक गुलाब जामुन, एक पेस्ट्री, दो बर्फी क टुकडे और कुछ नमकीन पकौडिया रख गया । तीसरे न एक लिफाफा दिया जिसम एक केला, एक सतरा और दो चीकू बरामद हुए।

-सारी बारात प्लेटो पर टूट पडी । चाय की चुस्कियो से मण्डप गूँज उठा देखते ही देखते केले और सतरों के छिलका क ढेर लग गये । खाली लिफाफ से हाथ पौंछ कर मैंने उसे गेद की तरह मुट्ठी में कस लिया । एक लम्बी बुलन्द डकार लकर मैंने गद को छिलको क ढेर पर फैंका ।

"चलः, चलो बस मे बैठो" के आह्वान से बारात मे खलबली मच गई। जलती हुई बीडियाँ बुझने लगीं, सिगरेटो के टुकडे पैरो से कुचले जाने लगे और बस की सीटो पर लाग लद्द-लद्द गिरने लग।

"तो रुकू?" मैने अपने आप से पूछा।

दूसरी डकार बोली "अब चाय का मूड तो रह नहीं गया। वैसे भी काफी हैवी हो रहे हो। फिर प्रम रात को भी रोकने की कोशिश करेगा, तो तेजिन्द्र कौर की ट्यूशन मिस हा जायेगी और उसकी माँ बेकार म झिक-झिक करेगी। सरदारजी एक-एक दिन का हिसाब रखते हैं, दो दिन की गैर-हाजिरी पर पैसे काट लते हैं।"

"ख़ामख़्वाह झझट म पड जाएग।" मैंन अपन आप का समझाया सुबह लेट ऑवर्स मे घर पहुँचग। न खाने का टाइम रह जाएगा, न नहाने का। प्रेम से बाद मे भी तो मिला जा सकता है।" जेब बोली "यहा से भी तो घर जाने मे चार-साठ लग जाएगे, राशन की चीनी, पूर एक माह की।"

"चलना ही ठीक है, पेम को लैटर लिख देग।" मं होंठा म बुदबुदाया और हॉर्न देती हुई बस म तेजी के साथ चढ गया। प्रम स न मिलन क दु खो को मैं दूसरे सुखो से काट रहा था और छोटे-छोटे अड्डे दौडत हुए आ रहे थे-दौलतपुरा।

-प्रेम से माफी माग लेगे।

सरवर खुइया। प्रेम को लैटर लिखेगे कि जिद तो बहुत की लकिन दूल्हे के पिता ने उतरने ही नहीं दिया। उस्मान खडा। बुरा मत मानना यार किसी दिन सण्डे को आऊँगा।

मील का पत्थर। मौजगढ दा किलोमीटर, घर्र-घर्र। कालर खेडा-तेरह किलोमीटर।

मैं चौंका कालर खेडा। दस मिनट मे कालर खेडा आएगा। पाँच-छ माह पूर्व पचायती मदिर के पुजारी मुझे यहीं लेकर आए थे-गोपाष्टमी के रोज किसी भजन-कीर्तन के कार्यक्रम पर। सरपच को मेरा परिचय उन्होंने रेडियो-सिगर के रूप मे दिया था "सुभाष विकलजी हें जयपुर रडियो-स्टशन से प्रोग्राम देते है। यहा किसी काम से आए हुए थे-सो मिन्नत-खुशामद करके ले आया हूँ, अपने आज क कार्यक्रम के लिये।" कुछ रुक कर बोले थे, "वैसे तो इन्हे लाने की हैसियत अपनी कहाँ, पर गाँव के भाग और प्रभु की इच्छा। देव-योग से आज दर्शन-मेला हो गया तो हाथा-जोडी की। सीधे जयपुर से बुलाने मे तो कमर टूट जाती, पर आये हुए थे इसीलिए सस्ते म काम बन गया।

उस रोज बडी खातिर-तव्वजो हुई थी। मैने मीरा और सूर के तीन-चार भजन सुनाए थे, गाँव के लोग बडे प्रसन्न हुए थे। सरपच रिणवा ने हाथ

जोडकर कहा था, ''विकलजी, आपकी सेवा करने की हमारी औकात कहाँ, पान-फूल के रूप मे एक-सौ एक रुपये हैं, बाकी कभी फिर कमी पूरी कर देगे ।'' कुछ रुक कर बोले थे-'' कबीर का कोई भजन नहीं सुनाया आपने। गाँव के ज्यादातर लोग राधा स्वामी हैं । अब की बार कभी चक्कर लगे, तो कुछ कबीरदासजी के भजन सुन ले ।''

बस के अड्डे तक छोडने गाँव के लोगो के साथ सरपच साहब खुद आए थे । बडा आग्रह किया था, ''इस बार कभी जल्द ही समय निकालना। ज्यादा नहीं तो इस बार से अच्छी ही सेवा कर देगे । जरूर आना, जब भी समय मिले ।''

मुझे याद आया, एक-सौ एक मे से चालीस मुझे मिले थे । इकसठ रुपये पुजारी ने ले लिये थे, बस में ही । आने-जाने का किराया पुजारी ने खुद दिया था ।

कल्लर खेडा- एक किलोमीटर । मैंने खिडकी से झाँक कर देखा और मुस्कराया।

''मुझे यहा रुकना चाहिए ।'' मैंने सोचा, ''सरपच ने बहुत सच्चे दिल से कहा था, दुबारा आने को । गाँव के लोग भी बडे खुश होगे।'' मैं उचक कर खडा हो गया और बस की छत को थपथपाते हुए गला फाड कर चिल्लाया, ''कल्लर खेडा रोक के ।''

दूल्हे के पिता ने विस्मय से मेरी ओर देखा । उसकी दृष्टि प्रश्नभरी थी । मैंने अनुनय के स्वर मे कहा, '' मुझे थोडा कल्लर खेडा मे ड्राप कर देना । सरपच रिणवा साहब मुँह लगे आदमी हैं । नाराज हो जाएगे, अगर पता चला कि मैं सीधा निकल गया, बिना मिले, प्लीज ।'' मैं बदहवासी मे गिडगिडाया और पक्की सडक से कच्चे मे होकर बस एक झटके के साथ रुक गई । ''थैंक्यू वैरी मच'' बडबडाते हुए मैं नीचे उतरा । भडाक से खिडकी बन्द हो गई । अड्डे पर और कोई व्यक्ति नहीं था, मेरे सिवा । घरघराती हुई बस धूल का रेला छोड कर चल पडी ।

मैंने आँखें मिचमिचा कर सडक के दूसरी तरफ देखा । पीछे जिन्दगी के खुले हुए अध्याय थे । आगे तेजी से भागती हुई जिन्दगी थी और मैं बीचों-बीच खडा था धूल से लथपथ कबीर के पदो और रमैनियो म गोते खाता हुआ ।



गले लगने का सुख

शीतांशु भारद्वाज

वे सूर्य को जल चढान के लिए ऊपर छत पर जा रही थीं, तभी उन्हें राहुल के शयन-कक्ष की ओर से हसी की खिलखिलाहट सुनाई दी। उनके अदर कहीं मरोड-सी उठी। व वहीं ठिठकी रह गइ। सूर्योदय हो आया था। किंतु बहू अब भी राहुल के सग हस-खेल रही थी। गहरी सास खींच कर वे उधर से ऊपर छत की ओर चल दीं।

सूर्यदेव को जल-धार अर्पित करती हुई वे पिछले दिनो को स्मरण करन लगीं। घर म बहू लान की कितनी ललक थी उनके मन मे। किंतु अब उन्हें लगने लगा है कि वह उनका मात्र भ्रम ही था। अब तो उन्हे वह घर, घर नहीं लगा करता। जब से घर म गोपा बहू आई है, माँ-बेटे की दूरी बढती ही जा रही है। यह नारी का नारी के प्रति डाह-भाव भी नहीं है। बहू के प्रति उनके मन मे कहीं कोई कलुष या कुठा भी नहीं है। दहेज भी उनके मन-मुटाव का कारण नहीं है। बहू तो इतनी सुशील और गुणवती है कि रजनी बिटिया से भी कही अधिक वह उनकी सेवा-शुश्रूषा करती रहती है।

– माजी पाव दबाऊँ? जब-तब वह फुर्सत मे पूछ लिया करती है।

– नही बट व मुस्करा देती हैं अभी मैं बुढिया तो नहीं हुई न!

जल चढा कर वे नीचे उतर आईं तब तक बहू चाय बना चुकी थी। किचन स चाय लकर वे पति के कमरे मे चल दीं। श्याम बाबू अखबार पर दृष्टि जमाए हुए चाय पीन लगे।

– क्या जी! उन्हाने पति के आगे नमकीन की तश्तरी सरका दी, मै कुछ दिन के लिए अपने पीहर हो आऊँ?

श्याम बाबू ऐनक उतार कर उन्हे घूरने लगे। अखबार एक ओर रख वे चुपचाप पेट मे नमकीन ठूसने लगे। वर्षों बाद पत्नी को पीहर जाने की वह ललक उनको समझ मे नहीं आ पा रही थी। उन्हान विस्मय स पूछा, तुम

मायके जाओगी ?

- हाँ ।

- यह बेमौसम की बरसात कैसी होने लगी ? श्याम बाबू ने पूछा ।

वे उनकी प्याली मे केतली से चाय उड़ेलने लगीं, यों ही मन करता है।

- तुम भी एक ही हो ! श्याम बाबू परिहास करने लगे, जल्द ही तुम नातियो वाली भी होने लगोगी और तुम्हे इस उमर मे मायके जाने की सूझ रही है ।

- सो तो ठीक है । पर । उनकी बात मन में ही समा गई ।

- पर क्या ?

- यहा खाली-खाली जो लगा करता है । उन्होंने कहा ।

- खैर , तुम जानो । कह कर श्याम बाबू पैरों पर स्लीपर फसा कर कमरे से बाहर चल दिए ।

गोपा और रजनी दोनो डाइनिंग टेबल पर नाश्ता लगा चुकी थीं । सभी एक साथ सुबह का नाश्ता करने लगे। वे बराबर नोट करती जा रही थीं कि राहुल निरंतर बहू का ही ध्यान रखता आ रहा है । पुत्र की उस उपेक्षा पर उनका मन कसैला होने लगा ।

शुरू से ही वे सयुक्त परिवार मे रहने की अभ्यस्त रही हैं । जन्म से ही चहकते हुए परिवार मे सासें लेने की उन्हें आदत रही है । पुत्र के लिए 'घरू' बहू लाने की जिद उन्होने इसीलिए की थी । श्याम बाबू उन्हे बडी कठिनाई से समझा पाए थे, "अरे भई, तुम समझती तो हो नहीं । राहुल बडा हो आया है । अपना अच्छा- बुरा वह खूब समझता है । क्योंकर उस पर अपने विचार थोपती हो? उसे अपने मन की क्यो नहीं करने देतीं ?"

साढे नौ बजे तक सभी अपने-अपने काम पर चल दिए । श्याम बाबू अपने ऑफिस की जीप मे बैठ कर घर से ही साइट निरीक्षण पर चल दिए थे। राहुल भी गोपा को लेकर मोटर साइकिल से अपने ऑफिस चल दिया था । रजनी साढे आठ बजे ही कॉलेज जा चुकी थी । अब उतने बड़े घर म वे अकेली ही रह गईं थीं । ऐसे में वह घर उन्हें काट खाने को आने लगा ।

दस बजे के आस-पास घर मे महरी आ गई । आते ही वह उनका चेहरा पढने लगी, "बीबीजी, आज आप उदास लगती हैं ।"

- नहीं री! वे सहज होने का उपक्रम करने लगीं । अगले ही क्षण वे मुस्करा दीं ऐसी कोई बात नहीं है ।

महरी भी तो घर-घर का भेद लेने मे माहिर थी । वह उन्हीं के पास नीचे बैठ गई, "कहीं बहूरानी ने तो कुछ नहीं कह दिया ?"

– नहीं अनारो! वे बहू के गुणगान करने लगीं, हमारी बहू तो लाखों मे एक है । वह मुझे कुछ क्यो कहेगी भला ?

-फिर ठीक है, बीबीजी । अनारो उधर से किचेन की ओर चल दी । वहा वह शिक मे पड़े हुए बर्तन धोने लगी ।

बरामदे की इजी चेयर मे धसी हुई वे फिर से बीते हुए दिनो को याद करने लगीं ।

राहुल उनके साथ कभी कितना लाड-प्यार किया करता था । हर घडी वह "माँ! माँ!" की ही रट लगाए रहता था । कभी-कभी तो लाड मे आकर वह उनके बाल तक नोंचने लगता था । पिछले दो वर्ष तक वह उन्हे गलबाहे डालता रहा है ।

-माँ, इस कमीज का रग मेरी पेंट पर ठीक रहेगा न ?

–माजी, इस पैंट के साथ यह शर्ट ठीक रहेगी न ?

बिना उनकी अनुमति के राहुल कुछ तो भी नहीं किया करता था । एक बार उन्होंने उसे यों ही छेड दिया था, "क्यो रे राहुल । बहू के आ जाने पर तो तू मुझे पूछेगा भी नहीं ।"

– ओ माँ । राहुल ने उनके गले मे बाहे डाल दी थीं, मैं ऐसी बहू लाऊँगा जो दिन-रात तेरी सेवा किया करेगी ।

– वो तो करेगी ही । वे मुस्करा दी थीं, मैं तो यह कह रही हूँ कि तब तू पराया होने लगेगा ।

– नहीं माँ, ऐसा नहीं होगा । राहुल ने उनके कान उमेठ दिये थे यू आर ए नॉटी मम्मी ।

– क्या बोला ? उनका हाथ उसे मारने के लिये उठ खडा हुआ था ।

– शरारती माँ। उनसे दूर जाकर उसने हसी का ठहाका लगा दिया था।

वही राहुल आज उनकी मुट्ठी से फिसल कर बहू की मुट्ठी मे कैद हो गया है । विवाह के बाद से तो उसमे बहुत ही बदलाव आ गया है । हर घडी वह बहू के ही आगे-पीछे घूमता रहता है ।

– गोपा, आज क्या पहनू ?

– अरे भई, बताओ न । जब-तब वह बहू से राय लिया करता है, इस कमीज के साथ कौन-सी पतलून मैच करेगी ?

– बीबीजी, चाय पियेगी ? हाथ पोछती हुई महरी ने किचेन से आकर उनकी तद्रा भग की ।

– हाँ री । थोडी-सी अदरक भी डाल देना । वे वर्तमान मे लौट आई । उनका चितन फिर से प्रखर होने लगा ।

एम ए करने के बाद राहुल नौकरी करने लगा था । होम मिनिस्ट्री मे उसकी नियुक्ति असिस्टेंट के पद पर हुई थी । तब से तो वे दिन-रात बहू के ही सपने देखने लगी थीं । एक दिन पुत्र को विश्वास मे लेकर उन्होंने उससे अपने मन को बात कह ही दी थो, "राहुल, यह चूल्हा-चौका अब मुझसे नहीं सभाला जाता ।"

राहुल मुस्करा कर रह गया था ।

- हाँ रे । उन्होंने बात आगे बढाई थी, तेरे बाबूजी के एक मित्र हैं । उनको ।

- लेकिन माँ । राहुल ने उनकी बात बीच मे ही काट दी थी, मैं तो कमाऊ पत्नी चाहता हूँ ।

- अरे । उनके माथे पर बल पड आए थे, फिर तेरे बच्चो की देख-रेख कौन करेगा पगले ?

- माँ- बाबूजी । वह हँस पड़ा था ।

उन्होंने बात पति के कानो तक भी पहुँचा दी थी । श्याम बाबू ने भी राहुल का ही समर्थन कर दिया था । गोपा उसी के ऑफिस मे काम किया करती थी । उन दोनो ने बेटे की पसदगी पर ही अपनी स्वीकृति की मोहर लगा दी थी।

गोपा उस घर मे दुल्हन बन कर आई तो राहुल दो ही दिन म रग बदलने लगा था । धीरे-धीरे वह माँ की ममता लाड-प्यार सब कुछ भूलता गया ।

- बीबीजी चाय। महरी ने उन्हे चाय की प्याली थमा दी ।

- अरी अनारो । उन्होने चाय सिप कर पूछा, तेरी बहू के क्या हाल-चाल हैं ?

- वही रग-ढग हैं बीबीजी । अनारो उनके आगे अपना वही दुखडा रोने लगी, "बाप के घर जा बैठी है । यो कहे कि तब तक नहीं आऊँगी जब तक कि विनोद हमसे न्यारा नहीं हो लेता ।"

- अरी। उन्होंने पूछा, बेटा क्या कहता है ?

- वो भी तो उसी की वकालत किया करता है । आजकल हवा ही ऐसी चल पडी है बीबीजी। अनारो ने लम्बी सास ली, जब भी देखो, बहू के ही चोंचलों म डूबा रहता है ।

- अभी नये-नये हैं न । वे महरी को धैर्य बधाने लगीं, समय आने पर सब ठीक हो जाएगा । धीरज रख ।

- देखो। अनारो झूठे बर्तन लेकर किचेन म चल दी ।

घर का काम निपटा कर महरी किसी दूसरे घर मे चल दी । वे फिर

से अकेली हो आई। समय बिताने के लिये वे राहुल के कमरे से उनके विवाह का अलबम उठा लाई। उनके कश्मीर प्रवास के रंगीन चित्रो को देख कर वे स्वय ही शरमाने लगीं। उन छिछोरे चित्रो को वे और अधिक नहीं देख पाईं। उन्होंने वह अलबम अंदर रख दिया।

एक बजे के लगभग रजनी भी कॉलेज से घर लौट आई। वे जैसे अकेलेपन से उबर गई। उन्होने पूछा, आ गई, बेटी ?

- हाँ, माँ। रजनी अदर कमरे मे कपडे बदलने चल दी।

- चलो, ठीक किया। वे बुदबुदा दीं, एक से दो भले।

- माँ। रजनी उनके पास आ खडी हुई, आप भाभी से नौकरी क्यो नहीं छुडवा देतीं ?

- मेरा वश चले, तब न। वे अपना अनदेखा भविष्य बाचने लगीं, तेरे जाने के बाद से तो मैं कहीं की भी नहीं रह पाऊँगी।

- इस पर रजनी का चेहरा आरक्त हो आया।

तभी अदर फोन की घण्टी बजने लगी- ट्रिन ट्रिन ।

- जरा जा के फोन तो सुन आ। उन्होंने बेटी से कहा।

रजनी ने अन्दर जाकर फोन का चोगा कान से सटा लिया, हैलो। मैं रजनी बोल रही हूँ।

- ऐक्सीडेंट। रजनी लगभग चीख ही उठी। उसके हाथ से फोन छूट गया।

- किसका? वे बुरी तरह से घबरा उठीं। अन्दर पहुँच कर उन्होने पूछा, किसका हुआ री ?

- भैया-भाभी का। रजनी रुआसी हो आई।

- हे भगवान, उन्होने अपने माथे पर उल्टा हाथ मारा।

- रजनी फोन उठा कर आगे पूछताछ करने लगी, हैलो, आप कहाँ से बोल रहे हैं ?

- पत अस्पताल से।

- आहे। रजनी ने फोन पटक दिया।

आधेक घंटे बाद वे रजनी के साथ पत अस्पताल चल दीं। वहाँ के इमरजेंसी वार्ड मे राहुल और गोपा पास-पास के ही पलगो पर थे। गोपा के हाथो पर और राहुल के सिर पर पट्टियाँ बधी हुई थीं। उस समय उन दोनो की आँख लगी हुइ थीं।

- घबराइए नहीं। ड्यूटी नर्स उन्हे धैर्य बधाने लगी, दोनो ही से बाहर हैं।

- चोटे कहाँ-कहाँ आई हैं ? उन्होंने बेकली से पूछा।

- कोई खास नहीं । नर्स बताने लगी, गोपा को तो मामूली-सी खरोंच ही आई हैं । राहुलजी के सिर पर दो-चार टाके लगाने पड़े हैं ।

- हे ईश्वर ! वे बेटे के पलंग के समीप स्टूल पर बैठ गईं । वहीं से कभी वे पुत्र को देखतीं तो कभी पुत्र-वधू को ।

- माँ ! राहुल जाग गया था ।

- तुझे क्या हो गया था, मेरे लाल? वे बेटे के पाँव दबाने लगीं ।

- मोटर साइकिल ।

तभी नर्स ने उन्हें टोक दिया, ''देखिए, डॉक्टर ने अभी इनसे बात करने की मनाही की हुई है ।''

- गोपा भी जाग गई थी । वे पुत्र-वधू के पलंग पर चल दीं । भर्राए हुए स्वर में उन्होंने पूछा एक्सीडेंट कैसे हो आया था बहू ?

- राजघाट के चौराहे के समीप अचानक ही मोटर साइकिल उछल पड़ी थी । गोपा बताने लगी हम दोनों ही फुटपाथ पर जा गिरे थे ।

- अब तुम कैसी हो ?

- मैं तो अब ठीक हूँ । गोपा बिस्तर पर उठ कर बैठ गई, उन्हें शायद कुछ ज्यादा ही चोटें आई हैं ।

उनकी अंतरात्मा चीत्कार कर उठी । मन-ही-मन वे बहू-बेटे के लिये ईश्वर से दुआयें मांगने लगीं । श्याम बाबू भी आ गये थे । उन्होंने धीरे-से उनके कंधे पर हाथ रख दिया ''ईश्वर को धन्यवाद दो कि जान बच गई ।''

प्राथमिक चिकित्सा के उपरान्त गोपा को अस्पताल से छुट्टी दे दी गई । राहुल का अभी सप्ताह भर वहीं रहना था । बहू को लेकर वे लोग अस्पताल से अपने घर आ गये ।

अगले सप्ताह राहुल की अस्पताल से छुट्टी होनी थी । दोपहर बाद वे पति के साथ अस्पताल चल दीं । तब तक राहुल को छोड़ने की सारी औपचारिकतायें पूरी हो चुकी थीं ।

- माँ । माँ को देखते ही राहुल तीर की तरह चलकर उनके गले से आ लगा ।

उनकी आँखों से गंगा-यमुना बहने लगी । उसमें उनका सारा मनोमालिन्य धुलने लगा । उनके मन में अब कोई भी तो गिला-शिकवा नहीं रह गया था । अंतर से वात्सल्य की धारा फूट पड़ी । ऐसे में वे बार-बार राहुल को अपने वक्ष से सटाती जा रही थीं । वे उसकी पीठ थपथपाती हुई बुदबुदाने लगी, ''पगला कहीं का !''

स्टाफ नर्स ने श्याम बाबू को राहुल का मेडिकल सर्टिफिकेट थमा दिया, और बोली- इन्हें अभी सप्ताह भर तक आराम करना है ।

– धन्यवाद, सिस्टर ! श्याम बाबू ने वे कागजात अपनी जेब के हवाले कर लिए । अस्पताल से वे गेट की ओर चल दिये । एक टैक्सी मे बैठ कर वे सभी अपने घर चले आए ।

राहुल को घर आए हुए दो-तीन दिन ही हुए थे । गोपा ने भी ऑफिस से छुट्टिया ले ली थीं । दोनो सास-बहू राहुल की ही सेवा शुश्रूषा म लगी हुई थीं ।

नित्य की भाँति महरी भी आ गई । छूटते ही उसने पूछा, "राहुल बाबू अब कैसे हैं ?"

– पहले से कुछ ठीक है । उन्होने बताया, "सिर पर दो-तीन टाके आए हैं ।"

– भगवान का शुक्र है । महरी किचेन की ओर चल दी । वे भी उसी के पीछे-पीछ चल दीं । उन्होने महरी से पूछा, "तेरी बहू आइ कि नहीं ?"

– नहीं बीबीजी । बर्तन मलती हुई अनारो उदास हो आई, "हमारा विनोद तो हमसे न्यारा भी हो गया है ।"

– अरे ! गोपा के मुह से निकल पडा ।

– हाँ बीबीजी । महरी ने गहरा उच्छवास भरा, "इन दिनो तो वे दोनो आकाश मे तैर रहे हैं । पर कभी-न-कभी तो ।"

– हाँ री । वे बेटे के लिये चूल्हे पर हलुवा घोटने लगीं, "पखेरू भी तो नीचे आकर ही घोसला बनाया करते हैं न ।"

– लेकिन बीबीजी । महरी बर्तन पोछने लगी, "माँ का दिल कुछ और ही हुआ करे है ।"

– हाँ, सो तो है ही । उन्होने भी उसी का समर्थन कर दिया, "आजकल के छोकरे माँ की ममता क्या जाने ।"

काम समाप्त होने पर महरी किसी और घर की आर चल दी । व हलुवा बना चुकी थीं । बहू क साथ वे बेटे का पूछ-पूछ कर हलुवा खिलाने लगीं ।

– माँ ! राहुल ने खाली हो आई प्लेट माँ का थमा दी "कहीं तुम मुझसे नाराज तो नहीं हो ?"

– नहीं रे ! वे पूरी तरह से भर आईं । "माँ भी कभी बेटे से नाराज हुआ करती है ?"

– मेरी अच्छी माँ । राहुल ने उनके गले मे बाहे डाल दी ।

ऐसे मे वे और भी भर आईं । आँखे थीं कि खाली होने का नाम ही नहीं ले पा रही थीं । जब वे खूब बरस गईं तो उनका हाथ बेटे क कधे पर जा लगा, "तुम नहीं समझोगे, पगले! माँ तो मोमबत्ती हुआ करती है । मोमबत्ती ।"

सध्या समय श्याम बाबू भी अपने ऑफिस से लौट आए । किचेन का काम सास-बहू दोनो ही कर रहीं थीं । रात का भोजन करने के बाद वे सभी सोने की तैयारियाँ करने लगे ।

रात को श्याम बाबू ने उन्हे यों ही छेड दिया, "तुम तो उस दिन पीहर जाने को कह रही थीं ।"

- समय के साथ-साथ अब मन भी बदल गया है । वे हँस दीं ।

- हाँ । श्याम बाबू भी समय का दामन थामने लगे, "ऐसा ही हुआ करता है ।"

अब तो वे एकदम ही हल्की-फुल्की हो आई हैं । हर समय उन्हे यही लगता रहता है जैसे कि राहुल ने उनके गले मे बाहे डाल रखी हो । वे बेटे के बाल्यकाल की स्मृतियो मे खोती जा रही थीं । बिस्तर से उठ कर वे बॉथरूम की ओर जाने लगीं । राहुल के शयन-कक्ष से हँसी की मिली-जुली खिलखिलाहट आ रही थीं । बीच-बीच में बहू की चूडियाँ भी खनकती जा रही थीं ।

वे मुस्करा दीं । हँसी की वे खिलखिलाहटे और चूडियो की खनक उन्हे कर्ण-प्रिय लगने लगीं । बॉथ से वे अन्दर अपने कमरे मे आ गई । श्याम बाबू की आँखो मे उनके लिए प्रश्न-चिह्न उभर आए । उन्हे इतना उल्लसित उन्होंने पहले कभी भी तो नहीं देखा था।

बस, यो ही, शर्म के मारे उनकी आँखे झुक गई ।

अब व अपन बिस्तर पर लेटी हुई थीं । उन्होन आँखे मूद लीं । उसी मन स्थिति मे वे आत्मिक सुख मे लीन होने लगीं ।



मकड़ी

एस एम पुगलिया

क्यू भाई, डॉ सतीश यहीं रहते हैं क्या ?

चौंक कर ऊघते हुए चौकीदार न बोर्ड की ओर इशारा कर दिया। बूढे ने आँखें गडाकर धुधली रोशनी मे देखा- "डॉ सतीश भारद्वाज, मानसिक चिकित्सा विशेषज्ञ।" एक बार फिर उसन ऊघते चौकीदार को देखा और लपक कर पाँव पकड लिए, बोला- जमादार भैया, मझे डॉ साब से मिला दो। तुम्हारा बडा उपकार होगा। मेरी बेटी सोनी बहुत बीमार है, पता नहीं ? ओफ् ।

"चुप रहो। देखते नहीं साढे बारह बज रहे हैं" और चौकीदार ने दूर घटाघर की ओर इशारा किया- "डॉ साब कमरे मे पढ रहे हैं।" और फिर उसने ऊपरी कमरे की जलती तेज रोशनी को इगित किया। बूढा बाप चीख पडा- "तुम्हारा उपकार जिन्दगी भर नहीं भूलूगा जमादार। सिर्फ एक मिनट के लिए मिलने दो।"

"तुम जाते हो या " जमादार ने अकड़ कर बूढे का गला पकड़ लिया। "क्या बात है चौकीदार ? क्यो शोर कर रहे हो ?" चौकीदार आवाज के साथ घूम पडा। पीछे सीढियो पर डाक्टर साब अपने बेशकीमती रात्रिकालीन चोगे मे खडे थे। कुछ नहीं सरकार- ये बूढा , चौकीदार कुछ बोले उसके पहले ही बूढा डॉ साब के पावो म था।

"सरकार- डॉ साब, मेरी बेटी को बचाइये। डॉ साब न जाने वो क्या-क्या बक रही है। मैं मैं आपका एहसान जिन्दगी भर नहीं भूलूगा - पर ।"

"पर क्या ? बताओ तो सही। खैर कोई बात नहीं। चलो अभी चलता हूँ" और डॉ सतीश ऊपर चले गये। बूढा डॉ को यू देख रहा था जैसे किसी देवता को देख रहा हो। चौकीदार की आँखे बूढे को खा जाना चाहती थीं

पोर्टिको मे खडी गाडी मे आकर जब डॉ तथा बूढा बैठे तो चौकीदार ने आकर पूछा, ''ड्राईवर को बुलाऊँ साब ।'' ''नहीं मैं ही चला लूगा ।'' डॉ ने जवाब दिया और गाडी आगे बढ गई ।

डॉ सतीश अभी हाल मे ही विदेशो से मानसिक चिकित्सा मे विशेषज्ञ बन कर आये हैं, और इन थोड दिनो मे उन्होने अच्छी ख्याति अर्जित की है । वे मानसिक इलाज के लिये सर्वप्रिय हो गये हैं । इन दो सालो मे उन्होंने अच्छी खासी आमदनी कमा ली है । लगन के वे पक्के हैं । माँ-बाप बचपन मे हो चल बसे और शादी अभी तक की नहीं । शायद उनके उसूलो के खिलाफ हो यह बात । अभी-अभी डॉ साब को अमरिका की किसी यूनिवर्सिटी ने निमत्रण दिया है कि वे मृत आत्माओ की क्रियाओ सबधी खोज करे ।

डॉ साब के अध्ययन-कक्ष की बत्ती अभी तक जल रही है । सैकडो किताबे बडी-बडी आलमारियो म ठसाठस भरी हैं और डॉ साब अपनी स्टडी टेबिल पर झुके किताब मे मग्न हैं । कुछ सोचते भी जा रहे हैं और गम्भीरता से कुछ नोट्स भी ले रहे हैं ।

हॉल मे घडी के पैंडुलम ने बिम बाम करके रात्रि के एक बजाये तो डॉ साब चौंक कर उठ गये । कलाई पर बधी घडी मे देखा, ठीक एक बजे थे । खिडकी खोल बाहर देखने का प्रयास किया तो कुछ देख न सके । बाहर घना अधेरा छाया था, सभी कुछ जैसे रात के काले साये मे मग्न था । दूर सडक के किनारे रोशनियाँ अधकार को दूर करने की असफल चेष्टा कर रही थीं । डॉ सतीश खिडकी के पास खडे होकर कुछ सोचने लगे। वे सिगरेट के कश खींचते रहे और न जाने कब तक खडे रहते कि पैंडुलम ने दो बार ''बिम बाम, बिम बाम'' किया । उन्होने फिर कलाई की घडी की ओर देखा और अचानक उन्हे याद आया, आज मैंने खाना भी नहीं खाया, बेचारा बावर्ची कभी का हॉल मे खाना लगा कर चला गया होगा और वे नीचे हॉल की ओर बढ गये । देखा खाना टेबिल पर कभी का ठडा हो गया था । उन्होने कुछ सोचा और इतनी रात मे नौकर को बुलाना उचित न समझ कर, आलमारी मे से हीटर निकाल लाय और खाना गर्म करने लगे । धीरे-धीरे शोरबे सब्जी हलवे मे से भाप उठने लगो । सारा हॉल खाने की सुगन्ध से भर गया । फिर उन्होने कॉफी का पानी चढाया और सामान लाकर पास बैठ गये । सोचने लग गये । वे छनन् की आवाज से चौंक, कॉफी का पानी उबल कर हीटर पर गिर रहा था । उन्होंने हीटर का प्लग निकाला और खाने की टेबिल पर बैठ गय । खाने की भीनी-भीनी सुगध ने डॉ साब थकान म सतोष भर दिया और वे उत्साह से खाना परोसने लगे । हॉल म प्लेटों की आवाज सुनसान रात्रि के उत्तरार्द्ध मे, जलतरग-सी बज रही थी । सामने की खिडकी से एक तेज हवा का झोका आया सायू-

साय और उन्होंने सारी खिडकिया व दरवाजे बद कर लिये । यह सोचकर कि शायद आधी और तूफान आने वाला है । वे खाना खाने बैठ गये। एक ग्रास लिया था कि उन्हे लगा जैसे कोई बरामदे मे चल रहा हो और उनका हाथ रुक गया । उठकर बाहर दरवाजा खोलकर देखा तो सिवाय अधकार क बाहर कुछ भी नहीं था । फाटक पर चौकीदार भी तूफान की आशका जान अपनी कोठरी मे चला गया था ।

वहम समझकर वे वापस चले आये और दरवाजे की अदर से सिटकनी लगा दी। खाते-खाते फिर लगा, धीमी-धीमी कदमो की चाप फिर आने लगी है । उन्हे लगा कदम और करीब दरवाजे क पास आ रह हैं । तभी तज हवा का झौंका आया और हॉल के किवाड चरमरा उठे । डॉ साब का चट्टान-सा दिल भी हिला, लचका और वे गभीर हो गये । सरटि के साथ फिर खामोशी छा गई । वे इसे भी वहम समझ कर मुस्कुराते, खाते चले गये। पर मुश्किल से दो मिनट गुजरे हागे कि फिर उन्हे पदचाप सुनाई दी । साथ ही पायल की पतली "छन-छन" की आवाज भी । उन्हे लगा कदम हॉल के दरवाजे के बाहर आकर रुक गये ।

एकाएक हॉल के अदर से बद तमाम दरवाजे-खिडकियाँ खुल गयी । तूफान का एक भारी झौंका अदर आया और पर्दों से लिपटता अखबार गुडगुडाता हुआ बाहर को मुडा । डॉ साब घबरा कर खडे हो गये । एकाएक फिर सब शात हो गया। पैंडुलम की टिक्-टिक् से स्तब्धता भग होने लगी ।

डॉ साब ने दरवाजे की और देखा जहाँ कदमो की चाप रुकी थी । उन्हे बाहर अधकार के सिवाय कुछ भी नहीं दिखाई दिया । वे एकटक देखते रहे बाहर की ओर तभी लगा एक सुन्दर चेहरा उभरा है दरवाजे की कोर से, और शब्द कानो मे पडे, "क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ ?" उसके साथ उन्होने देखा, एक सुन्दर सी नवयौवना उनकी ओर बढी चली आ रही है । वह खाने की मेज के पास आकर आश्चर्य स खाने भरी प्लेटो की ओर देखते हुए बोली, "कितनी अच्छी सुगन्ध आ रही है आपके खाने मे ।" डॉ साब सकते म कुछ नहीं बोल सके, जैसे जबान तालू से चिपक सी गई हो। एकाएक वह लडकी *तन गई, कुछ झुकी और बोली- "आप बाहर जाइये मैं खाना खाऊँगी ।"* डॉ जो अब सभल चुके थे बोले- "खैर मुझे कोइ एतराज नहीं । खाना आराम से खाओ, मैं चला जाता हूँ ।" यह कहते हुए दरवाजे आदि बद करके पास के कमरे मे चले गए । थोडी देर बाद खटका सुनकर वापस आये तो देखा, हॉल खाली था कुर्सी खाली थी प्लेटे इधर-उधर फैली पडी थी और पैंडुलम "टिक-टिक" कर रहा था । उन्होंने प्लेटे देखी सारा खाना साफ था । उन्होने कुछ सोचा और दरवाजे बद करके अपने सोने के कमरे मे आकर लेट गए । अगले दिन की स्कीम उनके दिमाग में घूम रही थी ।

दूसरी शाम फिर डा साब देर तक पढते रहे धीरे-धीरे एक-डेढ-दो बज गये । दूनी तैयारी के साथ वे अपने खाने की मेज पर बैठ गये और इतजार करते रहे । धीरे-धीरे चार बज गये । उन्होंने एक ग्रास भी नहीं लिया । पर कल वाला चेहरा नहीं आया । थक कर वे बत्ती बुझा कर सोने को चल गये ।

अगली शाम आज फिर डॉ साब कुछ सोच कर इतजार करने बैठ गये। परसों शाम की तरह आज भी घुप्प अधकार छा रहा था । वे खाने की टेबल पर कुहनिया के बल झुके इतजार करते रहे । धीरे-धीरे ढाई बज गये । उन्हें लगा आज भी वह नहीं आएगी । बाहर बादलो के टुकडे आपस मे भिडे और बूदा-बादी होकर वर्षा होने लगी, रह रह कर बिजली चमक उठती थी ।

बेसब्र होकर डॉ साब खाने लगे कि परसो की तरह आज फिर पदचाप के साथ दरवाजा खुला और एक भीगी देह उन्हीं कपडो मे हॉल के भीतर दाखिल हो गइ । वह कुछ बोलें कि उससे पहले ही डॉ साब बोल पडे-आओ, आओ, मैं तुम्हारा इतजार कर रहा था देखो, कितना स्वादिष्ट खाना मैंने तुम्हारे लिए बनवाया है । वह झपटी खाने की ओर पर शीघ्र चौंकी और आज्ञा के स्वर मे बोली, '' डा आप बाहर जाइये-मैं खाना खाऊँगी ।'' और डा साब आज्ञाकारी बालक की तरह दूसरे कमरे मे चले गये। पर वापस जल्दी ही लौट आये । देखा वह खाना खत्म कर रही थी । बाहर बारिश पड रही थी । सुनसान रात्रि का आचल फैलता जा रहा था ।

डॉ बोले ''आज रात्रि कितनी भयकर है ।'' जवाब मे जलतरग स बजते स्वर सुनाई पडे '' हाँ है तो,'' डा साब ने देखा उसका चेहरा सतोष की धीमी मुस्कराहट लिए था । फिर निस्तब्धता छा गई । डॉ साब की आँखे उस देह के ऊपर से लेकर नीचे तक गयी और उनके दिमाग ने मान लिया वह बहुत सुन्दर है अग-अग जैसे साचे मे ढला है । हॉल मे ''टिक-टिक'' के सिवाय कुछ भी नहीं सभी कुछ खामोश था । तभी घडी के पैंडुलम ने तीन बजाये । घबरा कर वह बोली, ''ओह बहुत देर हो गई है । जाऊँगी कैसे ?''

डॉ साब सभ्यतावश बोल उठे, '' कोई बात नहीं, आप पास के कमरे मे आराम कर ल । तब तक पानी थम जायेगा और मैं आपको गाडी म आपके घर छोड आऊँगा ।''

उसने कुछ भी नहीं कहा और डॉ साब के साथ सोने के कमरे मे आ गयी । डॉ एकाएक सकुचित हो गये । कमरे मे पलग एक ही था और सोने वाले दो थे । उन्होंने चारो और दृष्टि दौडाई और सोफे को पाकर सतोष कर लिया । वे सोफे पर थकावट के कारण लुढक से गये । उन्होने देखा- युवती बढ़ गई पलग की ओर और लेट गयी ।

डॉ ने फिर आखिरी बार देखा, सोई युवती की ओर- आचल ढुलक गया था। उनके मन ने फिर कहा- बहुत सुन्दर है और उन्हे लगा-- एक तेज काटा सा चुभ रहा था उनके सीने मे, झटके से उन्होंने आँखे बद कर लीं।

पास के हॉल मे पाँच बार बिम-बाम हुआ और डॉ साब की आँखे खुल गईं। देखा- पलग पर सलवटो के सिवाय कुछ नहीं था। वे भागे तेजी से बाहर की ओर। पानी थम गया था और चौकीदार वापस अपनी ड्यूटी पर आ गया था। पूछने पर मालूम हुआ कि उसने किसी को भी बाहर आते-जाते नहीं देखा है, और वे लौट आये। अचानक उन्हें लगा। उनके मन मे पहली बार हल्कापन था और प्यार की कोपल फूट रही थी उसके प्रति।

अचानक उन्ह याद आया वह दिन, जब करीब दो महीने पहले उन्होने रात्रि बेला म एक लडकी को देखा था और तीन दिन उसका मानसिक इलाज किया था। उन्हे लगा रात म आने वाली लडकी की शक्ल उस लडकी से काफी मिलती जुलती है, और उनक कदम गाडी की आर बढ गय।

रात्रि की अतिम घडी मे डॉ साब की गाडी भागी जा रही थी मजदूर बस्ती की ओर। उन्होने उसी घर का दरवाजा खटखटाया-- पर कोई नहीं बोला। दूर पूव म कुछ लालिमा छा रही थी।

पडोसी के एक घर का दरवाजा खुला और पूछने पर मालूम हुआ लडकी का बाप तो इलाज के बावजूद एक ऐक्सीडेंट मे मर गया था पर लडकी भली चगी हो गई थी। अब वह अकेली थी और खाने को कुछ भी सहारा नहीं था। बिचारी ने बहुत हाथ-पाव पटके पर पेट भर न सकी। अभी परसो सुबह ही वह छ दिन भूखी रहने के कारण मर गई। डॉ का दिमाग गाडी के पहियो के साथ घूम रहा था। उनके दिमाग म बीमार लडकी और रात वाली लडकी का चेहरा घूम रहा था।

आज फिर उन्हान बावर्ची को कह कर विशिष्ट मिठाइया बनवाइ और फिर इतजार करत रहे-करते रहे। सारी रात बीत गई पर वह नहीं आई। इसी प्रकार दूसरे दिन भी इतजार मे बैठे रहे सारी रात पर वो नहीं आइ। डॉ को विश्वास हो गया कि वह अवश्य आयेगी। उन्हे लगा उनके दिल म उसके लिये 'कुछ' है।

आज तीसरा रात थी ओर डॉ को विश्वास था आज वह जरूर आयेगी। खाने के कमरे म बैठा डॉ उसका इतजार कर रहा था। हॉल मे पैंडुलम ने बारह बार बिम-बाम किया। फिर एक बार, दो बार और तीन बार। तीन बज गये। डॉ बैचेनी से हॉल मे घूम रहे थ। दिमाग भी तेजी से कुछ सोच रहा था। रह-रह कर बद दरवाजे की सिटकनियो की ओर उसकी दृष्टि जाती थी और खाली लौट आती थी। उसने ठडे खाने को फिर गर्म किया। गर्म खा

की महक सारे हॉल मे फैली पर वह नहीं आई । उसे लगा वह जरूर आयेगी । बाहर रात्रि की कालिमा बढकर अपनी पूर्णता पर थी । मौत-सी खामोशी छा रही थी । घडी और डॉ के कदम बराबर चल रहे थे । तभी वे घबरा कर रुक गए । उन्होने देखा, एक झटके के साथ दरवाजे खुल गए और ठडी हवा का झौंका उन्ह कपकपा गया । वही चेहरा झटके के साथ उभरा और डॉ को सुनाई पडा, "आप मेरा इतजार मत कीजिए, मैं अब नहीं आ सकूगी ।"

डॉ कुछ बोलें- कि उससे पहले ही सब कुछ शात हो चुका । वे बाहर की ओर झपटे पर बाहर कुछ नहीं था । चौकीदार फाटक पर मुस्तैदी से पहरा दे रहा था ।



मजबूरी

दिनेश विजयवर्गीय

दिन भर स्कूल मे पढाकर और सात कि मी की साइकिल यात्रा पूरी कर मैं घर की चार दीवारी मे फाटक खोल प्रवेश हो ही रहा था कि छत पर पतग उडा रहे छोटे बच्चे अतुल की निगाह मुझ पर पड गई । वह मुझे आया देख, अपन साथी को डोर और चरखी थमा कर तेजी से सीढिया उतर आया ।

आते ही बोला- "डैडी, आज तो पास वाले खाली मकान के पास कहीं से कोइ कुत्ता आकर मर गया ।" फिर कुछ रुक कर बोला- "अब क्या होगा ?"

मैं उसस कुछ कहता तभी दिसम्बर माह के आखिरी दिनो की अलसाई धूप म स्वेटर बुनती पत्नी ने उसे टोका- "अरे थोडी देर तो चुप हो । ये क्या, आते ही जमाने भर की सूचना देने बैठ जाएगा ?"

मैं मेरी ही तरह बुढाती थकी-हारी साइकिल को दीवार के सहारे लगा अन्दर अपने कमरे मे पहुँचा ।

सुस्ताने के लिये थोडा लेटा ही था कि पत्नी चाय का गिलास लिये आ खडी हुई और बोली- "गर्म चाय का आनन्द भरा सिप लीजियेगा ?"

मुझ लगा जैसे किसी चाय का विज्ञापन पत्नी प्रस्तुत कर रही है शायद वातावरण को सामान्य बनाये रखने के लिये ताकि मैं कुत्ते की मौत के अनचाहे सकट स चिन्तित न हो जाऊँ ।

आज वह रोज की तरह मेरे पास नहीं बैठी । बल्कि व्यस्तता दिखलाते हुए किचन की ओर बढ गई ।

मैं नयी आई पत्रिका को देखने लगा । पत्नी सब्जी छौंक कर फिर से मेरे पास आकर बैठ गई और बिना किसी भूमिका के वह कुत्ते वाली बात कहने लगी ।

"कहीं से कुत्ता आकर पडौस के मकान के बाहर मर गया। फिकवाने की व्यवस्था करनी होगी।"

"देखेंगे।" मैंने संक्षिप्त जवाब दिया।

"देखगे क्या ? कल ही किसी हरिजन स बात करनी होगी। फिर थोडा ठहर, कुछ याद करती सी वह बोली- "लेकिन इधर तो कोई हरिजन साफ-सफाई के लिये आता ही नहीं।"

तभी अतुल ने आकर हस्तक्षेप किया- "मम्मीजी ! पीछे वाली लाइन म तेरह नम्बर वाली आटी के यहाँ आता है शायद कोई सफाई करने वाला।"

"अच्छा, उससे बात कर कोई व्यवस्था कर देना।" मैंने उसे उत्तरदायित्व सौंपत हुए कहा।

दो दिन बीत गये। काइ व्यवस्था नहीं हो पाई। कुत्ते की मृत काया से बु आने लगी थी। रह-रह कर सारा ध्यान न चाहते हुए भी उस ओर ही जाने लगा था। खिडकियाँ बद कर रहने के लिये अधेरे कमरो से समझौता करना पडा।

तीसरे दिन सुबह जब मैं मजन कर रहा था और पत्नी बाहर नल के पास बैठी बर्तन साफ कर रही थी तभी सयोग से एक हरिजन अपने दो बच्चो के साथ किसी सूअर के पीछे दौडता नजर आ गया।

मैंने उन्हे रुकन को कहा। पत्नी भी बर्तन धोती हुई उठ गई। उन लोगो को देख मैंने राहत की सास ली। पत्नी भी कुछ प्रसन्न दिखलाई दे रही थी।

वे लाग मेरा आवाज को सुन पीछा करना छोड, ठहर गये। मैंने उस व्यक्ति से पास मे पडे हुए मरे कुत्ते को उठा ले जाने का आग्रह किया।

दोनो बच्चो को दूर खडा रहने को कह वह हमारी ओर बढ आया। एक दृष्टि उसने हमारी ओर डाली। और फिर अपनी पैंट की जेब से सिगरेट निकाल उसे सुलगाते हुए कुत्ते की ओर बढा। उसने एक मिनिट उसे ध्यान से देखा और फिर घृणा से उत्पन्न मुद्राएँ बनाता हमारी ओर बढ लिया। उसने धुआ आसमान की ओर छोडत हुए कहा- "दस रुपये लागे।"

"हाय राम ! दस रुपय !" मेरे कुछ बोलने से पूर्व ही दस रुपये की उपयोगिता को पहचान पत्नी बीच मे बोल पडी।

"जी हाँ ! पूरे दस रुपये लागे-एक भी कम नहीं। जल्दी बतलाइये वरना हमारा काम खोटा हो रहा है।" वह व्यस्तता दिखलाते हुए बोला।

"नहीं जी हम तो महीने के आखिरी दिनो मे नहीं दे पाएगे दस रुपये। बस पाँच ही दगे।" पत्नी मेरी ओर मुखातिब होकर बोली।

"मजबूरी का फायदा न उठा, थोडा सहानुभूति से विचार कर।" मैंने भी पत्नी की बात का समर्थन किया।

"अभी पाँच दिन पहले सामने मेन रोड पर एक कुत्ता मर गया था। पूरे पन्द्रह रुपये लिय थे हटाने क। मैं तो यहाँ दस ही माग रहा हूँ।" उसने दस रुपये सही हैं का औचित्य प्रस्तुत किया।

"मेन रोड पर तो दो-तीन दुकानदारो ने व्यवस्था की होगी। यहाँ तो मुझ अकेले पर हो भार है। और फिर एक बात और है, ये तो छोटा-सा दुबला-पतला कुत्ता है। इसलिये पाँच रुपये ही ठीक हैं।" मैंने अपनी मजबूरी दर्शायी।

"देख लो जी, आपके समझ आये तो ठीक।" कहते हुए उसने अपने साथ के बच्चा को आग बढने का निर्देश दिया।

उसके जाने के बाद पत्नी ने- अब क्या होगा ? वाली दृष्टि से देखने के स्थान पर मेरी ओर से सतुष्टि भरी निगाह से देखा। शायद इसलिये कि निर्णय लेने मे मैंने उसकी बात का विशेप ध्यान रखा था।

"एक-दो दिन और देख लेते हैं। तब तक शायद कोई दूसरी व्यवस्था हो जाए।" पत्नी ने सुझाया।

दो दिन और भी बीत गये पर कोई व्यवस्था नहीं हुई। रविवार आ गया। इस बीच कुत्ते की बढती सडाध ने जीना मुश्किल कर दिया। रह-रह कर उबकाई आने लगी। कमरा की खिडकिया भी प्राय बद रखनी पडी। एक घुटा-घुटा सा अधरा वातावरण पैदा हो गया मकान मे। अब दिन मे भी रात की तरह ट्यूब लाइटे झरझराने लगीं।

सुबह साढ सात बज हम सब ड्राइग रूप मे बैठ चाय क साथ टी वी पर "रगोली" के गाना का आनन्द ले ही रहे थे कि बाहर से आवाज सुनाई पडी।

"बाई जी," पत्नी अपनी चाय का कप वहीं छोड बाहर निकल आइ।

थोडी देर बाद अन्दर आकर वह फिर से चाय का सिप लेती हुई कहने लगी - "हरिजन के दाना बच्च थे। बाल रह थ सात रुपये द दा। अभी कुत्ता उठा ले जाते हैं।"

"पर मैंने तो साफ कह दिया पाँच रुपये दग।" वह मुझसे फिर अपनी इस कही हुई बात के पक्ष में स्वीकृति चाह रही थी।

पर मैंने अब की बार उसकी बात का समर्थन न करत हुए कहा- "दो रुपये ज्यादा लगते, यह आफत तो मिटती और मानसिक दबाव मे तो नहीं जीना पडता।" मेर जवाब पर वह चुप्पी साध गई।

साढे नौ बज रहे थे । हम सब महाभारत देखने के लिये तब तक नहा-धो कर निबट चुके थे । बच्चे टी वी पर विज्ञापनो को देख रहे थे । पत्नी शैम्पू से घुले बालो को टावेल का फटकारा मार, उनका गीलापन दूर कर रही थी और मैं रविवार के रगीन अखबारा मे खोया हुआ था । तभी सुबह की तरह फिर एक परिचित ध्वनि सुनाई दी- "बाई जी ।"

मैंने देखा हरिजन के वही दोनो बच्चे थे । मैं उनसे बातचीत के लिये आग बढ ही रहा था कि पत्नी "बीच की दलाल बन" समस्या निवारण का श्रेय लेने के लिये बालो पर टावेल लपेटे बाहर निकल आई ।

बच्चे साइकिल थामे हमारे आने की प्रतीक्षा मे थे । हम देख बडा बच्चा बोला "लाओ साहब, पाँच रुपये मे ही फेक दगे कुत्ता ।" उसकी आवाज मे कोई मजबूरी थी आज ।

पत्नी अपन जीत की खुशी मे तेजी से अन्दर जाकर पाँच रुपय ले आई । तब तक हमारे बच्चे भी ड्राइग रूम से बाहर निकल आए थे ।

पत्नी ने पाँच का नोट उसे देने से पहले पूछा- "अब क्या हो गया, जो पाँच रुपये मे ही इसे उठा रहे हो ?"

"बाई जी । आज हमारी मजबूरी है ।"

"ऐसी कौन सी मजबूरी आ गई आज ?" पत्नी ने जानना चाहा ।

"घर मे रात से मेहमान आये हैं । सो मेरे पिताजी ने कहा, जितना कुछ दें ले आना।" उसने मजबूरी स्पष्ट की ।

"पर तुम सुबह तो कॉलोनी मे आगे की ओर बढ गए थे ?"

"हाँ जी, वो क्या है कि दो तीन घरो से भी कुछ एडवास रुपया लेना था । सो उधर आगे निकल गये थे ।"

"अच्छा ठीक है । सभालो पाँच रुपये ।"

उसने पाँच का नोट प्राप्त कर अपनी पैंट की जेब से पर्स निकाला व पूर्व मे एकत्रित किये गए नोटो की गड्डी मे मिलाकर फिर से पहले की तरह पर्स को जेब मे रख, तेजी से सडाध देने वाले कुत्ते की ओर बढ लिया ।

दोनो लडको ने साइकिल के केरियर पर कुत्ते को लाद, बिना पीछे मुडे पास वाली पहाडी की तलहटी की ओर तेजी से कदम बढा लिये ।

मैंने पत्नी के चेहर की ओर देखा- विजय की मुस्कान से वह गुदगुदा रही थी । बच्चा ने अब तक कमरो की बद खिडकिया खोल ली थीं । अब स्वच्छ खुली हवा पहले की तरह आने लगी थी । और हम सब, अब 'महाभारत' बिना किसी दबाव के सहज वातावरण मे देखने लगे थे ।



एक सैनिक की संवेदना

राधेश्याम अटल

रणधीर गुर्जर एक माह की छुट्टी लेकर अपने गाँव 'भाडोती' आया है। रणधीर बी एस एफ का एक जवान है। जब भी वह गाँव आता है उसकी माँ की खुशियो का कोई ठिकाना नहीं रहता। रोज अपनी बहू से (बेटे के लिये) कभी खीर, कभी लड्डू-बाटी और कभी हलुआ बनवाती ही रहती है। रोटी मे घी की मात्रा का कोई ठिकाना नहीं रहता और सुबह-शाम लोटा भर दूध रणधीर को जबदस्ती पीना पडता है। रणधीर का उसकी माँ धूप म नहीं निकलन देती और न रात को देर से घर आने की इजाजत दती है।

रणधीर अपनी माँ से मजाक मे कह भी देता है- "माँ। तुम्ह तो एक सैनिक अधिकारी होना चाहिए था। जितनी पाबन्दिया मुझ पर तुम्हारी हैं, उतनी तो मेरे अफसर की भी नहीं होती।" हँसती-मुस्कराती माँ भी कहने स नहीं चूकती - "बेटे। मुझे तुम जैस बेटे की माँ बनन का ओहदा मिला है और एक माँ से बडा कोई सैनिक अधिकारी हो ही नही सकता। अब जाओ सो जाओ।" बहू को आदेशात्मक स्वर मे कहती हे "बहू, ध्यान रखना। यह रात को कभी दारू-वारू न पी ले।" रणधीर हँसता हुआ माँ के हाथ जोडता है और अपन खपरेली घर म सान चला जाता हे।

शाम को रणधीर अपने बचपन के मित्रो के साथ खेतो पर घूमने निकल जाता है और अपने सैनिक जीवन से जुडे अनुभव और किस्से सुनाता रहता है। एक दिन उससे मित्रा न पूछ लिया था- "क्या रणधीर। क्या कभी तुम्हे (सीमा पर तैनात रहते हुए) अपनी पत्नी की याद नहीं आती ?" रणधीर के उत्तर न सबको आश्चयचकित कर दिया था। रणधीर बोला, "अरे पागल। माँ की गोद म भी कभी वासना क फूल खिलत हैं। हाँ, एक बार का वाकया है कि दीपावली पर मैं सीमा पर तैनात था। खाने-पीन आदि की हम कभी कोई असुविधा सामान्य तौर पर नहीं होती। दीपावली हमारी बडे आनन्द एव उल्लास मे

दीपावली के बाद सीमा से कोई 10-12 किलोमीटर दूर कस्बे से मुझे कुछ सामान खरीदने भेजा गया था । मैं अपनी जीप मे सवार होकर कस्बे के लिये रवाना हो गया । ज्योही मैंने कस्बे मे प्रवेश किया कि एक मकान के अहाते मे एक लडकी अपने भाई का ललाट तिलक से सजा रही थी । शायद, उस दिन भाई दूज थी । मेरे पैरो ने अपने-आप ब्रेक लगा दिये और करीब पाँच मिनट तक मैं उन दोनो भाई-बहिनो को देखता रहा। मेरी आँखो मे भी कल्याणी (बहिन) का चित्र उभर आया । मुझे याद आ रहा था एक वो दिन, जब कल्याणी ने "भाई दूज" का तिलक मेरे मस्तक पर लगाने के बाद मेरे मुह मे "पडा" दिया था और मैंने उसकी अगुली अपने दाँतो के गिरफ्त मे ले ली थी । मैं सोच रहा था जीप मे बैठे-बैठे कि आज कल्याणी ने भी मेरी प्रतीक्षा जरूर की होगी । मैंने उन क्षणो मे अपनी भावनाओ पर नियत्रण किया और कस्बे के छोटे से बाजार मे प्रवेश कर गया । सच बात तो यह है दोस्त, कि एक सैनिक के जीवन मे हर क्षण उसकी परीक्षा के क्षण होते हैं । एक सैनिक अपनी भावनाओ के समुद्र पर अपने दृढ इरादो का जहाज चलाता है और उसे अपने लक्ष्य पर हजार मुसीबतो का सामना करते हुए भी पहुँचना होता है । यही सैनिक का परम कर्त्तव्य होता है ।"

रणधीर का यह वक्तव्य उसके मित्र बत्तीलाल की समझ मे नहीं आया। बत्तीलाल ने रणधीर से पूछा- "क्यो रणधीर, क्या तुम्हारा मस्तक उस दिन सूना ही रहा ?"

रणधीर ने सहज होते हुए कहा- "मैं जानता था कि तुम यह बात जरूर जानना चाहोगे । जब मैं बाजार से सामान क्रय करके वापिस अपनी चौकी के लिए जा रहा था, तो वही लडकी (जिसका जिक्र ऊपर किया है) अपने घर के सामने रास्ते के बीचो-बीच खडी थी । मैंने जीप का हॉर्न बजाया, लेकिन वो टस से मस नहीं हुई । जीप स उतर कर उसके करीब पहुँचते हुए मैंने कहा- "हो सकता हैआप बहरी हो, लेकिन अधी तो आप बिल्कुल नहीं हैं । जीप के हॉर्न की आवाज न भी सुनी हो, लेकिन जीप आपको दिखाई जरूर दे रही होगी । अब आप कृपा करके रास्ता छोड दीजिये, ताकि मैं अपनी मजिल तय कर सकू ।"

अपनी बात को जारी रखते हुए रणधीर ने कहा "वह लडकी क्या थी । एक उलझी हुई पहेली-सी नजर आई । न रास्ते से हट रही थी और न मेरी बात का कोई जवाब ही दे रही थी । बस खडी-खडी मुझे अपलक देखे जा रही थी । उसके चेहरे पर अनेक भाव आ-जा रहे थे। ऐसे लग रही थी जैसे वो मुझे पी रही हो अथवा वो मेरी गहराइयो मे उतरती जा रही हो । मैं ने उसकी ध्यानावस्था को भग करने के लिये थोडी तेज आवाज मे कहा-

"लडकी।" तुम्हे आश्चर्य होगा यह जानकर कि मेरी उस कडक आवाज से वह चौंकी नहीं, अपितु बडे सहज भाव से उसने कहा, "क्या आप मेरे लिय एक कष्ट कर सकेगे?" मेरी समझ मे कुछ नहीं आ रहा था। मैं बार-बार सोच रहा था, कहीं यह लडकी अर्द्धविक्षिप्त तो नहीं है? किन्तु उसके रहन-सहन और इस एक वाक्य के बोल देने से मेरा यह विचार भी धराशायी हो गया।"

"अब मुझे उसके पूछे गए प्रश्न का उत्तर देना था, इसलिये मैंने कहा, अगर तुम यह सोचती हो कि मैं तुम्हारा कोई काम कर सकता हूँ तो निस्सन्देह तुम्हे यकीन भी करना चाहिये।"

"उसने कहा, बस! इतनी-सी कृपा कर दीजिये कि सामने जो घर है, वहाँ तक चलने का मेरा आग्रह स्वीकार कर लीजिये।"

"मुझे नहीं मालूम कि मैंने उसके इस आग्रह को स्वीकार क्यो कर लिया? सच बात तो यह है कि मुझे यह भी मालूम नहीं था कि यह उस लडकी का आग्रह था, आदेश था या यह क्या था, कि मैं चुपचाप उसके पीछे हो लिया। इस पूरे घटनाक्रम को उस मकान के अहाते मे खडे एक वृद्ध पुरुष और एक वृद्धा बडे ध्यान से देख रहे थे। सम्भवतया वो इस लडकी के माता-पिता ही होगे। मैंने यही सोचा था। वेशभूषा से वो पढे-लिखे और सम्भ्रात लग रहे थे। उनके पास मे खडा था एक वही छोटा लडका, जिसके माथे पर इस लडकी को तिलक सजाते हुए मैंने देखा था और आज जिसका परिणाम, सीमा-चौकी पर अधिकारी की डाट खाना निश्चित रूप से तय था। उम्र के हिसाब से लग रहा था कि वह बालक, उस लडकी का निश्चित रूप से भतीजा रहा होगा।"

घर पहुँचने मे कोई एक-डेढ मिनट लगा होगा। उन वृद्ध पुरुष और वृद्धा का मैं हाथ जोड पाता कि इससे पहले ही वो मेरा अभिवादन कर चुके थे। औपचारिकतावश मैंने भी उन्हे प्रणाम किया। उन्होने मुझे बैठने के लिये एक कुर्सी दी और पूछने लगे मुझसे मेरा नाम, गाँव आदि के बारे मे।"

"बीच मे ही तुनक गई वो लडकी। डैडी, आपकी यह आदत बहुत खराब है। अरे, आये हुए किसी आगन्तुक को कोइ जल नही, जलपान नहीं कि लेने लगे इन्टरव्यू।"

"दोनो स्त्री-पुरुष उस लडकी की बात पर मुस्करा दिये और वो लडकी अन्दर दौडती हुई-सी चली गई। वह तुरन्त, एक हाथ मे पानी का गिलास और दूसरे मे "जग" लिये चली आई। प्रथम बार उस लडकी ने कुछ मुस्कराते हुए मुझसे पानी पीने का आग्रह किया था। मैंने झट से पानी का गिलास उसके हाथ से लिया और पी गया एक ही सास मे। मैं सोच रहा था कि अब जाने की अनुमति ले लेनी चाहिये। मैं यह कहने ही वाला था कि अब

इजाजत दीजिये कि इतने मे तो वह लडकी एक सजा हुआ थाल लेकर मेरे सामने आ खडी हुई ।"

"उस लडकी ने बडे विनम्र भाव से कहा, "भैया ! यदि आप इजाजत दे, तो मैं आपके माथे पर तिलक सजा दूँ । आपको भी शायद ध्यान तो होगा ही कि आज भाई-दूज है और एक भाई का मस्तक आज भी सूना रह जाए, और वह भी मेरे देखने के बाद असम्भव है भैया, असम्भव ।"

तब रणधीर ने अपने मित्र बत्तीलाल से कहा, "जानते हो, तब मैंने क्या कहा होगा? सच बात तो यह है कि उस वक्त मुझे 'कल्याणी' की बहुत याद आई । किन्तु जो मेरे सामने खडी थी, वह भी तो कल्याणी ही थी । मुझे उस लडकी के चेहरे मे 'कल्याणी' ही दिखाई देने लगी और मैंने उसके प्रश्न का उत्तर बिना सोचे समझे तुरन्त दे डाला । अरे, यह भी कोई पूछने की बात है । जब तुमने मुझे भैया कह ही दिया तब तिलक करना तो तुम्हारा अधिकार है । और एक सैनिक, किसी को भी अपने अधिकारो से वचित करने की बात सोच ही नहीं सकता, फिर एक बहिन के अधिकारो की रक्षा करने से बडा और कोई पावन कर्त्तव्य हो भी क्या सकता है ?"

"मैं अपनी बात पूरी कह भी नहीं पाया था, तब तक मेरे मस्तक पर तिलक और अक्षत अपना स्थान पा चुके थे । मैं मन ही मन सोच रहा था कि इस तिलक का भार (कर्त्तव्य) जीवन भर उठा भी पाऊँगा या नहीं । तुम तो जानते हो बत्तीलाल, कि एक सैनिक का जीवन क्या होता है । हम इस मातृभूमि से बडा और कोई महती कर्त्तव्य कभी समझ मे ही नहीं आता । कई बार तो ऐसे भी अवसर आते हैं कि अपने कर्त्तव्यो के निर्वहन मे हम अपने घर परिवार की भी सुध लेना भूल जाते हैं ।"

"सहसा मुझे अपने विचारो की उलझन से उसी बहिन ने जगाया । अरे! आप सैनक हैं या कोई दार्शनिक । लो, मुँह खोलो अपना । लेकिन, मिठाई के साथ मेरी ऊँगली मत काट खाना । और हँसते-मुस्कराते उसने मेरा मुँह मिठाई से भर दिया । बडी मुश्किल से मैंने मिठाई अन्दर सटका । मैंने बहिन को तिलक की दक्षिणा देने के लिये ज्योही अपनी जेब मे हाथ डाला, मुझे उसकी बडी-बडी निश्छल आँखो मे आँसू तैरते नजर आये ।"

"मैंने उसके आँसू पौंछते हुए पूछा क्या बात है बहिन, तुम्हारी आँखो मे ये आँसू क्यो ? तुम्हारी इन बडी-बडी, निर्मल आँखो मे आसुओ का नहीं स्वप्नो का स्थान होना चाहिए ? फिर एक सैनिक की बहिन को रोना शोभा नहीं देता । अगर कोई कारण है तो मुझे बताओ बहिन ? यह तुम्हारा भाई, इन आँसुओ को मुस्कराते फूलो मे बदल देने की कसम खाता "

''उस लडकी ने धीरे-धीरे स्वय को समाला । दोनो वृद्ध स्त्री-पुरुष भी ऐसे लग रहे थे, जैसे अभी-अभी रो पडेगे । उस लडकी ने सहज होते हुए कहा, मेरा नाम माधवी है और ये मेरे माता-पिता हैं । वह छोटा-सा लडका ''रवि'' मेरा भतीजा है, और इस घर की एक और सदस्या है मेरी विधवा भाभी, जो अन्दर है । मेरे भी एक ठीक तुम जैसा जवान भाई था, ''शुभकर शर्मा ।'' वह भी बी एस एफ का जवान था, किन्तु आज से करीब ढाई वर्ष पहले ''छम सैक्टर'' मे घुसपैठियो के साथ मुठभड म शहीद हो गया था । उसकी ही याद मे मेरी आँखो से जब चाहे तब आँसू बरस पडते हैं । जब तिलक की दक्षिणा देने के इरादे से तुमने अपनी जेब मे हाथ डाला था, उस समय मुझे ऐसा लगा कि मेरे तिलक का मान शायद कोई भाई रख पाएगा क्योकि इस दुनिया मे हर वस्तु का मूल्याकन अर्थ से ही होता है । और मेरी आँखो से आँसू चू पडे ।''

''बत्तीलाल । उस समय मुझे ऐसा लग रहा था, जैसे मैं उस लडकी के सामने बौना हूँ । फिर भी मैंने साहस बटोर कर कहा, माधवी । मैं यह तो नहीं कह सकता कि मैं तुम्हारे शहीद हुए भाई के रिक्त स्थान को भर दूँगा, किन्तु मैं वायदा करता हूँ कि तुम्हे एक भाई का अभाव खलने नहीं दूँगा ।''

मैंने जिस उद्देश्य से अपनी जेब में हाथ डाला था, यह सत्य है कि मैं तुम्हे उपहार के लिये ''कुछ'' देना चाहता था । मैं चाहता था कि इस तिलक की जिम्मेदारी का थोडा- सा अहसान, भेट के रूप मे मुद्रा से कुछ तो चुका चलूँ । अब तुम ही बताओ माधवी । तुम्हारे लिये उपहार क्या लाऊँ ? यह तो नहीं हो सकता है न कि मैं इस तिलक का सम्मान भी न करूँ ।''

माधवी ने मुस्कराते हुए कहा, भैया । तुम से बडा उपहार एक बहिन के लिये और क्या हो सकता है । फिर भी यदि आप, मुझे उपहार देना ही चाहते हैं, तो वायदा कीजिये कि मैं जो मागूँगी, वह दोगे भी ।''

''मैंने भावुकता म उसके सिर पर हाथ रखकर उसे उपहार देने का वायदा किया कि तुम जो मागोगी, वही लाकर दूँगा । यह एक सैनिक का वचन है ।''

''माधवी मात्र एक लडकी ही नहीं है बत्तीलाल । वह इस भारत माता की असली सन्तान होने का जीता-जागता नमूना है । गर्व है इस धरती का । जानते हो, उसने मुझसे क्या उपहार माँगा था ? वह अपने पिता की इकलौती सतान थी और वह भी लडकी । किन्तु उसके हौसले को देखकर, मैं भी एक बार तो दाँतो तले अगुली दबा गया ।''

''उसने मागा था मुझसे ''महिला सुरक्षा बल'' का नियुक्ति पत्र । मैंने बहुत समझाया था उसे किन्तु उसके तर्कों के आगे मेरी एक न चली । उसका कहना था- मैं अपने भाई के रिक्त स्थान को भरना चाहती हूँ । अपने

शहीद भाई के प्रति मेरी यही सच्ची श्रद्धा होगी। यदि तुमने, मेरी इसमे मदद नहीं की तो समझूगी कि मेरे तिलक का उपहार बहुत भारी पड़ा एक सैनिक को।''

''मैंने मुस्कराते हुए कहा, क्या मेरा नाम जानना नहीं चाहोगी, माधवी ?''
''उसने कहा, रणधीर भैया। तुम्हारा नाम क्या है ?''
''मैं खूब जोर से हँसा और धीरे से कहा, माधवी। मैं यह तो भूल ही गया कि तुम पढ़ी लिखी हो और तुमने मेरा नाम तो अपने आप ही पढ लिया होगा। सॉरी, सिस्टर। और मैं उस दिन तो विदा लेकर अपनी सीमा चौकी पर चला गया। जाते ही मेरे अधिकारी ने पहले तो देर से आने के लिए डाटा और फिर कारण पूछा। मैंने सारा किस्सा उनको भी सुना दिया और साथ ही अपने वचन को निभाने के लिये माधवी को ''महिला रक्षा-बल'' मे भर्ती करवाने के लिये साहब से निवेदन भी किया। हमारे साहब के सहयोग से मैंने करीब एक माह के अन्दर ही माधवी को उपहार दिला दिया।

''अरे आठ बज गये। भैया जल्दी घर पहुँचने दो, वरना बड़े साहब माँ लाइन हाजिर कर देगे जानते हो। माँ आज देर से घर पहुँचने का क्या दण्ड देगी? पहले तो भर पेट भोजन कराएगी और फिर कहेगी- आज तुझे दण्ड का एक लोटा दूध अतिरिक्त पीना होगा। सच मे बत्तीलाल। माँ से महान, भगवान भी नहीं होता।''



मैं अकेला नहीं हूँ

श्याम सुन्दर भारती

रात चार बजे अलार्म बजा टननन --। अलार्म बजते ही बच्चूलाल उठ बैठे हैं, मशीन की तरह खटाक । आँखे अभी पूरी खुली नहीं हैं । कमरे मे जीरो पावर का बल्ब जल नहीं रहा है । बच्चूलाल ने पाँवो को खाट से नीचे लटकाया और पजो से इधर-उधर टटोलते हुए चप्पले ढूढ रहे हैं । चप्पले जो हैं वो पाँवो मे आ गई हैं । बच्चूलाल जो हैं वो उठ खडे हुए और चोर पाँवो से दीवार की ओर बढ रहे हैं। अभ्यस्त हाथ जो है वो सीधा दीवार, दीवार से बोर्ड, बोर्ड से स्विच पर गया है ।

बच्चूलाल रोशनी मे नहा रहे हैं । रामलीला के हनुमान सरीखी देह । जिस पर चैक की ढीली चड्डी, घुटनो तक । बाकी नगे बदन, यू ही सोने की आदत है । बच्चूलाल की घर मे यही ड्रेस रहती है । अधिक हुआ तो बनियान डाल लिया गले मे, वर्ना घर मे कौन तो देखता है । और यू पूरा मुहल्ला अपना घर सरीखा ही है ।

तभी साऊँ-साऊँ की आवाज बाहर चौक की ओर से आने लगी । बच्चूलाल को पता है कि यह नल की आवाज है । वे कमरे की लाइट ऑफ करके लपक कर चौक मे आ गये । बीच मे साल के खभे पर हाथ मार कर चौक का लट्टू जलाते आये हैं और नल के करीब आकर खडे हो गये । बाल्टी नल के नीचे रात ही रख दी थी ताकि जब उठ कर आये तब तक दो-चार डोले पानी हाथ आये, वही किसने देखा ।

बाल्टी अभी काफी खाली है । तब तक वे परींडे तक जाकर कलश उठा लाये हैं । बाल्टी अभी भी खाली है । नल जो है वो धीमी गति से चल रहा है। बच्चूलाल पानी की धार यू देख रहे हैं जैसे भिखारी दाता की ओर देखता है । बाल्टी अब तक नहीं भरी है । धार पड रही है तडड-----तडड ।

शहीद भाई के प्रति मेरी यही सच्ची श्रद्धा होगी। यदि
नहीं की तो समझूंगी कि मेरे तिलक का उपहार बहुत
को।"

"मैंने मुस्कराते हुए कहा, क्या मेरा नाम जानना न

"उसने कहा, रणधीर भैया! तुम्हारा नाम

"मैं खूब जोर से हँसा और धीरे से कहा, मा
ही गया कि तुम पढ़ी लिखी हो और तुमने मेरा नाम
लिया होगा। सॉरी, सिस्टर! और मैं उस दिन तो विदा ले
घर चला गया। आते ही मेरे अधिकारी ने पहले तो देर
और फिर कारण पूछा। मैंने सारा किस्सा उनको भी
अपने वचन को निभाने के लिये माधवी को "महिल
कराने के लिये साहब से निवेदन भी किया। हमारे
मैंने करीब एक माह के अन्दर ही माधवी को उपहार

"अरे आठ बज गये। भैया जल्दी घर पहुँच
माँ लाइन हाजिर कर देंगी जानते हो। माँ आज देर
डाँट देंगी? पहले तो भर पेट भोजन कराएगी और फिर
का एक लोटा दूध अनिवार्य पीना होगा। सच में
पलायन भी नहीं होगा।"



बच्चे हैं ढीठ, जो सुन कर भी अनसुनी कर गये हैं । बच्चूलाल तुड्डी घिसते-घिसते ही बाहर लपके हैं और अखबार लाकर घुटने के नीचे लपेट कर रख दिया है और वापस तुड्डी घिसने लगे हैं ।

आठ बजते-बजते तीन चार बच्चे आ गये हैं बस्ते लटकाये हुए ट्यूशन के लिये । यू बच्चूलाल बाबू हैं, लेकिन प्राइमरी तक के बच्चो की ट्यूशन भी करते हैं। तीस-चालीस रुपये पर स्टूडेंट मिलते हैं । बच्चूलाल बच्चो को पढाने मे जुट गये हैं । थोडा कल का दिया काम चैक किया है थोडा काम आज के लिये दिया है । अंग्रेजी और गणित की कापी मे 'बच्चा कमजोर है, घर पर काम करवाइये' का नोट लगाया और दो-चार सीधे-सीधे गणित के सवाल करवाने के बाद बच्चो को छोड दिया है ।

इस समय बच्चूलाल अखबार मे गोता लगा कर डी ए की किस्त बढने का समाचार ढूढ रहे हैं । तभी उनकी पत्नी वार्निंग बेल की तरह बजी है- "अजी घंटे भर से बैठे-बैठे क्या सुस्ती फैला रहे हो । उठ कर फटाफट नहाते क्यों नहीं । और सुनो अपने साथ गबलू को भी नहला कर तैयार कर देना । उसकी और कुन्नी की स्कूल यूनीफोर्म लोहे वाली अलमारी मे रखी है । प्रेस करके पहना देना और इनका होमवर्क भी चैक कर लेना । टागा अभी आ जायेगा ।"

घडी के काटे नौ पैंतालीस की रेखा पार कर चुके हैं । जिस दिन पौने दस घर पर ही हो जाते, उस दिन घर से दफ्तर तक साइकिल रेस लगानी पडती बच्चूलाल को, और अक्सर ऐसा ही होता, जैसा कि आज हुआ है । बच्चूलाल बडे-बडे कौर निगलते हुए उठे हैं और रूम मे आकर पैंट टागो मे फसा बुशर्ट गले म डाल, पावा क पजो को जूतो मे खोस, बैग उठाते हुए रसोई की ओर लपके हैं लच बाक्स लेने के लिये ।

"अच्छा चलता हूँ ।" कहते हुए बच्चूलाल ने बैग हैंडिल मे लटकाया है और कपडा मार कर साइकिल साफ कर रहे हैं । पत्नी बोली- "गबलू-कुन्नी का स्कूल टागा अभी तक नहीं आया है और अब क्या भरोसा आये या नहीं भी आये। ऑफिस जाते हुए इनको भी स्कूल छोडते जाओ ।"

गबलू साइकिल के आगे डडे पर और कुन्नी पिछली सीट पर बैठ गई है। बच्चूलाल की पत्नी बच्चो के बस्ते हैंडिल मे टागती हुई याद दिला रही है- "शाम को सब्जी लेते आना, थैला बैग मे रख दिया है ।" इतने मे सामने वाले चौहान भी अपने पप्पू और लल्ली को गोद मे उठाये हुए आ गये हैं ।"भाई बच्चूलाल, अब तुम जा ही रहे हो तो इनको भी छोडते जाना, मेरा रूट थोडा ऑफ पड जाता है ।"

साइकिल रेस मे स्टार्ट का सकेत मिलने ही बच्चूलाल ने सीट से ऊपर उठते हुए पहला पैडल मारा है । पैडल मारते ही सामने अच्छे शगुन देख कर

खडबडाहट सुन कर बच्चूलाल की पत्नी जाग गई है । वह बच्चूलाल के करीब आकर खडी हो गई है और एक-डेढ मीटर लम्बी उबासी पति के मुह पर फेक कर तडक रही है- "इस धार मे तो भर चुके पानी । शाम तक एक बाल्टी भर जाए तब भी गनीमत समझो । इतना प्रैसर कहाँ जो ऊपर तक पानी चढे पानी तो लोगो ने मोटरे लगा रखी हैं सो सारा वहाँ जाता है । और तुम हो कि हजार-नौ सौ रुपल्ला के पीछे खैर अब तुम नल को बन्द करो और नीचे की टी खोल कर पानी भरो फटाफट ।"

टी हालाकि मेन लाइन से काफी नजदीक लगी हुई है और अन्दर लगे नल की अपेक्षा इसका लेवल भी काफी नीचे है, लेकिन उम्मीद लायक प्रैसर यहाँ भी नहीं है । बच्चूलाल टी के नीचे बाल्टी लगा कर उकडू बैठे हैं । पास ही खाली कलश पडा है जिसे वे तबले की तरह बजा रहे हैं और होठो के भीतर-भीतर गुनगुना रहे हैं- "मैं माखन नहीं खायो मोरी मैया, मैं माखन नहीं खायो रे ।"

सडक की उस ओर सामने वाले चौहान भी टी खोलकर पानी भर रहे हैं। गुनगुनाहट की भनक उनके कानो मे पड गई है । वे तुरत तुक भिड़ाते हैं- "भोर भये पानी के पाछे नल पर मोही पठायो रे ।"

बच्चूलाल की राफे कानो तक फैल गई हैं खीं खीं खीं खीं ।

"और भाई बच्चूलाल ।" चौहान ने दूसरी तुर्रा छोड दी है- "जुते हुए हो प्यारे अच्छा है अच्छा है सुबह-सुबह ऑटोमेटिकली कसरत हो जाती है हेल्थ इज वेल्थ ।"

सुनकर बच्चूलाल हिनहिनी हँसी हँसते हैं- ही ही ही ही ।

सुबह के साढे सात बज चुके हैं । घडी टिक-टिक बोलती जा रही है । बच्चूलाल पानी भरो अभियान से निपट चुके हैं और ताबे के लोटे मे रखा रात का पानी पीने के बाद तोद हिलाते हुए चौक मे घूम रहे हैं प्रैसर बनाने के लिये ।

"बच्चे जाग गये हैं ।" यह पत्नी की आवाज है, जिसे सुनते ही वे कमरे की ओर लपके हैं और एक काधे पर मोटी कुन्नी और दूसरे पर गबलू को उठा कर बाहर लाये हैं और दोनो को नाली पर ले गये हैं । कुन्नी बाथरूम की ओर चली गई है । बच्चूलाल गबलू की निकर उतार कर उसे शु-शु करवा रहे हैं ।

बच्चे रसोई मे माँ के पास बैठे दूध पी रहे हैं । बच्चूलाल चौक में खट डाल उस पर पालथी मार कर बैठ गये हैं और काच के टुकडे में कर तुड्डी घिस रहे हैं । इसी बीच बाहर से हॉकर की आवाज आई है अखबार ।

बच्चे हैं ढीठ, जो सुन कर भी अनसुनी कर गये हैं । बच्चूलाल ठुड्डी घिसते-घिसते ही बाहर लपके हैं और अखबार लाकर घुटने के नीचे लपेट कर रख दिया है और वापस ठुड्डी घिसने लगे हैं ।

आठ बजते-बजते तीन चार बच्चे आ गये हैं बस्ते लटकाये हुए ट्यूशन के लिये । यू बच्चूलाल बाबू हैं, लेकिन प्राइमरी तक के बच्चों की ट्यूशन भी करते हैं। तीस-चालीस रुपये पर स्टूडेंट मिलते हैं । बच्चूलाल बच्चो को पढाने मे जुट गये हैं । थोडा कल का दिया काम चैक किया है थोडा काम आज के लिये दिया है । अंग्रेजी और गणित की कापी मे 'बच्चा कमजोर है, घर पर काम करवाइये' का नोट लगाया और दो-चार सीधे-सीधे गणित के सवाल करवाने क बाद बच्चो को छोड दिया है ।

इस समय बच्चूलाल अखबार में गोता लगा कर डी ए की किस्त बढने का समाचार ढूढ रहे हैं । तभी उनकी पत्नी वार्निंग बेल की तरह बजी है- "अजी घंटे भर से बैठे-बैठे क्या सुस्ती फैला रहे हो । उठ कर फटाफट नहाने क्यों नहीं । और सुनो अपने साथ गबलू को भी नहला कर तैयार कर देना । उसकी और कुन्नी की स्कूल यूनीफोर्म लोहे वाली अलमारी म रखी है । प्रेस करके पहना देना और इनका होमवर्क भी चैक कर लेना । टागा अभी आ जायेगा ।"

घडी के कांटे नौ पैंतालीस की रेखा पार कर चुके हैं । जिस दिन पौने दस घर पर ही हो जाते, उस दिन घर से दफ्तर तक साइकिल रेस लगानी पडती बच्चूलाल को, और अक्सर ऐसा ही होता जैसा कि आज हुआ है। बच्चूलाल बडे-बडे कौर निगलते हुए उठे हैं और रूम म आकर पैंट टागो म फसा, बुशर्ट गले मे डाल, पाया के पजो को जूतो मे खोस, बैग उठाते हुए रसोई की ओर लपके हैं लच बाक्स लेने क लिये ।

"अच्छा चलता हूँ ।" कहते हुए बच्चूलाल ने बैग हैंडिल मे लटकाया है और कपडा मार कर साइकिल साफ कर रह हैं । पत्नी बोली- "गबलू-कुन्नी का स्कूल टागा अभी तक नहीं आया है, और अब क्या भरोसा आये या नहीं भी आये। ऑफिस जाते हुए इनको भी स्कूल छोडते जाओ ।"

गबलू साइकिल के आगे डडे पर और कुन्नी पिछली सीट पर बैठ गई है। बच्चूलाल की पत्नी बच्चो के बस्त हैंडिल मे टागती हुई याद दिला रही है- "शाम को सब्जी लेत आना थैला बैग मे रख दिया है ।" इतने म सामने वाले चौहान भी अपने पप्पू और लल्ली को गोद मे उठाये हुए आ गये हैं ।"भाई बच्चूलाल, अब तुम जा ही रहे हो तो इनको भी छोडते जाना, मेरा रूट थोडा ऑफ पड जाता है ।"

साइकिल रेस मे स्टार्ट का सकेत मिलन ही बच्चूलाल न सीट से ऊपर उठते हुए पहला पैडल मारा है । पैडल मारते ही सामने अच्छे शगुन देख कर

बच्चूलाल को तसल्ली हुई है । उनको अपनी दादी की कही बात याद आ गई है । घर से बाहर निकलते हुए बायीं ओर गधा और दायीं ओर बिल्ली मिले तो आगे कार्य सिद्ध होवे । आज बच्चूलाल की बायीं ओर एक नहीं, दो नहीं, गधो की पूरी टोली गुजर रही है । बच्चूलाल आश्वस्त हो गये हैं कि चलो, दफ्तर मे आज का दिन तो बेशक अच्छा गुजरेगा ।

बच्चूलाल ऑफिस पहुँचे तब तक दस बज कर पाँच मिनट ऊपर हो चुके हैं आम दिनो दस-पाँच पर साहब अटेंडेस रजिस्टर अदर मगवा लिया करते हैं लेकिन आज नहीं मगवाया है । बच्चूलाल ने ओ ए को 'नमस्कार हुकुम' कहते हुए हाथ जोडे हैं और उसके तुरन्त बाद हीं हीं करते हुए साइन चेप दिये हैं । नित भिडकन पाडे की तरह बेअ बअ करने वाले ओ ए ने भी आज कुछ नहीं कहा है वह केवल मुस्करा दिया है । बच्चूलाल ने आभार माना गधो की टोली का जिनके अच्छे शगुन देने से ही यह हुआ है ।

इस समय अपनी कुर्सी म धसे हैं बच्चूलाल । काम जो है वो अभी नहीं के बराबर है, इसलिये वे अनमने से हो रहे हैं । दो स्थितियो मे बच्चूलाल अनमने हो जाते हैं । एक तब जब कोई काम नहीं होता । दूसरे तब, जब काम बहुत होता है । लेकिन सबसे अधिक बेचैनी तो रविवार के दिन होती है । कोई काम नहीं होने की बेचैनी । शनिवार की शाम से ही वे अपने आगे एक पहाड ना उठता हुआ अनुभव करते । बिना काम का बोझ सबसे अधिक सालता है बच्चूलाल को । पीठ पर बोझ होता है तो पाव ठीक से पडते हैं । बोझ के बिना बच्चूलाल का पीठ पर चींटिया रेगनें लगती हैं । लेकिन जब टेबुल पर दोनो ओर फाइलो की दूमरिया लगी होती हैं, तब भी तेल नहीं दी हुई धुरियोवाली भैंसा गाडी का तरह चरड मरड चरमराने लगते हैं । लेकिन वास्तविकता सभी जानते हैं कि बच्चूलाल को यह चरड मरड ही अच्छी लगती है । बोझ ही इनकी सेहत का राज है काम का बोझ । काम होता है तो फाइल आती है । फाइले आती ह ता उनके साथ उठते-बैठते हैं । दो-चार दफा फैंटीन हो आते हैं और नहीं ता फाइलो के साथ गिरते हैं । गिरते हैं तो उठते हैं । जैसे पाठा (गोबर) उठता है, अपने साथ धूल लेकर ।

बच्चूलाल अपने स्टाफ मे गेद की तरह है कभी कोई खेलता है तो कभी कोई । वे इधर देख कर हीं हीं कर रहे हैं कि उधर से किसी ने फुसकी छोडी है पाचू सुनकर बच्चूलाल खीं खीं कर रहे हैं मानो कहने वाले का समर्थन कर रहे हो । किसी बात क लिये कोई नाराजगी, कोई गिला-शिकवा नहीं है । कुछ यू कि छेडने वाले खुद सोच रहे हैं कि यह आदमी आखिर क्या चीज है । कुछ को तो यह भी साफ नहीं है कि यह साला बच्चूलाल का बच्चा बेवकूफ बनता है या बनाता है और बातो मे तो ऐसा कि कोई भी सवरी गाठ से लेकिन पैसों के मामले में किसी को पुट्ठो पर हाथ नहीं धरने

देता पट्ठा । एकदम सावधान और फाइलो से तो ऐसा चिपकता है कि कुछ लेकर ही छूटता है ।

बच्चूलाल, लेकिन जो है वो अपने आप मे मस्त है । उनका बनाया अपना एक घेरा है । उस घेरे मे अपनी एक दुनिया है । उस दुनिया मे वे अपने जैसे बस एक ही और अपनी समझ मे तोप से कम नहीं है । लोग इन्हे जो मुन्ना और गधा और जो-जो कहते हैं सो इनको पता है लेकिन इनकी बला से । ये मस्त-मग्न हैं और इनको अपने काम से काम है तथा पैसा कमाना ही बस इनका काम है । कभी-कभी तो अपने तई खुद ही तरिया लेते हैं- "हम गधे हैं लेकिन पैसे से लदे हैं ।" आज भी फाइले टेबुल पर आते-आते मूड बन गया है बच्चूलाल का, जो खुश होकर अपनी प्यारी कहावत चपरासी भोपाराम को सुना रहे हैं- "हलुआ खाते दाँत घिसे तो घिसने दे, पैसा कमते लोग हँसे तो हँसने दे- हीं हीं हीं हीं ।"

पाँच बजकर तीस मिनट हो गये हैं । लगभग सभी कर्मचारी जा चुके हैं । चपरासी दरवाज-खिडकिया बन्द करने मे लगा है । बच्चूलाल जो हैं सो धीरे-धीरे उठे हैं अपनी कुर्सी से, वह भी कवल शारीरिक रूप से, मानसिक रूप से तो दफ्तर साथ-साथ उठा है और साथ-साथ ही चल रहा है और बहुत दूर तक चलेगा, चलता रहेगा साइकिल चल रही है । दफ्तर चल रहा है दफ्तर म फाइल चल रही हैं । फाइलो मे बच्चूलाल चल रहे हैं । चलते-चलते यह बाजार आ गया है लेकिन बच्चूलाल को कुछ दिखाई नहीं दे रहा है । मूछा मे चल रहे हैं बच्चूलाल । यह है सेठ धनपतमल कपडे वाले की दुकान । बच्चूलाल सहसा जागे हैं । उन्होने दुकान के बाहर साइकिल खडी की है। दफ्तर को पिछली सीट पर बिठाया है और खुद अन्दर चले गये हैं । दुकान का अकाउण्ट सभालते, शाम दफ्तर के बाद पार्ट टाइम करते हैं बच्चूलाल, दो सौ पर-मथ मिलते हैं वही ठीक ।

आज का काम सलट गया है । बच्चूलाल बाहर आकर साइकिल उठा रहे हैं । दफ्तर को उठाकर सिर पर धर लिया है । साथ काम करने वाले रमाकान्त बाबू दुकान के बाहर खडे मिल गये हैं । उन्होने बच्चूलाल को देख कर कहा है- "घर की ओर ही जा रहे ना ?"

"नहीं, सब्जी मडी होकर जाऊगा ।"

"फिर ठीक है मुझे उधर ही जाना है ।" कहते हुए वे साइकिल की पिछली सीट पर बैठ गये हैं घच्च करते । रमाकान्त बाबू भी बच्चूलाल की पूरी जोड के हैं। एक हनुमान तो दूसरा अगद । बच्चूलाल उचक-उचक कर पैडल मार रहे हैं । सिर पर है दफ्तर का बोझ, पीछे है रमाकान्त बाबू

का बोझ, और खुद का बोझ है सो है ही, बोझ ही बोझ। बोझ ही तो प्रिय है बच्चूलाल को। बोझ न हो तो पीठ पर चींटिया रगने लगती हैं।

मडी पहुँचते-पहुँचते सीना धौंकनी बन गया है बच्चूलाल का। अचानक साइकिल हलकी चलने लगी है। पीछे मुड कर देखा- 'धन्यवाद' कहते हुए रमाकान्त भीड मे खो गये हैं।

सब्जी वाला सब्जी तोल कर थैले मे डालते हुए कह रहा है- "बाबूजी प्याज पर बीस पैसा उतर गया है आलू पर भी दस पैसा, तोल दूँ बीस-तीस किलो?"

"प्याज पर बीस?" बच्चूलाल ने अविश्वास और अचम्भा के बाद इत्मीनान करना चाहा।

"हाँ बाबूजी जी, पूरे बीस।" सब्जीवाले ने कहा। और बच्चूलाल कुछ कहे उससे पहल ही उसने एक कट्टा उठा कर उनकी साइकिल की पिछली सीट पर रख दिया है और एक बडा-सा थैला आगे हैंडल पर लटका दिया है।

बच्चूलाल उचक-उचक कर साइकिल चलाते हुए अपनी गली मे मुड रहे हैं। सामने से गधो की टोली आ रही है। सुबह जाते हुए भी यह टोली आयी थी। अब भी सामने है। एक गधा ऐन उनकी साइकिल के आगे अडकर खडा हो गया है। बच्चूलाल सतुलन खोकर नीचे उतर गये हैं। पीछे बोझ है इसलिये बलैंस बन नहीं रहा है। आगे बोझ है इसलिये हैंडल मुड नहीं रहा है। गधा हट नहीं रहा है। बच्चूलाल आगे बढ नहीं रहे हैं। दोनो आमने-सामने हैं। अजीब स्थिति है।

चौक मे मन्दिर के चबूतरे पर मोहल्ले के शैतान लडके ताश खेल रहे हैं। उनको जो है वो मजा आ गया है। हा हा हो हो ठहाके लग रहे हैं। किसी ने दबे हुए सुर मे छक्का मारा है ' ग ग गधा ' और लडके हँसे हैं - हो हो ही ही। बच्चूलाल भी गधे की इस छेडखानी पर दाँत काढ रहे हैं खीं खीं खीं खीं और उनके मुह से भी निकला है ' गधा रे ढिच ढिच ढिच।' लेकिन गधा जो है वो आज उनसे बराबरी के मूड म है और मुह उठा कर कान हिला रहा है। बच्चूलाल को यू लग रहा है जैसे गधा उनसे कह रहा है- "दोस्त अपन सुबह घर स साथ ही निकले थे। शाम को भी साथ ही घर म घुसेंगे लेकिन देख दयू तुम अभी तक लदे हो?"

तभी बच्चूलाल की नजर नुक्कड पर पड़ी है। उन्होंने देखा सामने वाले शैतान बन्नू यानी शर्माजी इधर यानी माथुर नुक्कड वाले गफ्फार भाई, हरजीत हरप्रीट स्टर व सारे सीट से ऊपर उठे उचक-उचक कर मारते हुए

साईकिल ग्ली म मोड रह हैं ओर सभी की साइकिलो को पिछली मीट प उनसे भी बडे-बडे कट्टे रखे हुए हैं और आगे हैंडल मे उनसे भी बडी-बडी थैलिया लटक रही है। उन सभी की साइकिलो के आगे एक-एक गधा अड कर खडा हो गया है और वे भी सतुलन खो कर नीचे उतर गय हैं।

बच्चूलाल यह दृश्य देख कर अन्दर तक हरे हो गए हैं। गधा अब उनके आगे से हट गया है। वे अपने घर के सामने पहुँच गये हैं। अब साईकिल खडी कर रहे हैं। अब कट्टा उठाकर कधे पर डाल लिया है। एक हाथ मे थैला लटका कर घर की सीढिया चढ रह हैं ओर मन ही मन हँसते हुए बडबडाते जा रहे हैं- "मैं अकेला नहीं हूँ।"



ऋण मुक्त

भोगीलाल पाटीदार

ज्योंही समाचार मिला गाँव म प्रसन्नता छा गई । पटाक छाडे गये, मिठाइयाँ बाँटी गई । गली-कूचा आर चोराहे पर बस एक ही चर्चा । गाँव का उद्धार हो गया । भाग्य का द्वार खुल गया । अब जितना चाहा काम करा लो । जो चाहो वह विकास करा लो । गाँव का तगदीर सुधर गया । बड ही नहीं बच्चे भी अपने आपको तीसमारखाँ मानने लग । वयस्क तो अपने को राष्ट्रीय नेता स कम नहीं समझ रह थे । आह्लाद की लहर चारो ओर फैल गयी । प्रथम स्वागत की तिथि तय हुई और इसी के साथ तैयारी भी प्रारम्भ हो गइ ।

स्थानीय विद्यालय मे भी यही चर्चा । हा भी क्यो नहीं ? इसी विद्यालय का तो विद्यार्थी था वह । विद्यार्थिया का प्रिय । जीवन के अनेक बसन्त इसी विद्यालय मे बिताय थे । उसके कई साथी नोकरी कर रहे थे । कुछ तो अफसर भी बन गये थे । कई गुरुजना का वरदहस्त उस पर था । जो उससे तालमेल नहीं मिला पाते वे कतराते । नये आन वाले अध्यापक उसको मित्र-भाव से देखते या फिर डरते । विद्यालय मे उसके रहत छात्र और गुरुजनो का स्नेह उस पर ही तो था । चाहे वह प्रम से हो या भय से । गाँव के उत्साह की लहर विद्यालय मे भी छा गयी । विद्यालय सफेदी से जगमगा उठा । आम के पत्तो सा हरा हो गया । कागज की रगीन झण्डिया सा लहरान लगा ।

कुछ अध्यापको को छोड सभी के चेहरे पुलकित थे । वैसा ही उल्लास का उन्माद छात्रो मे भी था । कल तक जो इस स्कूल का छात्र रहा वही आज प्रान्त का मन्त्री बन गया था । सचमुच अब वह सिर्फ रतनराम नहीं रहा राज्य के शिक्षा मत्री श्री रतनराम हो चुके थे ।

रतनराम ने एक हो प्रयत्न मे काई कक्षा उत्तीर्ण नहीं की । हर कक्षा का दो वर्ष का अनुभव तो था ही । यह समय भी उसके लिये तो कम था, परन्तु गुरु कृपा से आगे बढ गया ।

मध्यवर्गीय परिवार का एकलौता पुत्र था वह । हर प्रकार की सुविधाएँ उसे उपलब्ध थीं । माता-पिता उसकी प्रत्येक माग की पूर्ति करने मे तत्पर रहते । उसकी बात को वह सत्य मानकर चलते । चाहे वह बिलकुल झूठ भी क्यो न बोलता हो ? जब वह फेल होता तो, उसके पिता कहते- "यह अध्यापकों की ही बदमाशी है । उनसे मेरे लडके की उन्नति सही नहीं जाती । पढाते तो हैं नहीं सारा दिन गप्पें मारते हैं और अखबार पढते हैं । हराम की तनखा खाते हैं ।" इस कारण अनेक शिक्षको को उनका कोप भाजन बनना पडा । कुछ के साथ विवाद भी हुआ । ग्यारहवीं कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते तो रतनराम बागी नेता बन चुका था । अब उसका होसला इतना बढ गया था कि चाहे जिसे स्कूल से किकआउट करा सकता था । हडताल, नारे बाजी और किसी का अपमान करना तो उसके लिये आम बात थी । स्कूल का प्रत्येक छात्र उसकी वाणी का अनुकरण करता था ।

स्कूल के छात्र उसे 'रतन दादा' कहते थे । शिक्षको से विवाद करते रहने से उसके बोलने का साहस बढ गया था । हर किसी को मुँहफट जवाब देता । उसने एक-दो बार तो प्रिन्सीपल साहब से भी अभद्र व्यवहार किया । ऐसे मौके पर प्रिन्सीपल साहब भी असमजस मे पड जाते, लेकिन उनके पास भी कोई उपाय नहीं था । वे जानते थे कि इसी के कारण विद्यालय मे अनुशासन भग हो रहा है । शिक्षको मे भी दो दल बन गये थे । प्रिन्सीपल साहब ने कई बार इस बात को लेकर अपना दिमाग खपाया पर परिणाम कुछ नहीं पा सके ।

बारहवी की बोर्ड परीक्षा तक तो वह और भी स्वच्छन्द हो गया । वह जानता था कि बोर्ड परीक्षा मे शिक्षक उसका कुछ नहीं बिगाड सकते । उसकी इच्छा होती तो कक्षा मे बैठता, नहीं तो अपने मित्रो के साथ बस स्टेण्ड या बाजार मे भाव-ताव करता रहता । हाँ, उसमे एक गुण जरूर था । वह अपने कक्षाध्यापक के प्रति विनम्र था । उनका जो भी काम होता, कर देता । इस कारण उसकी अनुपस्थिति कभी नहीं लगी ।

परीक्षा मे भी वह अपनी हरकत से बाज नहीं आता था । वह नकल तो करता ही था । इस वर्ष भी उसने नकल करने ठान ली थी । जिन शिक्षको के वह मुह लगा हुआ था वे कुछ नहीं बोलते । एक दिन ऐसे अध्यापक की ड्यूटी लगी, जिनसे उसे बेहद चिढ थी । हुआ वही जो उसे डर था । अध्यापकजी ने उसे नकल करते पकड लिया । मामला प्रिन्सीपल साहब के पास पहुँचा । प्रिन्सीपल साहब ने भी डर के मारे केवल समझा कर छोड दिया । लेकिन परीक्षा ने धोखा दे दिया । रतनराम ने अगले वर्ष फिर एडमिशन लिया । इस बार तो परीक्षा मे वह पुस्तक लेकर आया लेकिन पुस्तक मे से ढूढ नहीं पाया । वह एक बार फिर फेल हो गया । अगली बार उसे स्कूल मे एडमिशन नहीं मिला ।

वर्षो से परेशान शिक्षक और प्रिन्सीपल ने राहत की सास ली। प्रिन्सीपल ने तो अपने स्थानान्तरण के लिय प्रयत्न भी किया था परन्तु सफलता नहीं मिली। रतनराम बोलने म वाक्पटु तो था ही साथ म भाषा भी लच्छेदार थी। इससे हर किसी को अपनी ओर सहज आकर्षित कर लेता था। रतनराम ने प्राइवेट परीक्षा दी। परिणाम विपरीत आया पर वह हार मानन वाला नहीं था। फिर से फार्म भरा। इसी समय विधान सभा के चुनावो की घोषणा हो गई। अब वह पच्चीस पार कर चुका था और उसने मतदान तो कई बार किया था। एक बूढ प्रतिद्वन्द्वी की इस क्षेत्र म अच्छी साख थी। इस चुनाव मे बूढे को पुन हारने की आशका थी। अब उसे एक चहेता व्यक्ति मिल गया, और वह था रतनराम। उसन दुश्मन को हराने के लिय अपन प्रयत्न से युवा नाम की टिकिट रतनराम को दिलवा दी। रतनराम चुनाव जीत गया और उसे मन्त्री का पद भी मिल गया।

अपने कमरे मे बैठ प्रिन्सीपल मन्त्रीजी के बारे मे ही सोच रह थे। उनके आन म अभी एक घण्टे की देरी थी। वैसे तो नेता कभी निर्धारित समय पर नहीं आत लेकिन युवा मन्त्री की तो बात कहीं निराली थी। वह तो एक घण्टा पहले ही आ पहुँचे। स्वागत की तैयारी सारी रह गयी । मगल गीत नहीं गा सके । बाजे भी नही बजे । स्वागत द्वार तक कोई गया नहीं। मन्त्रीजी कार स उतर कर सीधे प्रिन्सीपल साहब के ऑफिस म आये और अदब से प्रणाम किया। उनके साथ आया सरकारी लश्कर कमरे के द्वार पर ही रुक गया। प्रिन्सीपल साहब मन्त्रीजी के बारे म ही सोच रह थे। उन्ह अचानक कमरे म आये देखकर कुछ बोल नहीं सके। अपनी कुर्सी से खडे हो गये और पास की कुर्सी पर बैठने के लिये मन्त्रीजी को हाथ से सकेत किया।

रतनराम न कहा- "सर। आपके आशीर्वाद से ही मैं बडा आदमी बन सका हूँ। आज स्कूल मे आकर अत्यन्त हर्ष का अनुभव कर हूँ। मुझे स्कूल का छोडे कुछ वर्ष ही बीते है और मैं मन्त्री हो गया। ऐसा भाग्यशाली दूसरा कौन होगा ? मैं इस विद्यालय का ऋणी हूँ। इसलिये इसके विकास के लिये आप जो कहें करन के लिय तैयार हूँ। चाहे भवन सबधी हो या विषय सबधी। आपकी आज्ञा हो तो स्कूल के मैदान म स्टेडियम बनवा दूँ ? आपके इच्छित स्थान पर आपका ट्रासफर करा दूँ ?

आज रतनराम नहीं मन्त्रीजी रतनराम बोल रहे थे। प्रिन्सीपल रतनराम के धारावाही प्रस्तावो को सुन रह थे। वह जब इस ऑफिस मे शिकायतो के कारण आता था उस समय भी मुँहफट जवाब देता था लेकिन आज उसकी बातो म नम्रता मधुरता सत्यता और शैली म प्रवीणता थी। मन्त्रीजी ने आगे कहा- "मेरे पास शिक्षा मन्त्रालय है। मैं तो आपका कृपा पात्र हूँ। यदि आपने

मुझे विद्यालय म आजादी नहीं दी होती तो मैं कभी किसी के सामने बेधडक बात नहीं कर सकता था । बोलने की कला नहीं सीख सकता था । आज यह मन्त्री पद मिला है वह इसी कला का ही तो परिणाम है ।"

सरकारी अफसर द्वार पर खडे थे । सभी मन्त्री महोदय की तरफ देख रहे थे । मच के सामने, मैदान मे लोगो की भीड उतेजित हो रही थी । जय-जय की आवाज ऑफिस के कमरे से आ रही थी । रतनराम को लोगो की चिन्ता नहीं थी । वह तो ऋण मुक्त होना चाहता था । आज वह अपन प्रिन्सीपल साहब को कुछ न कुछ लाभ दकर ही मच पर जाना चाहता था । अन्त मे धैर्य और हिम्मत करके प्रिन्सीपल बोले- "रतनराम, क्या तुम मैं जो चाहू वह दे पाओगे ?"

रतनराम ने कहा- "सर ! आप एक बार माग कर तो दख । मैं मुँह से निकली बात पूरी करके रहता हूँ । वह आपसे कोई छिपा तो है नहीं ।"

"कहीं बदल तो नहीं जाओगे ?"

"सर । रतनराम एक मुँह से दो बातें नहीं करता । चाहे आपकी व्यक्तिगत बात हो या विद्यालय की । सब मागें पूरी करूँगा ।"

"विद्यालय की आवश्यकता को तुम स्वय देख लेना । मैं तो मेरे स्वय की बात करता हूँ ।" गिजू भाई के लक्ष्मीशकर के समान प्रिन्सीपल/लक्ष्मीकान्त ने कहा- "मेरी एक इच्छा है कि मेरे सिवाय किसी और को मत कहना कि तुम उनका शिष्य था और उनकी कृपा से आज इतना बडा आदमी बना हूँ । बस, यही मेरी माग है ।" प्रिन्सीपल कुर्सी से उठे और बाहर मच पर आ गये ।



मूल निवास स्थान करल गइ हुई है । शास्त्रीजी मुडकर जाने वाले ही थे कि डॉक्टर न उनस आग्रह किया कि इसस पहले वो रात्रि मे कभी किसी के घर नहीं गइ हैं । आज उन्हे नींद भी नहीं आ रही है । यदि शास्त्रीजी डॉक्टर के बगले क पास रहन वाल मिस्टर शर्मा को ल आय तो, वो उनके साथ चल देंगी ।

शास्त्रीजी ने शर्माजी का दरवाजा खटखटाया । उनका छोटा पुत्र बाहर आया । शास्त्राजी ने कहा कि शर्मा साहब सो तो नहीं गये । उनके छोटे पुत्र न सबसे बाहर की बैठक म जहाँ उसका बडा भाई पढ रहा था, शास्त्रीजी को बैठा दिया । अन्दर वाले कमरे म शर्माजी ने अनमोल रत्न सीरियल देखकर, अपना टलीविजन अभी बद किया ही था कि बच्चे ने अन्दर जाकर समाचार दिया । शर्माजी न शास्त्रीजी को अपने पास ही बुला लिया । उन्हान शर्माजी को सारी बात बताई । शर्माजी ओर उनका 17 वर्षीय बडा पुत्र व शास्त्रीजी अब डॉ एलिस क बगले पर पुन आ गय । शर्माजी ने घर से चलने स पूर्व अपने छोटे पुत्र को समझाया जब नींद आय तब बाहर के कमरे के सारे खिडकी-दरवाजे अच्छी तरह बद करके सो जाना मैं डॉक्टर को लकर शास्त्रीजी के साथ जा रहा हूँ, वापस आने म पाँच-छह घण्टे लग सकते हैं ।

डॉ एलिस अपना डाक्टरी बैग व कार लिये तैयार खडी थीं । कार द्वारा दो मिनट बाद ही उन सबने शास्त्रीजी के मकान मे प्रवेश किया । वहाँ कुछ महिलाये जच्चा की कोठरी के बाहर व एक-दो जच्चा की कोठरी क अन्दर थीं । डॉक्टर और वह भी अग्रेज डॉक्टर को देखकर सभी को आश्चर्य व प्रसन्नता हुई । डॉक्टर न खाट पर लेटी हुई मेहनती महिला को दखा तथा अन्य महिलाओ को आवश्यक निर्देश दिये। बच्चे के जन्म मे अभी दो-तीन घटे की दर थी । अत डॉक्टर के लिये आगन मे कुर्सी लगा दी गई शास्त्रीजी व शर्माजी ने भी अपने आसन ग्रहण किये । शर्माजी ने अपने पुत्र व एक वृद्ध व्यक्ति को कार मे ही सो जाने का निर्देश दिया । शास्त्रीजी के शेष तीनो पुत्र व पुत्री अपने पडोसी क घर आराम से सो रहे थे ।

आजादी के तीन वष बाद डॉक्टर के माता-पिता दोनो लन्दन चल गये थे । वहाँ कुछ समय बाद उनकी माता की मृत्यु हो गई तथा एक वर्ष बाद उनक पिता भी चल बसे । उनका बीस वर्षीय भाई भी उन्ह छोड कर दो वष पूर्व लन्दन चला गया । अब अविवाहित व समाज सेवी डॉक्टर अकेली इस बगले म रह रही थीं । इस तरह की अग्रेजो बस्तियाँ आपको उन सभी स्थानो पर मिल जायगी जहाँ रेल्वे के बड जक्शन या अग्रेजी सेना की छावनियाँ थीं । डॉ एलिस वर्ष या दो वष म एक माह के लिये लन्दन अवश्य जाती थीं ।

डॉ. एलिस, आप लन्दन मत जाओ

दशरथ कुमार शर्मा

नगर के बाहरी मोहल्ले मे रहने वाले 49 वर्षीय शास्त्रीजी, राजपथ पर बसे उसी मोहल्ले के बिल्कुल किनारे व एकांत में बने, प्रसिद्ध अंग्रेज महिला चिकित्सक, डॉ एलिस के बंगले के दरवाजे पर खड़े थे। रात के साढ़े नौ बजे हैं। उन्हें घंटी नहीं बजानी पड़ी डॉक्टर के अंग्रेजी डॉग ने उन्हे देखकर, धीरे से भौंकना शुरू कर दिया इसी आवाज को सुनकर डॉक्टर दरवाजे पर आ गई उनकी नौकरानी उनके साथ थी। शास्त्रीजी डॉक्टर के बंगले के कोने मे बने क्वार्टर में रह रही डॉ एलिस की नर्स को लेने आये थे।

उनकी पत्नी जो पूर्व मे उनको तीन पुत्र रत्न व एक पुत्री दे चुकी है। पाँचवी बार प्रसव पीड़ा मे है। शास्त्रीजी राजकीय सेवा में हैं। उनकी यह संतान नर्सिंग होम में या अस्पताल में जन्म ले ये उनकी व उनकी पत्नी दोनों की ही इच्छा नहीं थी। सारी बातें सामान्य थीं बीच-बीच में, शास्त्रीजी की पत्नी ने अपने आपको अस्पताल मे दिखा दिया था तथा सभी आवश्यक टीके लगवा लिये थे। फिर शास्त्रीजी भी खाना बनाने तथा घर का सभी कार्य करने में दक्ष थे इस कारण उन्होंने अपने कार्यालय से प्रसूता की सेवा के लिये पन्द्रह दिन का अवकाश ले लिया था।

इस बार जच्चा की देखभाल के लिये शास्त्रीजी के गाँव में उनकी माताजी व बहन कोई भी नहीं आ पाई थीं। शास्त्रीजी परिश्रमी व व्यवहार कुशल थे व प्रत्येक के सुख-दुख मे काम आने वाले थे। इस कारण मोहल्ले में उनका सामाजिक सम्मान भी अच्छा था। जच्चा व बच्चे के लिये सभी आवश्यक सुविधाओं का प्रबन्ध शास्त्रीजी ने व उनकी पत्नी ने गोपनीयता रखते हुए कर लिया था चाहे वह जच्चा के लिये अजवायन के लड्डू व असली घी हो या बच्चे के लिये वस्त्र इत्यादि। अंग्रेज सैनिक अधिकारी की पुत्री लन्दन से डॉक्टरी पास 48 वर्षीय डॉ एलिस ने कहा- मेरी नर्स दो माह का अवकाश लेकर अपने

मूल निवास स्थान करल गइ हुई है । शास्त्रीजी मुडकर जाने वाले ही थे कि डॉक्टर न उनसे आग्रह किया कि इसस पहले वो रात्रि म कभी किसी क घर नहीं गइ हैं । आज उन्ह नींद भी नहीं आ रही है । यदि शास्त्रीजी डॉक्टर के बगले क पास रहने वाले मिस्टर शर्मा को ले आय तो, वो उनक साथ चल देंगी ।

शास्त्रीजी ने शर्माजी का दरवाजा खटखटाया । उनका छोटा पुत्र बाहर आया । शास्त्रीजी न कहा कि शर्मा साहब सो तो नहीं गये । उनक छोटे पुत्र न सबसे बाहर की बेठक म जहाँ उसका बडा भाइ पढ रहा था, शास्त्रीजी को बैठा दिया । अन्दर वाले कमरे म शर्माजी न अनमाल रत्न सीरियल दखकर अपना टेलीविजन अभी बद किया ही था कि बच्चे ने अन्दर जाकर समाचार दिया । शमाजी न शास्त्रीजी का अपन पास ही बुला लिया । उन्होन शमाजी को सारी बात बताई । शर्माजी और उनका 17 वर्षीय बडा पुत्र व शास्त्रीजी अब डॉ एलिस क बगले पर पुन आ गये । शमाजी ने घर स चलन से पूर्व अपने छोटे पुत्र को समझाया, जब नींद आये तब बाहर क कमर के सारे खिडकी-दरवाज अच्छी तरह बद करके सो जाना, मैं डॉक्टर को लेकर शास्त्रीजी क साथ जा रहा हूँ, वापस आने मे पाँच-छह घण्टे लग सकते हैं ।

डॉ एलिस अपना डाक्टरी बेग व कार लिय तेयार खडी थीं । कार द्वारा दो मिनट बाद ही उन सबने शास्त्रीजी के मकान मे प्रवेश किया । वहाँ कुछ महिलाय जच्चा को काठरी के बाहर व एक-दो जच्चा की कोठरी के अन्दर थीं । डॉक्टर और वह भी अग्रेज डॉक्टर को देखकर सभी को आश्चर्य व प्रसन्नता हुई । डॉक्टर ने खाट पर लेटी हुई मेहनती महिला को दखा तथा अन्य महिलाओ को आवश्यक निर्देश दिये। बच्चे के जन्म मे अभी दा-तीन घट की देर थी । अत डॉक्टर के लिय आगन म कुर्सी लगा दी गई शास्त्रीजी व शमाजी ने भी अपने आसन ग्रहण किय । शर्माजी ने अपने पुत्र व एक वृद्ध व्यक्ति को कार मे ही सो जाने का निर्देश दिया । शास्त्रीजी क शेप तीना पुत्र व पुत्री अपने पडोसी क घर आराम से सो रह थे ।

आजादी के तीन वर्ष बाद डॉक्टर के माता-पिता दोना लन्दन चल गये थे । वहाँ कुछ समय बाद उनकी माता की मृत्यु हो गई तथा एक वर्ष बाद उनके पिता भी चल बसे । उनका बीस वर्षीय भाइ भी उन्ह छाड कर दो वर्ष पूव लन्दन चला गया । अब अविवाहित व समाज सेवी डॉक्टर अकेली इस बगले मे रह रही थीं । इस तरह की अग्रेजी बस्तियाँ आपका उन सभी स्थाना पर मिल जायेगी जहाँ रेल्वे के बडे जक्शन या अग्रजी सेना की छावनियाँ थीं । डॉ एलिस वर्ष या दो वर्ष म एक माह के लिय लन्दन अवश्य जाती थीं ।

इसी दौरान, डॉक्टर ने शर्माजी को कहा कि वो भी दो दिन बाद ही, दो माह के लिये लन्दन जा रहीं हैं । डाक्टर के ये शब्द सुनते ही, बारी पर घूघट निकाले बैठी हुई महिलाये आगे बढीं, उन्होंने डाक्टर को निवेदन किया ।

डॉ एलिस—"आप लन्दन मत जाओ"

डॉ एलिस घबराई क्योंकि उनका सारा कार्यक्रम तय हो चुका था । किसी महिला ने अपनी पुत्री किसी ने अपनी पुत्र वधु किसी ने अपनी बहन की शास्त्रीजी की पत्नी जैसी समस्या बताई । डाक्टर को हँसी आ गई, वो बोली- "मुझे तो दो माह के लिये लन्दन जाना होगा वहाँ मेरी भी एक मात्र भाभी के साथ यही समस्या है ।"

कुछ ही देर बाद शास्त्रीजी के मकान में आपातकालीन स्थिति की घोषणा कर दी गई । हर महिला अपने कार्य में युद्ध स्तर पर जुट गई । शास्त्रीजी व शर्माजी अपनी कुर्सियां लेकर काफी बडे आंगन के एकदम किनारे पर चले गये । पाँच मिनट बाद ही डॉक्टर जच्चा कोठरी से बाहर निकली तो शर्माजी व शास्त्रीजी अपनी कुर्सियों को लेकर अपने पूर्व स्थानों पर आ गये । डॉक्टर ने शास्त्रीजी की पत्नी के पुत्र होने की घोषणा कर दी । तभी एक उत्साही महिला थाली व बड़ा चम्मच लेकर शास्त्रीजी की छत पर चढने लगी, साबुन व गर्म पानी से हाथ धोती हुई । डॉक्टर ने उसे रोक दिया व छत पर जाने का कारण पूछा- महिला ने सारी बात बताई ।

डॉक्टर ने महिला से थाली व चम्मच लेकर, शास्त्रीजी से निवेदन किया कि ये कार्य वे स्वयं करेंगी । आज डॉक्टर 38 वर्षीय ही लग रही थीं । उन्होंने शास्त्रीजी की छत पर चढकर थाली बजाई तथा रात के एक बजे शास्त्रीजी के मोहल्ले के सभी लोगों को विशेषकर महिलाओं को जगा दिया । शास्त्रीजी के पुत्र के सम्मान में चारों तरफ के मकानों में लाइटें जल गईं । सभी व्यक्ति थाली बजने से सारी बात अपने आप समझ गये । जिस महिला का थाली बजाने में नम्बर नहीं आया, उसने शर्माजी को थैले के अन्दर अच्छी तरह अखबार में लपेट कर सवा किलो व डॉक्टर को बाजार के बिल्कुल नये खाकी पुडे में लगभग दो सौ ग्राम गुड रख कर दिया तथा डॉक्टर को उस गुड का महत्त्व बता दिया ।

अच्छी नींद लेकर व पडोसी के घर की स्पेशल चाय पीकर कार में सोये शर्माजी के बडे पुत्र व वृद्ध व्यक्ति बिल्कुल तरोताजा हो गये । शास्त्रीजी ने डॉक्टर को इक्कावन रुपये भेंट किये पर लन्दन जाने को तैयार डॉक्टर आज कुछ भी लेने नहीं आई थीं । उन्होंने मिस्टर शर्मा से राय लेकर बीस रुपये अपनी तरफ से मिलाकर इकहत्तर रुपये शास्त्रीजी के पुत्र को देकर शास्त्रीजी के मकान में एक बार फिर आनन्द व आश्चर्य उत्पन्न कर दिया ।

शर्माजी ने अपने बड़ पुत्र को डॉक्टर क साथ कार म आगे बैठा दिया व स्वय पीछे बैठ गये । कुछ समय बाद ही डॉक्टर ने अपने बगले क दरवाजे पर पिता-पुत्र को उतार कर धन्यवाद दिया, बदले मे पिता-पुत्र ने भी ऐसा ही किया तीनो ही अपने-अपने घर चल गये किसी ने भी पीछे मुडकर नहीं देखा ।

डॉक्टर अपना बगला तथा सभी सामान बेचकर व बैंक से अपना समस्त धन निकलवाकर लन्दन चली गई । वह जाने से पूर्व पचास हजार रुपये एक समाज सेवी सस्था को इस शर्त पर दान कर गई कि वे इस धन से उनके माता-पिता की याद म एक आलीशान कमरा बनवा द । लन्दन मे भी उन्होने पडोसिया को दवाइयाँ दकर उनकी सेवा की व सम्मान की पात्र बनी । अब वे स्वय भी कुछ बीमार रहने लगी । एक दिन लन्दन से उनके भाई पीटर का शर्माजी के नाम पत्र आया कि वो ताऊजी बन गये हैं ।

उसने लिखा कि मेरी बहन आजकल बडी भावुक हो गई हैं व अधिकाश बीमार रहती हैं । भतीजे के जन्म पर वे छत पर तो नहीं चढ पाई पर रात के ग्यारह बजे अपने कमरे म ही उन्होने जोर-जोर से थाली बजाना शुरू कर दिया । पडोसी जग गये व नाराज हो गये । उन्हे थाली बजाने की भारत की महत्त्वपूर्ण परम्परा के बारे मे बताया गया तो वे बोले, भारत म कुछ भी तो शाति से नहीं होता है । हर बात मे शोर चाहे जन्म हो चाहे विवाह, चाहे मृत्यु ।

कहने लगे शोर भी एक प्रकार का प्रदूषण है । हमारे कई बार माफी मागने पर बात समाप्त हो गई । एक वर्ष बाद डॉ एलिस की भी लन्दन मे मृत्यु हो गई । उन्होने अपनी समस्त धनराशि अपने छोटे भाइ को दे दी । उनके छोटे भाई ने भी बीस हजार रुपये का ड्राफ्ट डॉक्टर की याद म एक प्याऊ बनवाने के लिये उसी समाजसवी सस्था को भिजवा दिया जहाँ उनकी बहन ने एक कमरा बनवाया था । सडक के किनारे समाजसेवी सस्था द्वारा चार दीवारी मे बनी इस प्याऊ से शास्त्रीजी का परिवार उस रास्ते से निकलने पर पानी अवश्य पीता है ।



भीड़

त्रिलोक गोयल

मैं पहले ही यह जानता था कि एक दिन यह होकर रहेगा। जरूर होकर रहेगा और आखिर हुआ भी।

आवेश मे थुल-थुल सेठ रामलाल की तोद बराबर हिल रही थी। आधी धोती अधोवस्त्र और आधे उर्ध्ववस्त्र का काम करती थी। प्रात शिव-मन्दिर आने की उनकी यही वेश-भूषा थी।

बिजली घर के इजीनियर आई सी माथुर बोले- एक दिन बरसात की रात मे जब मैंने इन तारो मे स्पार्क होते हुए देखा खतरे का आभास तो मुझे उसी दिन हो गया था। चिन्ता यह थी कि किसी दिन किसी का बच्चा न चिपक जाय।

उनकी यह बिना सिर-पैर की बात सुनकर मेडीकल कॉलेज का एक छात्र हँस पडा। आप भी इजीनियर साब,क्या बच्चा जैसी बात करते हो। सडक से बारह-तेरह फुट ऊपर इस तार तक कोई बच्चा भला कैसे पहुँचेगा? क्या करने जाएगा?

इजीनियर को पनखनी खात देख कर उसके पडौसी मास्टर रामभरोसे को बडा मजा आया। मुस्कुराते हुए उसने अपनी मास्टरी की टाँग अडाई- 'जब आपने तारो का स्पार्क होते हुए देखा तो फिर किसी बिजली मिस्त्री को भेज कर इन्हे ठीक क्या नहीं करवा दिया? पूरे मुहल्ले मे केवल आप ही तो पॉवर-हाऊस मे काम करते हैं।"

"देखो रामभरोसे तुम मेरे मुँह मत लगा करो। माथुर साहब तिलमिला गये। मैं तो कई लोगो से कई बार कह देता तो कभी का हो जाता यह काम। मेरे हाथ इस छोटे से काम मे क्या आफत थी।'

इश्यूरेस वाले शर्मा साहब बोले- "किससे कहा था आपने अर्जी लगाने के लिए? हम भी इसी मुहल्ले मे रहते है कभी कोई ऐसी बात नहीं सुना।"

"किससे कहा था कब कहा था, कहाँ कहा था ? ये कोई थाना कचहरी तो है नहीं कि मैं सब याद करके बताता रहूँ सबूत देता रहूँ । जब कह रहा हूँ कि कहा था, तो कहा था ।" माथुर साब खुद भी जान रहे थे कि उनकी बात के थोथेपन ने उनकी आवाज को खोखला कर दिया है ।

यो सारी भीड को माथुर साब के पीछे हाथ धोकर पड जाने से मास्टर रामभरोसे को बडा मजा आ रहा था ।

दाल म छौंक लगाने के लिय कुछ औरत भी आ गयी । औरते या तो अनपढ वृद्धाएँ थी या अति आधुनिकाएँ, जिनके समानता के दावे ने पुरुषो के बीच की झिझक को मिटा दिया था । अधकचरी स्त्रियाँ झरोखो, कटहरो से झुक-झुक कर झाक रही थी । औरत हर हालत मे औरत ही है । रहे बच्चे सो बालक वानर एक समान । उनकी तो दुनिया ही निराली है, जो जैसे था वैसे ही चला आया । वे उसके बिल्कुल पास जाकर उसे छूकर देखना चाहते थे पर डरते थे कि कहीं अभी उठकर हमे झूर न खाये या मरने के बाद कहीं भूत न बन गया हो और हमारे सर पर सवार हो जाये । जिन्दे और मुर्दे मे उनके लिये कोई विशेष अन्तर नहीं था । उनकी चचलताएँ, उत्सुकताएँ जिज्ञासाएँ, वेश-भूषायें सब दृष्टव्य थीं ।

हुआ यह कि जनसख्या वृद्धि के साथ, बढते पुरान शहर की सीढियो पर नयी बसी 'बापू नगर' नाम की कॉलोनी म अधिकाश लोग उच्च-मध्यम श्रेणी के कुलीन और शिक्षित रहते थे । या द्विपहिया वाहन वालो का बहुमत होने पर भी सेठ रामलाल जैसे कुछ अपवादो के पास मारूति भी थी तो तलघरो गैरिजो आदि म रहन वाले कुछ किरायेदार काफी गरीब लोग भी थे । इस बस्ती से दो-चार तरफ सडके फटती थीं जो अन्य मुहल्लो तथा मुख्य सडको से इसे जोडती थीं । इसी कॉलोनी म एक कॉमन जगह पर शिव-मन्दिर बना लिया गया था जहाँ कई लोग नित्य नियम स जल चढा कर पुण्य सचय करने आते थे । पूरी बस्ती म तार टेलीफोन के खम्भो का जाल सा बिछा था । शिव-मन्दिर के कलश से लगी ट्यूब-लाइट से सेठ रामलाल के फ्लेट के बाहर लगे विद्युत खम्भे तक तार यो ही झूलत रहते थे । अपनी ममता को छाती स चिपकाय वानर सेना बिना बुलाये आकर इधर से उधर मुफ्त सकस दिखाया करती थी । वानरो के आत ही बच्चा के भीतर का वानर जाग जाता था । और व कइ प्रकार से उनकी नकल निकालत चिढाते तथा डर कर भाग आते । आज सुबह ही सुबह करेण्ट लगने से एक बन्दर नीचे आ गिरा और कुछ देर डिस्को दिखाने के बाद वह अतुलित बलधामा वीरगति को प्राप्त हो गया ।

प्राय सर्वप्रथम रामलालजी ही मन्दिर जाते थे । आज भी वे मन्दिर गये और मरे हुए बन्दर का देख कर उन्होने जो हो हल्ला मचाया उसी से यह सुन्दर काण्ड का पाठ चल रहा था ।

मन्दिर कमेटी ने रामलालजी पर दोषारोपण किया कि तार आपके घर की तरफ से ही मन्दिर मे आ रहे हैं अत आपको सुधारना चाहिये था। रामलालजी ने दोषी ठहराया 'बापूनगर सुधार समिति' को। बोले- "मुझे कोई सपना आता है कि तार ऊपर से कट गये हैं? मैं अपना धन्धा करूँ या ये सब देखता फिरूँ ? फिर मुहल्ला सुधार समिति किस लिये है ? यह काम कमेटी का है। हूँ लोगों से काम-धाम तो होता नहीं पद चाहिये, नाम चाहिये।"

इस तरह दोषारोपण का सिलसिला चला। बीच मे सडती हुई नालियो और टूटी हुई सडको का भी जिक्र आया। सामाजिक कुरीतियो को दूर करने के सुझाव भी आये। सारी नयी जेनेरेशन को बिगाडने का श्रेय सिनमा, टी वी का दिया गया बच्चो के खेलने के लिये एक बालोद्यान बनाने की चर्चा करते हुए जब रामभरोसे ने अपनी खल्वाट खोपडी की तरफ सकेत कर कहा कि "जब मैं स्कूल से आ रहा था तो मुहल्ले के एक कपिलदेव ने एसा चौका मारा कि मेरी कपाल-किरिया होते-होते बची।"

इस पर जोरदार ठहाका लगा। इस तरह छोटे-मोटे स्टेशनो के बाद गाडी राजनीति के जक्शन पर आकर रुकी। यहाँ तू-तू मैं-मैं होते-होते, आस्तीन चढने लगी। पहलवान अखाडे मे उतरते उसके पहले ही नीति-निपुण वकील मोहनलाल शर्मा मन्दिर के चबूतर पर चढकर भाषण सा देने लगे- "भाइयो और बहनो! हमको दिल्ली जाना था और हम बम्बई पहुँच गये। हम यहाँ एकत्रित हुए हैं कि अब इस बन्दर का क्या करना है, और भविष्य मे ऐसी अप्रिय घटना न घटे उसका उपचार भी हमे करना है।"

शिव शिव शिव का जाप करते हुए पण्डित परदु ख सतोषीजी ने अपनी चुटिया पर हाथ फेरत हुए कहा- "ब्राह्मण बेला म इस अशुभ घटना के घटने से महान अनर्थ हो गया है। इस पाप की विनाशकारी छाया पूरी बस्ती के लिये घातक है।"

पण्डितजी के स्वर म स्वर मिलाता दूसरा बोला- "और बन्दर भी काले मुह वाला रावण दल का नहीं है, लाल मुँह का साक्षात हनुमान है। हनुमान! तभी तो शिव मन्दिर के प्रागण मे प्राण त्यागे हैं।"

महिला वर्ग भला पीछे कैसे रहता। एक बुढिया बोली- "रामायण पढी है? रेडियो मे रामायण देखी है? शिवजी और हनुमानजी म क्या अन्तर है? भगवान राम का नाटक देखने, उनकी सहायता करन के लि। शकर भगवान ही तो हनुमानजी बनकर आये थे।"

मास्टर रामभरोसे ने जोर से नारा लगाया- "बोल बजरग बली की जै। पवनसुत हनुमान की जै।"

सेठानी की ट्रक मे कई वर्षों से एक लाल रेशम का टुकडा व्यर्थ ही पडा-पडा सड रहा था । न खुद के काम आता था, न किसी को देने के । इससे अच्छा उसका सदुपयोग और क्या हो सकता है, यह सोच कर उसने भीतर से वह टुकडा लाकर उस शव को ओढा दिया, दस-पाँच अगरबत्तियाँ जला दी ।

वह खुराफाती मेडिकल कॉलेज का छात्र फिर बोला- ''यो भी डार्विन साहब के कथनानुसार मनुष्य बन्दर की सन्तान है इस हिसाब से य अपन पूर्वज हुए, अपने इन बाप-दादाओ का किरिया-करम तो हम ही करना पडगा ।''

मजाक मे कही गयी, उसकी इस बात को गम्भीरता से क्रियान्वित करने के लिये तत्काल एक 'कपि-किरिया-करम-कमेटी' बनी । चन्दा उगाया जाने लगा । किसी ने इच्छा से दिया, किसी पर जोर डाल कर लिया गया, किसी ने दूसरे को नीचा दिखाने के लिये उससे बढकर दिया और देखते ही देखते लगभग पाँच हजार की छोटी-सी राशि इस महत्त्वपूर्ण कार्य के लिये सुगमता से एकत्रित हो गयी ।

मुहल्ले म लाश पडी हो तो कोई कुछ खाये कैसे । वो बात दूसरी है कि सेठ साब, शर्मा साब, कुछ इण्डियन साबो के यहाँ से दो-तीन बार चाय बन कर जरूर आयी, उन्हे अपनी उदारता सम्पन्नता और सामाजिकता दिखाने का इससे अच्छा मौका कब मिलता? इस राष्ट्रीय पेय को स्वाद ले लेकर सराहना के साथ पीया गया । हाँ, बच्चे जरूर डबल-रोटी, बिस्कुट या घर मे पडी बासी रोटी खाकर बन्दरो की तरह कूदते-उचकते फिर रहे थे ।

दो चार लोग अपने नौकरी-धन्धे पर जाने की तैयारी करने लगे तो कपि-किरिया-करम-कमेटी ने मीठी झिडकियाँ देकर उन्हे जाने से रोक दिया । ''वाह, साहब ! कमाल कर दिया आपने तो, आपके बिना यह सब कौन करेगा? अभी घर म कोई अच्छा-बुरा काम आ पडता तो छुट्टी लेते या नहीं? एक दिन भगवान के नाम पर ही सही, ऐसा काम कोई रोज-रोज थोडे ही पडता है ।''

अब क्या कहते? रुकना तो था ही, चाहते यही थे कि कोई जरा टोक दे तो इम्पोर्टेन्स दिखे ।

कदली स्तम्भा और पुष्पमालाओ से सजाकर एक ठेले को बढिया बैकुण्ठी का रूप दिया जाने लगा, तब तक पण्डित परदु ख सतोपीजी उच्चस्वर से हनुमान-चालीसा का पाठ करते रहे, और जिन्हे चालीसा कण्ठस्थ थी व उनक स्वर म स्वर मिलाकर दूर-दराज के लोगो के कानो म भी भक्ति सगीत को अमृत वर्षा करने लगे। इस कलात्मक कार्य मे दो घण्टे लग गये । दो-तीन भजन मण्डलियाँ आ गयी, चार ढोल आये दो बैण्ड, एक ने 'राम धुन' और दूसरे ने 'ओम जय जगदीश हरे' का आरती बजाना शुरू कर दिया । पूरे

सम्मान के साथ उस शव को उसमे लिटा कर जरी का लाल शाल ओढाया गया, गुलाल लगायी गयी पर "हनुमानजी के गुलाल नहीं सिन्दूर लगाई जाती है।" इस टीका टिप्पणी पर तत्काल सिन्दूर भी मगा कर मुह पर चुपडा गया, उछाल शुरू हुई और 'राम नाम सत्य' के नारा के साथ-साथ शव-यात्रा प्रारम्भ हुई। पूरी बस्ती के लोग श्मशान घाट की तरफ हुजूम बना कर चले। जो लोग मुहल्ले मे किसी मनुष्य की मृत्यु हो जान पर भी दाह सस्कार म जाना टाल जाया करते थे, "क्या कर साहब उसी दिन ऐसे तज टेम्प्रेचर हुआ कि बस क्या बताये आपका आदि आदि," आज उन्हे भी कुछ नहीं हुआ था। औरते भी मुहल्ले के सिरे तक जाकर ठले के ठेलने म सहयोग देने लगी। जिन ओरतो को आरती की थाली का सबके सामने घुमान मे कुछ शर्म-सकोच हो रहा था, वे भी ठेले के हाथ लगाकर पुण्य लूटने मे पीछे नहीं रहीं। आँसू पोछते लौटते हुए परस्पर कह रही थी- भगवान ऐसी मौत सबको दे।

बच्चे तालियाँ बजा रहे थे।

कपि किरिया-करम-कमेटी ने दाह कर्म के दौरान यह भी तय कर लिया था कि वानराधीश की अस्थियाँ गगाजी मे प्रवाहित करने मुहल्ले का वह सदस्य जायेगा जिसे रेल्वे पास मिलता है। गगोज के भोज मे क्या-क्या पकवान बनेगे? कि न ब्राह्मण जिमाए जायेगे और बारवीं, तरवीं कैसे की जायेगी? बाकी बची र. ाि म आवश्यकता हुई तो कुछ धन और मिला कर जहाँ इसने देह त्यागी है उस स्थान पर इसकी स्मृति मे एक वानर प्रतिमा प्रतिष्ठापित कर किस मत्री स मूर्ति का अनावरण कराया जायेगा? इस प्रकार इस महाकाव्य की इतिश्री कर दी जायगी।

जब यह वानर-लीला चल रही थी तभी म्यूनिसिपल्टी का एक कर्मचारी एक अधड की लाश का कूड क ठेले म ले जा रहा था। कुछ दयावान लोगो न पूछा- 'यह लावारिश लाश किसका है?"

कमचारा बाला- अपन मुहल्ल क पहले सिरे पर बिजली के खम्भे के नीच जा सूरदास पडा भाख मागा करता था न रात वही भूख और सर्दी के मारे मर गया है।

सठ रामलाल न करुणा दिखाते हुए कहा- "चला अच्छा हुआ बेचार की सुधर गयी।"



प्रतिफल

मुख़्तार टोंकी

उसने बीडी का अन्तिम कश लिया और सिर उठाकर सामने नजर दौडाई। हमेशा की तरह वही पुराना दृश्य उसका मुह चिढा रहा था। एक भयावह सन्नाटा एव पीडायुक्त निस्तब्धता का दृश्य, जिसमे न कोई सौन्दर्य था और न कोई आकर्षण। कब्रिस्तान की दीवार के उस तरफ दूर-दूर तक सैकडो कब्रें उसके दृष्टिवृत्त मे आती थीं। छोटी-बडी कब्रे कच्ची और पक्की कब्रे, पूर्ण व्यवस्थित तथा टूटी-फूटी अव्यवस्थित कब्रे कुछ नई और अधिकतर पुरानी कब्रे। भला इस नीरस दृश्य से क्या प्रसन्नता हो सकती है। थोडा हार्दिक सन्तोष एव हर्ष की अनुभूति तब होती थी जब किसी नई कब्र की वृद्धि के समाचार उसके कानो तक पहुँचते थे। वर्षों से उसका यह स्वभाव बन गया था कि वह चाय-नाश्ते से निवृत्त होकर सुबह आठ बजे अपने मकान के बाहर चबूतरे पर चारपाई डाल लेता था और फिर प्रतीक्षा के कष्टदायक क्षणो को झेलता था।

उसके मकान और कब्रिस्तान के बीच केवल एक सडक थी जो निर्जन सी लगती थी। जब कोई जनाजा आता था तो थोडा बहुत आवागमन हो जाता था। उस ने बाँयीं दिशा मे दृष्टिपात किया। सडक पूरी तरह सुनसान थी। आदम व आदमजाद तो क्या, कोई चिडिया का बच्चा भी नजर नहीं आता था। कब्रिस्तान के भयावह वातावरण ने सडक को भी एक निर्दयी सन्नाटा प्रदान कर दिया था। सभी दिशाओ मे शान्ति साय-साय कर रही थी। उसकी प्रतीक्षारत व्याकुल आँखें जिस वस्तु की इच्छुक थीं उसकी प्राप्ति अनिश्चित थी, फिर भी एक कल्पनातीत उम्मीद के सहारे वह अपने दिमागी तनाव को कम करने का प्रयास करता था। कहते है कि प्रतीक्षा मे मृत्यु से भी अधिक कष्ट होता है। हाँ उसे मौत की प्रतीक्षा रहती थी। किसी की मौत हो जाने अथवा परलोक सिधार जाने के समाचार सुन कर उसका हृदय हर्ष से नाच उठता था क्योकि इसी के द्वारा वह अपनी रोजी-रोटी कमाता था। उसका पैतृक पेशा गौरकनी

था और पिछले पच्चीस वर्षों स वह निरन्तर क़ब्र खोदता आ रहा था। सैकडो बल्कि हजारो मुर्दे उसकी खोदी हुई क़ब्रो म आखिरी नींद सो रहे थे।

धूप अधिक चढ आयी थी और वैसे भी उसकी तबीयत खिन्न थी। उसन हताश मन से चारपाई उठायी और मकान की ड्योढी म ले जाकर बिछा दी। उसकी समझ म नहीं आता था कि क्या करे ? लगातार पन्द्रह दिन उसके लिये 'ड्राईडे' सिद्ध हुए थे। उसके लिये आश्चर्य एव दुख की बात थी कि शहर मे कोई जिन्दा मुर्दे म परिवर्तित नहीं हुआ था। सम्पूर्ण अर्द्धमास उसने बडी विचित्र मन स्थिति म गुजारा था। वह तो चाहता था कि दिन प्रतिदिन लोग मरत रहे ताकि उसकी जीविका के साधन सुलभ होते रहे। उसने ड्योढी मे पडे हुए कुदाल-फावड को झुझलाकर एक ठोकर मारी और फिर मकान क भीतरी हिस्से म झाक कर देखा। उसकी दोनो बच्चिया और बीबी बीडिया बनान मे व्यस्त थीं। यदि केवल कब्रा के खोदने को ही वह अपना मुकद्दर समझ लेता तो उसका घर ससार नष्ट हो गया होता। बीडी के धन्धे ने कम से कम भूखो मरन से तो बचा लिया था। कुछ क्षणो तक बडे ध्यान से वह अपन बीबी-बच्चो को देखता रहा फिर चारपाई पर दरी बिछाकर लेट गया। कुछ मन शान्त हुआ तो दिमाग म भिन्न-भिन्न प्रकार के विचार कुलबुलाने लग। गत वर्ष जब शहर मे उल्टी-दस्त की बीमारी ने तबाही मचाई थी, उस दिन मे दस-दस बारह-बारह कब्रे खोदना कोई सरल कार्य नहीं था। विवश होकर उसे अपने बटे को भी अपने काम मे सम्मिलित करना पडा था। उसका बेटा अब्दुल करीम बहुत होनहार एव आज्ञाकारी था। वह नहीं चाहता था कि उसका पुत्र भी गौरकनी करे एव पारम्परिक पैतृक पशा अपनाये। उसने स्वय कष्ट कठिनाइया भोग कर अपने बटे को खूब पढाया-लिखाया था। बी ए पास करने के बाद वह नोकरी की तलाश म लगा हुआ था। कुछ छोटी कक्षाओ की ट्यूशन्स भी उसने पकड रखा थीं। इस समय वह घर म नहीं होगा। सुबह साइकिल पर उसके सामने तो गया था। बडी बच्ची एक दो साल मे वयस्क हो जायगी। उसक हाथ पीले करने क लिये भी अभी से कुछ बन्दोबस्त करना होगा। काश! अब्दुल करीम की नौकरी जल्दी कहीं लग जाये। कब्र खोदने की आमदनी स भला क्या हो सकता है। एक जमाना था कि वह कब्रे खोदने का पारिश्रमिक पाँच रुपय मात्र लेता था। और इस रकार्ड महगाई मे उसे फिफ्टी मागने पडते हैं। यह यमदूत भी बडे विचित्र स्वभाव का है। जब लोगो के प्राण पखेरू उडाने पर आता है तो समय-असमय दर्जनो को अपना शिकार कर बैठता हे और हफ्ता यह क्रम जारी रखता है। बहुधा तो उसे रातो को भी कब्रे खोदनी पडी हैं। और अब देखो पन्द्रह दिन से लापता है। न जाने कहाँ अपन कर्त्तव्य का निर्वाह कर रहा है और यह नहीं सोचता कि यहाँ किसी

की जान पर बनी हुई है । अब यमदूत भी क्या करे ? ये डॉक्टर लोग भी बडे अजीब जीव हैं । व्यर्थ मृत्यु के द्वार पर खडे और कब्र मे पैर लटकाये मरीज को जिन्दा रखने की कोशिश करते हैं । मरने क्यो नहीं देते कि पाप कटे, झझट मिटे एक आदमी मुर्दा आदमी की प्रतीक्षा म विचलित है ओर उधर ग्लूकोज चढाकर, ऑक्सीजन सप्लाई करके और शक्तिशाली इन्जेक्शन ठूस कर उसकी उम्मीदों को मिट्टी मे मिलाया जा रहा है । आश्चर्य है । इतने दिनो से शहर मे कोइ साधारण घटना घटित नहीं हुइ । य टैक्सी ड्राइवर क्या कर रहे हैं? क्यो दो-चार को कुचल नहीं देते? आखिर उसे भी तो जीने का अधिकार है। वह कब्रे खोदने का कष्टदायक एव कठिन काम करता है और कुदाल-फावडे से अपना खून पसीना एक कर देता है । हरामखोरी तो नहीं करता । भीख तो नहीं मागता । कोई इमारत ढह क्यो नहीं जाती ? कोई दीवार गिर क्यो नहीं जाती ताकि दो-चार तो मरे और फिर यहाँ आकर जमीन का पैबन्द बने । बगला दश मे तूफान आ रहे हैं । हजारो की सख्या मे लोग मृत्यु का ग्रास हो गये हैं । शायद यमदूत मय अपनी टीम के वहाँ पहुँच गया है । बेकार मे वहाँ मोत का नगा नाच हो रहा है । यहाँ कुछ ऐसा हो तो किसी को फायदा पहुँचे । पाँच महीने पहले एक निर्माणाधीन बिल्डिग की छत बैठ गई थी तो बीसो राज मजदूर दब कर मर गये थे । सम्बन्धित इन्जीनियर का खराब मैटेरियल उपयोग करने हेतु आरोपित किया गया था । मगर उसे तो पूरी तरह हर्ष की अनुभूति हुई थी । कुछ घरेलू आर्थिक समस्याएँ हल हो गई थीं । वह अकसर सोचता कि यह कैसा शहर है ? यहाँ गडबड क्या नहीं होती ? यहाँ भी तो कई सम्प्रदाय के लोग रहते हैं । फिर भी दगा-फसाद नहीं हाता । लूटमार और मारकाट हो तो कुछ लोगो की जानें जाय ओर उसे भी शुभ अवसर मिले, कब्रे खोदने क । यह जरूर है कि शहर के हालात सन्तोषप्रद नहीं हैं । तनावपूण स्थिति है और घृणा वैमनस्य न अपनी जडें पूरी तरह जमा रखी हे । नगर प्रशासको न दूरदर्शिता से काम लकर धारा 144 लागू कर दी है तथा असामाजिक तत्वो पर कडा नजर हे । एस म क्या हो सकता है ? ऐसे मे क्या हो सकता है ?

"अब्बूजी ! खाना खा लीजिये ।" अपनी छोटी बच्ची रेहाना की आवाज सुन कर वह चौंक पडा । उसके विचारो को एक झटका सा लगा । आकाश की बुलन्दियो म विचरण करते-करते एकदम जैसे वह धरती पर उतर आया हो । कैसे-कैसे बुरे विचार उसक दिमाग म घूम रहे थे । उसको अपनी सोच के इस नैगेटिव अन्दाज पर बडा आश्चर्य हुआ । वह उठकर बैठ गया आर अपने सिर को कइ बार दाँये-बाँये घुमाया । शायद वह इस प्रकार अपने दिमाग़ के टेढपन को झटक देना चाहता था । कहीं उसकी बेटी उसके विचार न पढ ले

उसने उससे बगैर नजरे मिलाये खाने की थाली अपनी हाथो पर सभाल ली। दो प्रहर हो गए थे और जीवनचर्या का यह कार्य भी उसे करना था।

उसकी पत्नी खाना बहुत सलीके से बनाती थी। उसने पेट भर कर भोजन किया। हाथ-मुह धोते समय वह सोच रहा था कि रुखसाना कितनी त्यागी- सन्तोषी औरत है। तगदस्ती मे भी प्रसन्नचित नजर आती है। विपत्ति के अवसरो पर भी वह शिकायत का हर्फ जुबान पर नहीं लाई, और न उसन कभी अपने किसी दुख को प्रकट किया। उसे न दुनिया की परवाह है और न दुनिया वालो की। अपने हाल मे मस्त-मगन है। अभी वह चारपाई पर बैठ कर बीडी सुलगाने ही जा रहा था कि बाहर से आवाज आई- "रहीमू चाचा रहीमू चाचा! जल्दी से बाहर आइये।" आवाज म भय एव विवशता थी। वह घबडाकर बाहर निकल आया। उसक सामने मसीता खडा था। चेहरे पर हवाइया उड रही थीं और उसका सीना धोकनी की तरह ऊपर नीचे हो रहा था। ऐसा मालूम होता था कि वह दूर से भागता हुआ आया है।

"क्या गजब हो गया मसीते? क्या चिल्ला रहा है?" उसने पूछा।

"कुछ नहीं चाचा! वह वह करीमू है न करीमू "

मसीता कहते-कहते रुक गया।

"क्या हुआ मेर बेटे को? कहाँ है वह?" उसके लहजे मे चिन्ता का समावेश हो गया।

"चाचा! वह जलबी चौक म दगा हो गया है बाजार की सब दुकाने बन्द हो गईं। करीमू उधर से आ रहा था कि कुछ गुण्डो ने उस घेर लिया और उसके पेट मे चाकू घोप दिये उसकी लाश पुलिस ले गई है। आप जल्दी से चले "

यह दहशतनाक ख़बर सुन कर वह सिर से पाव तक काप गया। उस पर कौमा की कैफियत छा गई। वह चन्द लम्हे ख़ाली-ख़ाली नजरो से मसीते को देखता रहा और होठा म बडबडाया-

"दगा लाश मुर्दा अल्लाह बडा कारसाज है।"

फिर ख़ामोशी से उसने कुदाल-फावडा उठाया और कब्रिस्तान की तरफ चल खडा हुआ।

उस क़ब्र जो खोदनी थी अपन बटे की प्यारे बटे की ।।



शापमुक्ति

माधव नागदा

वे हतप्रभ रह गये । एकदम ठगे से । कानो मे अजीब सनसनाहट होने लगी मानों किसी ने उबलता हुआ तेल उडेल दिया हो । किसी ने क्या उनके अपने ही बेटे ने । सबसे बडे वाले ने ।

जो शब्द उनके कानो से टकराये, वे अविश्वसनीय थे । कोइ बटा अपने बाप को ऐसी भद्दी गाली द सकता है भला ? कलियुग, घार कलियुग। दुश्मन को भी यह गाली तभी दी जाती है जब वाक-युद्ध चरम सीमा पर पहुँच गया हो और तर्क के सारे रास्ते बद हो चुके हो । तो क्या वे अपने बेटे की निगाहो म दुश्मन से भी गये गुजरे हैं? एक जानवर ?

नहीं, नहीं बडका ऐसा नहीं हो सकता । सभव है उसने जानवरो पर ही अपना गुस्सा निकाला हो । कबरी गाय घर की तरफ जाने की बजाय बाडे की ओर जो मुड गयी थी । उसने गाय को ही गाली दी होगी । भगवान करे यही सच हो । लेकिन लेकिन उनके अनुभवी कान कैसे धोखा खा सकते हैं। अभी भी एक-एक शब्द जहरीले काँटे की तरह उनके जिस्म मे खुभा हुआ है, ''जानवर सब बाडे की तरफ जा रहे हैं और ये खडे-खडे ।'' फिर वो जानवरो को धीमोडता, कूटता लतियाता दौडाकर ले गया । उन्हे लगा कि वह उन्हे स्वय को लतिया गया हो, अपने बाप को ।

सोचा करते थे कि गृहस्थी का सारा दायित्व पुत्रो पर डालकर बुढापे मे भगवद् भजन किया करेगे । त्रिकाल सध्योपासना । परन्तु दा तो सब कुछ छोडकर शहर चले गय, और तीसर का व्यवहार देख तो जीवन की सध्या तजी से निकट आन लगी । आ जाय । ऐसे जीने से तो वही परम शान्ति श्रष्ठ है। अरे, पत्नी भी अपनी नहीं बट-बहू तो बाद मे आय हैं ।

उन्होन दीघ सास छाडी । टागें कापन लगीं- भूख से बुढाप से, कमजोरी से, गुस्से से । वे वहीं बैठ गये । चबूतरे का सहारा लेकर । इतना लम्बा-चौडा

शरीर है, साढे छ बाई तीन का । भूख तो लगेगी ही । गोडे थक गये तो क्या, पेट थोडे ही थका है । अब भूख को लेकर कोई ताने दे तो दे । खुराक तो अभी भी वही है जवानी वाली । उन्हे अच्छी तरह याद है जैसे कल की ही बात हो । पेट भर गया था, ठसाठस । तब किसी ने मजे लेने के लिए शर्त बदी थी- हरिभाई, अब अगर एक लड्डू और खा लो तो दो रूपये इनाम ।

"अगर हर लड्डू पर दो रुपये हों तो बात कर ।" हरिभाई डकार लेते हुए बोले थे ।

"चलो मजूर ।"

फिर एक के बाद एक दस बूंदी के लड्डू वे उदरस्थ कर गये थे । आह । वे भी क्या दिन थे । हरिभाई के पेट मे कुछ गडगडाया जैसे लड्डू लुढक रहे हो । मुँह मे पानी भर आया । खाने-पीने के शुरू से ही शौकीन रहे हैं। जिह्वा अब भी जोर मारती है तो ले गोमुखी और माला, निकल पडते हैं पास के कस्बे की ओर । कस्बा प्रसिद्ध तीर्थस्थल है। जहा भेजने वाला भगवान और पाने वाला भगवान, वहा एक खाने वाला हरिशकर आसानी से खप सकता है। बस, थोडा सा नाटक आना चाहिये ।

जब एक बार सिलसिला शुरू हुआ तो वे यादो की तार के सहारे विचारो का मकडजाल बुनते चले गये ।

तब भी वे घर से रूठ कर गये थे । पत्नी ने ताना मारा था, " काम-धधा तो कुछ होता नहीं, बस सारे दिन चूल्हे के खूणे । खाने के सिवाय कुछ सूझता भी है । बहू दे दे इनको आटा सामान । चबूतरे पर चूल्हा माडकर बनाते रहेगे । आज्ञाकारिणी बहू ने सचमुच ऐसा ही किया था । उनसे बर्दाशत नहीं हुआ था । निकल पडे अपनी गोमुखी, माला और पचाग लेकर । कुछ नहीं तो टूटा-फूटा गायत्री मत्र ही सही । यही सब करवायेगा यज्ञ, हवन, गृह शान्ति, भूख शमन सब ।

परन्तु उनसे मामला जमा नहीं । बडे-बडे अभिनय कुशल लोगो ने इस क्षेत्र मे पहले से ही कब्जा जमा रखा था । सो वे मन्दिर के द्वार पर अपना आसन जमा कर बैठ गये । भिक्षावृत्ति तो ब्राह्मण का धर्म है। सामने गमछा बिछा दिया । हाथ गोमुखी म । आँखे बन्द। मुँह से ओम ध्वनि । गमछे पर सिक्का गिरता खनन् । हरिशकरजी को ओम ध्वनि और सचेत हो उठती । कभी-कभी क्षण मात्र के लिये पलक उठा आमदनी का अनुमान लगा लेते । बाद मे वे धीरे-धीरे अधे का अभिनय भी सीख गये थे । आपदकाले मर्यादा नास्ति । ओम भू र्भूव फिर धीमे से दे द माई अधे कू ओम् ओम् खनन् । फिर एक दिन 'लो अधे महाराज' यह परिचित आवाज सुन उन्होंने आँखे खोलीं। उनक गाँव का नोजा चमार गमछे पर चवन्नी फकने का उपक्रम कर रहा था।

पण्डित हरिशकर के काटो तो खून नहीं । एक चमार द्वारा ऐसी मसखरी । मन मसोस कर रहे गये । गाँव मे होते तो नीम से बाध चमडी उधेड देते । मगर यहाँ वे बेवस थे, ब्राह्मण, ठाकुर नहीं बल्कि अधे साधु । एक चमार के हाथो पण्डित हरिशकर का यो अपमान होना लिखा था । फिर भी वहाँ उन्होने अपने को सभाल लिया । क्या चमार, क्या ब्राह्मण, भगवान के दरबार मे सब समान हैं ।

इस घटना के कुछ ही दिनो पश्चात् एकाएक उनके चारो ओर ढेर सारे सिक्के खनखना उठे, मानो चिल्लर का कोई रेतीला टीला ढह गया हो । शायद कोई बडा दानी आया है । उन्होने मुदित होकर नेत्र खोले तो पलके खुली की खुली रह गयीं । सामने बडका खडा था, लाल-पीला होता हुआ । गमछा रास्ते म लोगो के पैरो तले रौंदा जा रहा था । 'हमारी नाक कटवान बैठे हो यहाँ ? चलो उठो ।' और बडका उनकी बाह पकडे लगभग घसीटने लगा । वे चिल्लाते रह गये, 'अर मेरी कमाई ता लेने दो ।' परन्तु सुने कौन ।

अपमानो के कई-कई घूट गटके हैं उन्होने, और हर-बार किसी न किसी तरह अपने को सभाल लिया है । मगर आज क्या कह कर सभाले वे अपने आपको । बेटे द्वारा ऐसा भोडा अपमान । राम ! राम ! हे भगवान यह कौन से कर्मो का फल है । पत्नी, बेटा, बहू कोई भी तो अपना नहीं ।

चबूतरे से पीठ टिकाये-टिकाये ही उन्होने अपने विगत जीवन का जायजा लिया । वे एक धर्मपरायण व्यक्ति थे । रोज सवेरे स्नान, गायत्री जाप, सध्या पाठ, कबूतरो को दाना देना उनकी दिनचर्या थी । चींटी तक नहीं मारी । किसी का बुरा नहीं किया । यहाँ आकर कुछ ठहरे वे । एक लम्बी सास छोडने के पश्चात् पुन विचार यात्रा आगे बढी । जो कुछ थोडा बहुत ऊँचा-नीचा किया वह इसी बडके की भलाई सोचकर । छोटे दोनो पढ-लिख कर अफसर बन गये । जाति-समाज मे नाक कटवा कर वहीं शहर मे विजातीय मेमो से ब्याह रचाया और वहीं पर घर बसाया । उनकी तरफ से बाप और बडा भाई तो पडो कुडे कुए मे । तो बडके का है कौन उनके अलावा ? आज इसके दो लडकियाँ एक लडका है । कल ईश्वर और देगा । कुनबा बढेगा । तब यह घर निश्चित ही छोटा पडेगा । छोटके दोनो तो आकर जुगाड करने से रहे । वे तो अपनी गृहस्थी म मस्त हैं । बडे भाई का तारा भले अस्त हो ।

सो उन्हे ही अपने पाटवी का हित साधना है । पता नहीं किस ग्रथ पुराण से उन्होंने अपने लिये एक पगडण्डी ढूढ ली, "त्यजेतएक कुलस्यार्थे।" अपने सस्कृत ज्ञान के आधार पर प हरिशकर ने इसका अर्थ यो लगाया, "कुल का हित साधते वक्त यदि किसी एक का अहित हो जाय तो वह पाप कर्म नहीं कहलाता ।"

उनके घर के पडौस मे एक घर था विधवा श्यामा का । बहुत विचारने के पश्चात् उन्होने योजना बनायी और दो-तीन लठैत लेकर पहुँच गये श्यामा के दरवाजे पर ।

"रामू की माँ, जल्दी से घर खाली कर दे । तेरा पति इसे मुझे बेच गया है । ये देख ले कागजात ।" वे एक भी दिन की मोहलत नहीं देना चाहते थे ।

श्यामा जडभूत हो गयी थी । अडोल, भौंचक्क । आँखो मे अविश्वास लिये । बिल्कुल वही अवस्था जो आज उनकी अपनी है । उन्हे बखूबी याद है, श्यामा पचो के पास फरियाद लेकर पहुची थी लेकिन उसका पक्षकार कोई नहीं मिला । बस एक ही उत्तर, 'अगर तेरे पति ने बेच दिया है तो हरिशकर कब्जा करेगा ही ।'

'परन्तु मेरे पति ने नहीं बेचा है ।' श्यामा ने आर्तनाद किया ।

'नहीं कैसे ? सही बात तो ये कागजात बोल रहे हैं जिन पर तेरे पति की सही है ।'

श्यामा हताश होकर हाफने लगी थी । उसकी दशा उस भयभीत हिरणी सी हो गयी थी जिसे शिकारियो ने चारो ओर से घेर लिया हो ।

वह चुपचाप अन्दर गयी थी । फिर एक काख मे कपडो की गठरी और दूसरी मे रामू को थामे निकल पडी । जाते-जाते एक बार पीछे मुडकर उनकी आँखो मे आँखे डालकर बोली, 'पण्डित हरिशकर, तू एक दिन जरूर पछतायेगा, देख लेना ।' ओह वे सिहर गये थे, परन्तु बचाव के लिये वही धर्म वाक्य याद किया, "त्यजेतएक कुलस्यार्थे ।"

बावजूद इसके, जब-तब उनकी आँखो के सम्मुख दो जलते हुए अगारे तैरने लगते और उनके अन्तस मे कहीं गहरे यह बात उभरती कि पण्डित तूने किया तो अन्याय है ।

पण्डित सोचते रहे । अपने सस्कारो के विरुद्ध जाकर यह कर्म किसके लिये किया था ? इसी कटुभाषी अशिष्ट बडके की खातिर । इसकी औरत भी न तिल घटे न राई बढे । कर्कशा का पूर्णावतार । कैसे-कैसे टूटते बोल बोलती है, बूढला, जूडिया, खूसट, डोकरा । खाने की टाइम ओ जाता है । बच्चे-बच्चियों को भी यही सब सिखा रखा है । ऊपर से लोगों को दिखाने के लिये लाज रखती है । हाथ भर का घूघट काढती है । धूल पडी ऐसी लाज-शरम पर । इससे तो वे विजातीय शहरों में मे लाख दरजा अच्छी ।

सोचते-सोचते अनायास ही वे सस्कारो के कठोर आवरण को भेदकर अपनी दोनों छोटी बहुओ के प्रति नर्म हो गये । मझला आया था एक बार लेने । बहुत आग्रह किया । 'न भाई तुम लोगों ने पति-बिरादरी में मेरी नाक कटवायी है । मैं तुम्हारे घर की देहली में कभी कदम नहीं रखूगा ।'

'पिताजी, जाति एक सकीर्ण दायरे का नाम है । आप बाहर निकल कर देखिये तो सही । आपके बेटो का कितना मान-सम्मान है । यह केवल हमारा ही नहीं, आपका भी है क्योकि हमारी रगो म आपका रक्त है । क्योकि आपने पढा-लिखा कर हमे इस लायक बनाया है ।'

मझले की बातो मे विनम्रता और दृढताजन्य अजीब सम्मोहन था ।

'ठोक है । मैं चलूगा । मगर तुम्हारी पण्डरी का पानी तक नहीं छूऊगा।'

यो तो मझले का शहर काफी दूर था । किन्तु मारूति कार के आरामदायक सफर मे समय का कोई पता ही नहीं चला था । होश तब आया जब मझले ने कार का दरवाजा खोलते हुए कहा, 'आइये पिताजी, घर आ गया ।'

घर क्या, लम्बा-चौडा बगला था । बाहर नेम प्लेट लगी थी, 'देवीशकर हरिशकर भट्ट, उपजिलाधीश' । वाह भाई देवी तूने वास्तव म इस बूढे खूसट को पूरा सम्मान प्रदान किया है ।

'रिंकू-पिंकू ! ' अन्दर जाकर मझले ने आवाज दी तो बच्चे दौडे चले आये थे चिल्लाते हुए, 'ग्रान्ड पा आ गये, ग्रान्ड पा आ गये ।' कैसे फूल से कोमल बच्चे । साफ-सुथरे, सुगधयुक्त । आते ही चरणो मे झुक गये थे । मझली बहू ने भी चरण छुए । थोडी देर बाद छोटका और उसकी पत्नी भी आ गये । देवी ने फोन से बुलाया था । दोनो ने चरण छू कर आशीर्वाद लिया । कितना मान सम्मान मिला था । कितना स्नेह । सारे गिले-शिकवे आत्मीयता के मधुर प्रवाह म बह गये थे । फिर भी उन्होने वहाँ खाया-पीया कुछ भी नहीं । एक रात भूखो रह कर मर नहीं जायगे । आदी हैं । काया को कलक तो नहीं लगेगा। उम्र भर की तपस्या और ईश्वर प्रदत्त ब्राह्मणत्व खण्डित तो नहीं होगा । बहाना बना लिया, 'आज मेरे पास है खाना ।'

छोटी चतुर थी । शीघ्र ही भाँप गई । मझली भी भोली नहीं थी । बल्कि भावुक थी । सुबह वे जब रवाना हुए तो मझली की आँख डबडबाई हुई थी । छोटी ने तो एक अनहोना प्रश्न करके उनके मस्तिष्क मे भूचाल ला दिया था, 'पिताजी, जाति मुख्य है या आचरण ?' उससे तुरन्त कोई उत्तर नहीं बन पडा । आखिर छोटी का मन्तव्य क्या है ? कहीं श्यामा वाली घटना ये लोग जान तो नहीं गये ? छोटी के स्थिर चेहरे पर प्रश्नवाचक चिह्न जडा देख उन्हे बमुश्किल अपने को बटोरना पडा था 'बेटी, जाति तो ईश्वर की दी हुई नियामत है । मनुष्य जिस जाति मे उत्पन्न हाता है उस जाति के विधि-विधान पालन करना उसका धर्म है ।'

'परन्तु ब्राह्मण कुल मे उत्पन्न होने पर भी जिसकी जिह्वा पर शूद्रता विराजमान हो, उसे आप क्या कहेगे ?'

उन्होंने राहत की सास ली । इशारा गाँव के जेठ-जिठानी की तरफ था । सास की ओर भी । ओह तो इनसे छिपी नहीं है, उनकी यातना और अपमानपूर्ण जिन्दगी ।

फिर भी उस समय तक बात इतनी बढ़ी नहीं थी । लेकिन अब तो अति हो गयी । सस्कारो को वाछित आध्यात्मिक गहराइ प्रदान करने के लिये मैंने क्या-क्या नहीं सिखाया इस लडके को । हनुमान चालीसा, दुर्गा सप्तशती, रामरक्षा श्लोक षाडषोपचार पूजा अचना, लेकिन सब बकार । घर म एक मन्दिर भी स्थापित किया । सुबह-शाम आरती भी करता है । किन्तु सब रट्टू विद्यार्थी के ज्ञान की तरह निष्फल । अरे इससे तो व दोना भ्रष्ट नास्तिक भले । एक बार घर-द्वार खतो-बाडी सब छोडकर गये तो पीछे मुडकर नहीं देखा । एक यह भक्त शिरोमणी, एक ही रट,कि सारी जमीन मेरे खाते कर दो । क्या भाई? दोना छोटों का क्या तेरी माँ साथ में लायी थी ? अरे, उनमे भी मेरा ही रक्त प्रवाहित होता है ।

वे कहाँ स चल थ और सोचते-सोचते कहाँ तक पहुँच गये । इसका एक लाभ यह हुआ कि अपमान और यातना की शापग्रस्त जिन्दगी से मुक्ति का उपाय उन्ह सूझने लगा । पहले उन्होंने कुल हित के लिय श्यामा से उसका घर त्याग करवाया था । नतीजा सामने है । अब वे अपने दु ख दर्दों की झूठी जड कुल मर्यादा का त्याग करेगे । इस सकल्प के साथ ही वे ऊर्जावान हो उठे । रात भर कानो मे छोटी बहू का यह शोखी भरा किन्तु बहुत गहरा प्रश्न गूजता रहा 'पिताजी, जाति मुख्य है या आचरण ?'

हरिशकरजी दूसरे दिन मुह अधेरे ही रवाना हो गय अपने दण्ड-कमण्डल, पोथी-पचाग लेकर । ग्यारह बज उनक सामने थी वही नेम -प्लेट जिन पर उनका भी नाम चढा हुआ था । छुट्टी का दिन था । सबस पहले बच्चा की नजर पडी । फ्रि तो ग्रान्ड पा आ गये, "ग्रान्ड पा आ गये" का मधुर गान गूजने लगा । उन्ह लगा कि उनकी शापग्रस्त जिदगी समाप्त हो गई ।

मझली बहू सिर पर पल्लू ढापती हुई आयी, चरणा म झुकन ही वाली थी कि बीच म थाम लिया, "बेटा पहले पानी पिलाओ इस बूढे को जोर की प्यास लगी है कहीं दम न निकल जाय ।"

मझली ठगी सी देखती रह गयी, "परन्तु ।"

"परन्तु-वरन्तु कुछ नहीं । जल्दी लाओ ।"

मझली बहू हवा मे उडती हुई गयी और विद्युत की गति से लाटा भर कर ले आयी । हरिशकरजी यो गटागट पीने लगे जैसे बहुत दिनो के प्यासे हो ।



भोर होने को है

रूपा पारीक

हमेशा की तरह उस दिन शाम को भी श्रीमती श्रद्धा शशाक छात्रावास क स्वागत-कक्ष मे बैठी थी । ये सत्र के शुरूआती दिन थे । नयी छात्राओ के प्रवेश का काम चल रहा था । छात्रावास के परकोटे का दरवाजा कमरे की खिडकी से दिखता था । हॉस्टल की चपरासन कमरे मे रखी टेबिल फूलदान आदि पाछ कर साफ कर रही थी । लडकियो की हँसी की आवाज सुनकर श्रद्धा ने खिडकी से देखा । एक चौबीस-पच्चीस साल का लडका एक लडकी के साथ स्वागत-कक्ष की ओर आ रहा था । श्रीमती श्रद्धा को ध्यान आया आज ही छात्रावास मे दो नयी लडकियाँ आने वाली हैं ।

"क्या मैं अन्दर आ सकता है ?" लडका कमरे के दरवाजे पर खडा था ।

श्रद्धा ने हाथ की पत्रिका को रखकर सिर हिलाया । वह लडका लडकी को साथ लेकर आ गया ।

"मनीषा जोशी आज ही हॉस्टल जॉयन कर रही है । मैं इसका भाई हूँ ।"

लडकी ने नमस्कार किया । श्रद्धा ने फीस की रसीदे और अन्य कागज देख । हॉस्टल की नियमावली उस लडके को दी । लडकी को कुछ आवश्यक बाते समझा कर चपरासन को बुलाया । हमेशा की तरह लडकी को कमरा बताने के लिये कहा और कमरे म साथ रहने वाली सीनियर लडकी को बुलवाया । वार्डन के लिये यह कोई नया काम नहीं था । हर साल नया लडकियाँ आती हैं और कमरे बताये जाते हैं । साथी छात्रा से परिचय कराया जाता है- और इसी की तरह दूसरी औपचारिक बाते भी निभाई जाती हैं । मनीषा का भाई उसका सामान पहुँचा कर जान लगा । मनीषा उदास हो गयी । प्राय सभी लडकियाँ पहले दिन बहुत उदास हो जाती हैं । कुछ ही ऐसी होती हैं जो स्वय को परिस्थितियो

के अनुसार ढाल लेती हैं । मनीषा के भाई के बाहर जाते ही लडकियाँ फिर हँस पड़ी । श्रद्धा मुस्करायी - लडकियाँ भी विचित्र होती हैं । लडका न हुआ चिडियाघर का खास आइटम हो गया ।

बाहर अंधेरा होने लगा था । श्रद्धा को याद आया एक और लडकी आने वाली है । शायद उसके अभिभावक उसे रात के खाने के बाद छोडने आये । प्राय ऐसा होता है। शाम की प्रार्थना का समय था । वे हॉल मे पहुँच गयी । घण्टी लगी और कार्यक्रम शुरू हो गया । सब कुछ रोज की तरह क्रमबद्ध था । श्रद्धा रात का राउण्ड पूरा कर हॉस्टल के पीछे की तरफ बने अपने घर मे आ गयीं । जल्दी सोना या यो कहें कि हॉस्टल के नियम के अनुसार सोना ही उनकी आदत है ताकि सुबह जल्दी उठकर सैर पर जा सके ।

वे जब सुबह सैर से लौट कर नास्ते की टेबल पर पहुँची ही थीं कि चोकीदार ने आकर कहा- "बहिनजी आप से कोई मिलने आया है ।"

"उन्हे हॉस्टल मे बिठाओ में अभी आती हूँ ।"

उन्होने जल्दी से थोडा नाश्ता किया और पैरो मे स्लीपर डाल कर हॉस्टल की इमारत की ओर चल दी, जाते-जाते उन्होने आवाज दी-" रामदीन ! चाय उधर ही ले आना देख लो कितने लोग हैं ।"

वे छात्रावास मे घुसीं तो उनकी नजर सोफे पर बैठे एक दम्पत्ति पर पडी । साथ मे एक लडकी थी । लडकी बहुत प्यारी है- श्रद्धा ने सोचा । उसकी आँखे सूजी हुई थीं । शायद वह खूब रोयी थी । उन्हे देख कर वे लोग खडे हो गये थे ।

"बैठिये-बैठिये। तो आप लोग मणि को छोडने आये हैं । मणि मेहता "श्रद्धा मुस्करायीं । कल जिन दो का प्रवेश हुआ था उनमे से एक मणि थी ।

मणि के माता-पिता ने सिर हिलाया । मणि ने उनकी ओर नहीं देखा । उसके भोले चेहरे पर गुस्सा दुःख भय सब बारी-बारी से अपनी झलक दिखा रहे थे । शायद इसे घर से बाहर रहना बिल्कुल पसद नहीं - श्रीमती श्रद्धा ने सोचा ।

"कभी हमसे दूर नहीं रही है ।" मणि की माँ बोलीं । "मुझे तीन साल के लिये नाइजीरिया जाना है । तब तक इसका ग्रेजुएशन हो जाएगा । इसकी माँ भी साथ जा रही है । बीच-बीच मे छुट्टियाँ लेकर आना हो सकेगा" मणि के पिता बता रहे थे ।

"हमसे बहुत नाराज है हमारी बेटी ।" मणि के पिता ने उसके सिर पर हाथ फेरा । मणि उनसे चिपक कर सुबकने लगी । उसकी माँ की आँखों में दो आँसू आ कर ठहर गये ।

"अब तीन साल आपको ही सम्भालना होगा । हमारी रिश्तेदारी मे भी दो लडकियाँ यहाँ रह कर पढी हैं । उनसे ही आपके बारे म सुना था ।" मणि की माँ कह रही थीं ।

तब तक चाय आ गयी थी । मणि ने चाय नहीं पी । मणि के माता-पिता उसके बारे मे छोटी-मोटी बाते बता रहे थे । जब वे मणि को छोडकर जाने लगे तो वह फिर सुबकने लगी । श्रद्धा का मन हुआ कि उसे सीने से लगा लें । पर व किस-किस को सीने से लगायेगी-लडकिया को छात्रावास मे रहना है पढाई पूरी करनी है । और उन्हे इसी तरह अकेला रहना है । वे यहाँ अकेली हैं । छात्रावास की लडकिया म घुलमिल कर रहना ही उनकी नियति है । माली- बावर्ची के परिवार की खबर रखना उनके दु ख-सुख मे हिस्सा लेना हॉस्टल के दूसरे काम, कॉलेज मे पढाना बागवानी सुबह की सैर-किताबो म खो जाना सगीत मे डूब जाना, बस इसके इर्दगिर्द घूमती हे उनकी जिदगी । मणि की तरह न जाने कितनी लडकियाँ आयीं ओर चली गयीं ।

मणि को जिस लडकी के साथ कमरा मिला था वह दो दिन के लिये घर गयी हुई थी । मणि के माता-पिता के आग्रह पर श्रीमती श्रद्धा दो दिन मणि को अपने घर सुलाने के लिये तैयार हो गयी थी । शाम की प्रार्थना के बाद मणि श्रद्धा के घर पहुँची । दरवाजे पर रुक कर उसने नेमप्लेट पढी । श्रीमती श्रद्धा "शशाक" । श्रद्धा ने उसे खिडकी से देख लिया था ।

"आ जाओ ।" उन्होने मणि के पूछने से पहले ही भीतर से कह दिया । मणि भीतर आकर चुपचाप सोफे के कोने पर बैठ गयी ।

"मणि ! इस तरह उदास रहने से काम नहीं चलेगा बेटे । अभी तो बहुत समय यहाँ रहना होगा ।" उन्हाने मणि के पास बैठ कर उसके सिर पर हाथ फेरा । मणि फूट-फूट कर रो पडी । उसने श्रद्धा की छाती मे अपना सिर गडा दिया । मणि के लिये शायद यह सब नया नहीं था । लेकिन वर्षों से नितान्त एकाकी रहने वाली श्रीमती श्रद्धा को इसकी आशा नहीं थी । मणि का इस तरह लिपट जाना उन्हे भीतर तक झकझोर गया लेकिन वे तुरन्त सम्भल गयीं । नहीं ! यह सुख मेरे लिये नहीं है । मुझे इस कोमल बधन मे नहीं बँधना है । मणि को चले जाना है । वह उनकी नहीं है । श्रीमती श्रद्धा सम्भल कर बैठ गयीं । शात जल म एक ककर पडा-लहरो ने किनारे को भिगोया और फिर सब कुछ धीरे-धीरे सामान्य हो गया ।

श्रद्धा ने रामदीन को मणि के लिये बिस्तर लगाने के लिये कहा । मणि दो दिन उनके ह घर सोयी । श्रद्धा लगभग बारह साल बाद ऐसे घर मे सोयी थी, जहाँ उसक और नौकरा के अलावा कोई तीसरा भी सोया था । कॉलेज म नयी आने वाली प्राध्यापिकाओ तक की व्यवस्था श्रद्धा हॉस्टल मे

ही करवा देती । उन्हे किराये का मकान मिलते ही वे चली जातीं । पर इस नन्हे योद्धा के सामने श्रद्धा का कोई हथियार काम न आया । दो दिन मे ही श्रीमती श्रद्धा को महसूस हुआ कि अपने आपको एकाकी कर लेने के बाद मणि जैसे प्यारे आगन्तुक की कोमल आहट को सुन पाना भी कितना असामान्य और मुश्किल सा हो जाता है । दो दिन बाद- तीसरे दिन रात को वे मणि के खाली बिस्तर को देखती रहीं । मणि चुपचाप नहीं सोती थी । सोते-सोते दो बार पूछ लेती थी- ''नींद आ गयी क्या ?'' रात को श्रद्धा की नींद खुलती तो नाइट लैम्प की रोशनी म मणि का चेहरा देखती, जो नींद मे और भी भोला हो जाता । दूसरे दिन तो उन्हाने मणि को आधी रात गये चादर भी ओढ़ाई थी अगस्त की बरसाती हवाएँ बहुत ठण्डी थीं और फिर हॉस्टल शहर से कुछ ऊँचाई पर बना है । मणि ने अपने सिकुडे हाथ-पैर फैला लिये थे ।

तीसरा दिन बीत गया और श्रद्धा सामान्य हो गयी । चौथे दिन वे सोने की तैयारी मे ही थीं कि उनके दरवाजे पर आहट हुई- ''क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ ?'' यह मणि थी ।

''क्या बात है मणि ?''

''मुझे डर लग रहा है ।''

उस रात तेज बरसाती हवाएँ चल रही थी । मणि की कमरे की साथी छात्रा लौटी नहीं थी । श्रीमती श्रद्धा ने जी कडा करके कहा- ''मणि, आखिर तो तुम्हे अपने कमरे मे सोने की आदत डालनी होगी, ऐसा कब तक चलेगा ।''

मणि लोटी नहीं, दरवाजे पर सिर झुकाये खडी रही । श्रद्धा को अपनी कच्ची उमर के दिन याद हो आये जब वे आँधी मे झूमते पेडो से डरती थीं- बादलो के शोर से बचने के लिये कान मे अँगुली ठूँस लेती थीं- बरसाती हवाओ की साँय-साँय मे ताई से चिपक कर सोती थीं । जिस काम के लिये हाथ बढातीं वह काम कर नहीं पाती क्योकि ऐसा लगता मानो तूफान के थपेडो ने उसका कलेजा हाथ की अँगुलियो तक खींच दिया हो और हाथ करता है धक्-धक् ।

मणि को उन्होंने हिदायत दी कि आज के बाद तुम अपने कमरे मे सोओगी । मणि ने जवाब नहीं दिया । दोनो बत्ती बुझाकर सो गयीं । श्रद्धा को जल्दी ही नींद आ गयी । थोडी देर बाद बारिस के शोर से उनकी नींद खुल गयी । उन्होने उठकर खिडकी बद की । उनकी नजर मणि के बिस्तर पर गयी । वह सोयी नहीं थी कान मे अँगुली डाले डरी-डरी-सी तकियो के सहारे बैठी थी । उनका दिल भर आया । उन्होने पास जाकर मणि को सहलाया- ''मणि बेटे । सोयी नहीं ?'' मणि उनसे चिपक गयी डरे हुए मृग-छौने-सी । और बस उसी दिन से उस नन्हे योद्धा को श्रीमती श्रद्धा ''शशाक'' रूपी पत्थर के किले का प्रवेश द्वार मिल गया था- किला जो भीतर से जीवन की सुगबुगाहटो

से भरपूर था किन्तु अनछुआ, जहाँ अब तक प्रवेश वर्जित था । बहुत पहले शायद किसी की अँगुलियो के निशान बन हो जिन्हे समय ने पोछ दिया हो- या शायद उन अँगुलियो के निशानो को कोई पोछ न दे इसी डर से प्रवेश वर्जित था । हर किसी को मिला भी तो नहीं- प्रवेश द्वार ।

सवेरे उठते ही श्रद्धा ने कहा- "मणि अब तो नहीं आओगी यहाँ सोने?" "कभी-कभी आऊँगी दीदी । अभी तो तीन साल बिताने हैं यहाँ ।" और इस तरह उसने श्रद्धा को दीदी कहने का अधिकार पा लिया । बहुत साल पहले उन्होने बिट्टो, श्रद्ध जैस सम्बोधनो की मिठास को महसूस किया था । अब तो बस वे मैडम थीं ।

उस दिन के बाद वे प्राय शाम को जब कॉलेज से लौटती तो बरामदे मे मणि बैठी मिलती- "दीदी । बस आपका ही इन्तजार कर रही थी ।"

श्रद्धा उसकी पढाई की चर्चा करती, देश-विदेश की सामयिक घटनाओ पर बहस होती । अब तो मणि रात को भी दो-चार दिन से आ जाती । चुपचाप बैठी श्रद्धा को पढता हुआ देखती और फिर वापस लौट जाती ।

क्लास टेस्ट हो रहे थे । उस दिन रात को मणि आयी तो श्रद्धा ने कहा- "चलो अपने कमरे मे । पढाई करो- अच्छे नम्बर नहीं लान क्या ?"

मणि पहले फर्श ताकती रही फिर बोली- "यदि आपकी लडकी हाती तो आप जरूर उसे पास बिठा कर पता करती कि कितनी पढाई हुई है । आपके बच्चे कहाँ है दीदी?" श्रद्धा चुप रही । मणि जानती थी कि अब उसे भी आगे कुछ नहीं कहना है, वह थोडी देर ठहर कर लौट गयी, श्रद्धा को अकेला छोड कर ।

उस दिन छुट्टी का दिन था । शाम को लडकियाँ टोली बनाकर बाजार गयी थीं । मणि उनके पास चली आयी । व दर तक बाहर लॉन मे बैठी रहीं । उन्होने साथ चाय पी । श्रद्धा ने उसे अर्थशास्त्र का एक पाठ पढाया । मणि ने बहुत-सी बाते की अपने परिवार के बारे मे, आखिर मणि ने पूछ ही लिया- "दीदी क्या उनका नाम "शशाक" था ।" मणि अक्सर कुछ खास बाते बिना भूमिका के कह दती है । श्रद्धा ने अपना चेहरा दूसरी तरफ कर लिया- "आज-ठड कुछ ज्यादा है ।" वे बोलीं- और मणि समझ गयी कि उस चुप हो जाना चाहिये । पर सिर्फ इन बातो से डर कर मणि का अतिक्रमण समाप्त नहीं हो गया । वह जब तब मौका ढूँढ कर उस पत्थर क किले म सजी किसी-न-किसी अनमोल कृति के बारे मे पूछ बैठती थी । थोडे दिनो बाद वह सुबह की सैर म भी श्रद्धा की स्थायी साथी हो गयी । इस प्रकार मणि को हॉस्टल

लाइफ चल रही थी कि एक दिन हॉस्टल के पते पर एक लडकी के नाम प्रेम-पत्र आया था । श्रद्धा ने पूरी कोशिश की कि बात हॉस्टल मे न फैले । उन्होंने रजनी को बुलाकर समझाया । यह घटना श्रीमती श्रद्धा के लिये हॉस्टल के अन्य मामलो की तरह ही थी । उस दिन शाम को मणि प्रार्थना के बाद उनके पास आयी । "दीदी ! रजनी बहुत अच्छी लडकी है ।"

श्रद्धा चौंकी- "तो ?"

"आपको तो सब मालूम है । रजनी मेरी दोस्त है ।" मणि चुप हो गयी । श्रद्धा मन-ही-मन मुस्करायी । "ये लडके इतने गदे क्यो होते हैं ? बेचारी लडकियाँ कितनी परेशान होती हैं । मेरा मन करता है इन लडको को डण्डो से पिटवाऊँ ।"

श्रद्धा गम्भीर हो गयी- मणि का सोचना कितना अपरिपक्व है । क्या इन लडको से बचकर रहना ही लडकियो का जीवन है ? श्रद्धा का मन हुआ मणि से पूछे । शायद यह मणि की उम्र और पारिवारिक माहौल का प्रभाव हैं । पर कभी अचानक स्वय मणि को भी । नहीं । नहीं । मैं भी क्या सोचने लगी ।

"मणि क्या सभी लडक बुरे होते हैं ? या सभी लडकियाँ अच्छी होती है ? मैंने तो सुना है कि प्रेम को ईश्वर का दर्जा दिया जाता है ।" श्रद्धा ने बात को अधूरा छोड दिया । "अच्छा बताओ कोर्स कितना हो गया ? पढाई कैसी चल रही है ?"

"बहुत अच्छी ।"

"हूँ । खूब पढाई करो,समझीं । तुम्हे तो आई ए एस बनना है क्यो ?" श्रद्धा ने बात को मोड दिया । "तुम कहा करती हो न कि तुम्हारे पिताजी तुम्हे बहुत बडा अफसर बनायेगे । फिर तुम्हे कितनी खुशियाँ मिलगी ।"

"क्या आई ए एस ही खुश रह सकता है दीदी । क्या आप खुश नहीं हैं ? आप तो आई ए एस नहीं हैं पर आपक पास कितनी शान्ति है, सुख है । मैं तो आप जैसी बनूँगी ।"

श्रद्धा सकपका गयी- तो यह सब सोचती है मणि ! वह अब नासमझ किशोरी नहीं है । उन्होने सोचा-मेरी बच्ची,तुम्ह क्या मालूम कि मेरे पास क्या है- क्या नहीं ?

मणि बोलती जा रही थी- "मदर टरसा क बारे म सोचती हूँ मैं । दूसरो का दु ख बाँटो इसी मे सुख है ।" श्रद्धा चुप रही । जी म आया बोल- "दूसरो का दद बाँटने म सब कुछ खोना पडता है और यह भी नि स्वाथ कहाँ हो पाता है- हम महान त्यागी कहलाना चाहते हैं ।" लेकिन व बोली नहीं बस मदर टेरसा की उपासिका को दखती रहीं ।

यूँ ही दिन बीतते रहे। मणि अब अंतिम वर्ष में थी। वह अब श्रीमती श्रद्धा से बहुत कम मिलती थी। क्योंकि उसे भी मालूम था कि अब कुछ समय बाद यह हॉस्टल छूट जायगा। पर न जाने इस अलग रहने की कोशिश ने या अतिरिक्त सतर्कता ने उन दोनों को प्रत्यक्ष में दूर किन्तु हृदय से पास कर दिया था। उन्हें मिले कई-कई दिन हो जाते। एक शाम जब वे कॉलेज से लौटी तो मणि उन्हें बरामदे में बैठी मिली। यह कोई नयी बात नहीं थी लेकिन नया था मणि का उदास चेहरा। पीली आँख और उनमें विशेष चमक। मणि ने कुछ कहा नहीं था किन्तु श्रद्धा का दिल अजानी बात से ही कँपकँपा सा गया। उन्होंने ताला खोला। चुपचाप भीतर आ गयीं। उन्होंने चाय का पानी चढ़ाया और कपड़े बदलने चली गयीं। चाय लेकर लौटी तो मणि शून्य में ताक रही थी। उनके आते ही, जैसी की मणि की आदत थी बिना भूमिका गम्भीर-से-गम्भीर बात कहने की- इसी क्रम में मणि उठी और किताबों की अलमारी तक पहुँच कर किताबों को छूते हुए कहने लगी- "दीदी, मैं आपसे कुछ नहीं छिपा सकती। मेरी सहेली कुसुम के भाई का दोस्त है आकाश। मैं " वह अचानक पलटी और श्रद्धा की गोद में सिर रख कर सुबकने लगी। श्रद्धा जहाँ की तहाँ बैठी रह गयी। चाय ठंडी होती रही। श्रद्धा और मणि दोनों खामोश थीं। फिर कुछ देर बाद मणि सीधे बैठ कर बोली- "मुझे कुछ नहीं मालूम दीदी, पर मैं उसके बिना ।"

"कब से " श्रद्धा ने पूछा।

मणि कुछ नहीं बोली।

श्रद्धा सोच रही थी- मणि ! तुम मेरे जैसी बनोगी, यही चाहती थी ना तुम ! तुम बनोगी नयी श्रीमती या सिर्फ ।

"जाओ अपने कमरे में आराम करो।" श्रद्धा प्रत्यक्ष बोली।

वह चली गयी, श्रद्धा देर तक बैठी सोचती रही। तनाव बढ़ता गया। उन्होंने दोनों हाथों से सिर पकड़ लिया- "मैं मैं क्या कर सकती हूँ। मणि तुमने खुद चुना है यह रास्ता। तुम्हें श्रृंगार के लिये मोगरे नहीं गुलाब चाहिये। वे मुरझा जायेंगे तो केवल खुशबू नहीं छोड़ेंगे, साथ होंगे काँटे-सूखे-पहले से अधिक चुभन वाले, और रह जायेगी टीस।

रात जब वे सोने लगीं तो दिमाग फिर चौकन्ना हो गया- मणि का क्या होगा ? परीक्षा के दो-ढाई महीने खास पढ़ाई के दिन हैं- पिछली बार जब मणि की माँ आयी थी तो कह रही थीं कि मणि के लिये एक चार्टर्ड एकाउटैंट लड़का देखा है। उसके ग्रेजुएट होते ही हाथ पीले कर देंगे। श्रद्धा की हिम्मत जवाब देने लगी। उन्होंने रामदीन को भेज कर मणि को बुलवाया।

वह आयी और सिर झुकाये कुर्सी पर बैठ गयी । श्रद्धा को सूझा ही नहीं कि बात कैसे शुरू करे ? आखिर बोली- "तुम क्या कह रही थी शाम को, सहेली के भाई का दोस्त काफी दूर का रिश्ता है ।" उन्होने हँसने-हँसाने की कोशिश की । "तुम सुनाती हो ना एक शेर- "इश्क ने गालिब" श्रद्धा अभी बोल ही रही थी कि मणि मानो फट पडी- "मजाक नहीं दीदी आपने कभी जाना भी है कि ।"

"मणि ।" श्रद्धा दबी चीख के स्वर मे बोलीं,"आगे मत बोलना मणि ।" वे इस आघात को सह नहीं पायी । आँखो से टप-टप आँसू चू पडे । मणि इस स्थिति के लिये तैयार नहीं थी बल्कि यह उसकी कल्पना से बाहर था । उसने श्रद्धा को झकझोरा-" दीदी ! दीदी! मुझे माफ कर दो । मैं आपको दुःख पहुँचाना नहीं चाहती थी।मैं-मैं तो " धीरे-धीरे श्रद्धा सामान्य हो गयी ।

"अब तो मुझे तुम्हे बताना ही पडेगा । मणि तुम्हारे लिये आकाश आया है श्रद्धा के लिये भी कोई आया था । तुम्हारे बारे मे पूरा नहीं जानती पर अपना बताती हूँ । हमारे पडोस मे एक लडकी थी । मैं उसे बहुत प्यार करती थी और सुधांशु उसी के लिये आया था । मुझे अच्छा लगा कि मैं किन्हीं दो को मिलाने का काम कर रही हूँ । पर अचानक कब कैसे वह मेरी ओर बढ गया । मेरे अन्दर सब कुछ तिल-तिल जलने लगा । मेरे हर क्षण पर उसके विचारो का अधिकार होता गया । मेरे जीवन मे वही दिन थे कुछ करने के-मैं सब कुछ भूल गयी । कुछ रचनात्मक करने की सभावनाएँ दिवा स्वप्न मे खो गयी । कितना आकर्षण होता है उन भावनाओ मे मैं भी उससे उबर नहीं पायी । मील के पत्थरो को पार करने वाली मैं एक मरीचिका मे फँसी एक खूबसूरत दायरे मे ही गोल-गोल घूमती रही । मँजिल खोती चली गयी । जो मन प्यार चाहता है वह थोडे से प्यार को पाकर बहुत खुश होता है और फिर सवेदनशील लडकियो के तो कहने ही क्या । मैं पगलायी सी रहती खाने-सोने की चिन्ता ही नहीं थी प्यार की शक्ति को तब मैने पहचाना था । मुझे जीवन इतना अच्छा लगा कि मानो वे मीठी-मीठी बात ही जीवन का परम लक्ष्य हो । तब मैं भी तुम्हारी तरह बेबस हो गयी तो सारी बात अपनी ताई से कह दी व मुझे समझती थीं । । उन्होने मेरी मिटती भूख देखी थी अकेले मे गुनगुनाना सुना था, हवा मे उडते हुए चलना देखा था । मुझे उन्होने आश्वासन दिया । मुझे भी उन पर पूरा भरोसा था । कच्ची उमर की उन भावनाओ को अब पलट कर देखती हूँ तो कोई सुगबुगाहट नहीं होती । लेकिन तब एक बार सुधांशु ने कहा था-" आप को छू भी लूँगा तो फिर मेरे हाथ किसी को छूकर स्पर्श का अहसास खोना नहीं चाहेंगे । "

मैं शर्म से लाल हो रही थी, जी हुआ, कहूँ कि तुमने जो कहा है वह छू लेने से कहीं ज्यादा है । मुझे अपना बना लेना सुधाशु,नहीं तो मैं मर जाऊँगी । मुझे लगता कि मैं हर पल उनींदी सी रहती हूँ । मैं तो सचमुच अन्दर स निष्प्राण हो गई थी जिसे कवल सुधाशु हो जिला सकता था । कुछ भी न करना ठहर जाना तो मरने से कहीं बुरा है । और शायद मुझे मरना ही था। एक दिन अचानक पडास की लडकी आयी और सकुचाते-सकुचाते बताने लगी सुधाशु उसे कितना ार करता है, वह तो तन-मन से उसकी हो चुकी है ।

मैं बहाश ह हाते बची । लगता था कि वही बातें सुधाशु न उसस कही हैं । वह लडको इतनी भोली थी कि उस पर अविश्वास किया ही नहीं जा सकता था । दिल शायद काँच का ही होता है जो उस दिन टूट गया । मैंन उस असहज पीडा कोअनुभव किया-मैंने पीडा से बचने के लिये अपनी अँगुलिया पर घाव किये और देर तक रिसते खून को देखती रही । मन होता सुधाशु का गला दबा कर कहूँ कि उसे क्या हक था मेरे भीतर की क्षमताओ आर विशेषताआ की हत्या करने का ? ऐसे हत्यारो को सजा देने के लिये अदालतें नहीं होती। पर मैंन कुछ नहीं किया, सुधाशु को सिर्फ इतना कहा, ''तुमने मुझे नींद से जागने का मौका नहीं दिया किन्तु मैं अब ठीक हूँ । लेकिन एक और नाजुक फूल को मुरझाने नहीं देना, उसके ता हो ही जाना ।''

दरअसल मैं मर चुकी थी । सच्चा प्यार शक्ति देता है तो झूठा प्यार कितना घातक होता है । और सच माना मणि, इस दुनिया मे झुठ ही झुठ है । इसमें ही जब सच्चा प्यार मिलता है तो पता चलता है कि स्वर्ग यहीं है-इस दुनिया मे ही । मैं बीमार होती चली गयी, बिना किसी रोग के भी रोगिणी । ताई तरह-तरह के अनुमान लगाने लगी । एक दिन छाती से लगाकर बोली- ''बिट्टा तू जिसके लिये जल रही है, चल मैं उसके पास चलती हूँ । '' मैंने कहा- ''किस की बात कर रही हो ताई- वह मेरा नहीं है ।'' ताई सुधाशु को गालियाँ निकालन लगी । मैंने ही उन्हे समझाया कि जो हुआ सो हुआ ।

ताई बीमार तो रहती ही थीं, अपनी बिट्टो के दु ख ने उन्हे निढाल कर दिया। वे मुझसे शादी की जिद्द करने लगीं । मैंने अपने आपको सभाला लकिन दर हो चुकी थी । ताई फिर न सँभली, आखिर मेरी शादी देखने की जिद्द करते हुए, मेरी शादी देखकर छ दिन बाद ही इस ससार से किनारा कर लिया । व जानती थी कि उनके न रहने पर मुझे शादी के लिये कोई भी तैयार नहीं कर सकेगा । मरी शादी किन्हीं बसत साहब से हो गयी । वे देवता थे उन्हाने मुझे बताया कि प्यार क्या होता है । मैं बीती बातो को भूलने लगी । घाव भरने लगे मृत भावनाएँ-क्षमताएँ सब पर बसत ने मानो अमृत के छींटे दे दिये हो । लेकिन मैं अभिशप्त थी अभिशप्त ही रही । शादी के लगभग दो साल बाद ही बसत की एक कार दुर्घटना मे मृत्यु हो गयी ।

तुमने पूछा था न कि उनका नाम शशाक था क्या ? दरअसल उन्हे यह नाम पसद था और वह अपना नाम शशाक ही रखना चाहते थे । अपनी तसल्ली के लिये उन्होने यह नाम मुझे दिया । शशाक सुधाशु का ही दूसरा नाम होता है । उन्हे क्या पता था कि एक शशाक ने ही कभी मुझे खत्म कर दिया था जिसे दूसरे शशाक ने ही जीवन दिया ।

बसत की मृत्यु के बाद मैंने अपने आपको धीरे-धीरे पीहर-ससुराल के नाता स दूर कर लिया । और अब यहाँ हूँ अपने इस बड परिवार म-तुम लडकियो के बीच श्रीमती श्रद्धा शशाक । मैं तुम्हे जीते जी मरने नहीं दूँगी । तुम्हारे आकाश से मिलूँगी । शायद तुम्हे आकाश के रूप म कोइ फरिश्ता मिला हो-जरूरी तो नहीं, सब सुधाशु हो । "

मणि चुपचाप सुनती रही । रात बहुत हो गयी थी, वह श्रद्धा के पास ही सो गयी थी। श्रद्धा दूसरे दिन ही आकाश से मिली । उसने मणि और आकाश के सबधो को तनाव और आवेग से बचाने का प्रयास किया जिससे मणि की पढाई मे बाधा न आये । उसने आकाश को भी परखा । वह सुधाशु की तरह नहीं हो सकता । सब कुछ ठीक है-लेकिन मणि की माँ तो फैसला कर चुकी हैं । और कौन जाने मणि के लिये भी यह कच्ची उमर का जुनून हो ।

धीरे-धीरे मणि के आखिरी पेपर का दिन आ गया । मणि को तो श्रद्धा ने सामान्य बनाये रखा लेकिन स्वय एक अनकही उलझन म फँस गयी । वे परेशान थीं । किन्तु ईश्वर ने उन्हे परेशानियो से बचने के लिये थोडा समय दे दिया । मणि के पिता का पत्र आया था कि वे पद्रह दिन और नाइजीरिया रूकेगे तब तक मणि उनके पास ही रहे ऐसा उनका आग्रह था । श्रद्धा को समय मिल गया था । मणि की परीक्षा भी खत्म हो चुकी थी । उन्होने उसे बुलाकर साफ-साफ बता दिया कि उसकी माँ ने उसके लिये लडका ढूँढ लिया है। इस सबध मे वे मणि के लिये कुछ भी नहीं कर पायेगी । यह सब उमर का बहाव है शादी के बाद सब ठीक हो जायगा । मणि ने सब कुछ सुना और चली गयी । श्रद्धा आकाश से भी मिली और सब कुछ समझा दिया । वह हक्का-बक्का सा उन्हे देखता रहा किन्तु उपाय ही क्या था ।

दूसरे दिन श्रद्धा के पास मणि की अर्जी आयी-हॉस्टल से बाहर जाने की इजाजत माँगी थी नीचे आकाश के घर का पता था । यह पहली बार हुआ था कि मणि ने अर्जी लिखी । श्रद्धा को लगा कि अक्षर उन्हे मुँह चिढा रहे हैं । उन्होने आवेश म अर्जी फाड दी ।

अब तो रोज सुबह-शाम उसकी अर्जी आती । श्रद्धा किसी अजाने भय से ग्रसित होती गयी । वे मणि पर नजर रखने लगीं । कभी चोकीदार कभी कोई लडकी उसकी खबर देता रहती । आधे से ज्यादा हॉस्टल खाली

हो गया था । अंतिम वर्ष होने के कारण मणि को अलग कमरा मिला हुआ था । श्रद्धा को मालूम चला कि उसके कमरे का दरवाजा चौबीस घंटे मे दो-चार बार दस पंद्रह मिनिट को खुलता है । अर्जियो का सिलसिला पाँच दिन चला फिर बंद, छठे दिन एक लडकी ने आकर बताया मणि को तेज बुखार है। उन्होने लडकियो के साथ डॉक्टर को उसके कमरे मे भेजा, लेकिन स्वयं उनकी हिम्मत नहीं हुई । मणि ने चुपचाप दवाइयां ले ली थीं अब श्रद्धा स्वयं बीमार होने लगी । "हे ईश्वर ! यह कैसी परीक्षा।"

दो दिन बाद उन्हे पता चला कि मणि का कमरा बाहर से बंद है- कहाँ गयी मणि? उन्होने चोकीदार को डाँट लगायी- ध्यान नहीं रखते । बदहवास सी आकाश के घर जाकर आयी । लौटी तो मणि बरामदे मे इंतजार करती मिली । उसके चेहरे पर तीखी मुस्कान थी ।

"मुझ पर भरोसा नहीं था दीदी । मन्दिर गयी थी, लीजिये प्रसाद ! अब आपसे कुछ न कहूँगी । आप पर कोई आक्षेप भी न लगने दूँगी । यही चाहती हैं न आप-अपनी लडाई खुद लडूँगी । जब आपने साथ छोडा तो लगा कि कोई भी अपना नहीं है शायद आकाश भी कुछ न कर सके । दीदी मुझे आकाश चाहिये मेरे भरोसे, किसी और के भरोसे नहीं । यह मेरा निर्णय है। मैं खुद ही इस निणय को बदलने की अधिकारी हूँ कोई ओर नहीं ।"

श्रद्धा ने जैसे- तैसे ताला खोला और सोफे पर निढाल पड गयीं । मणि चली गयी । टेबिल पर प्रसाद पडा था । रामदीन ने आधे घंटे बाद देखा तो घबरा गया । दौड कर डॉक्टर को बुला लाया । डॉक्टर दवा देकर चला गया । शाम को मणि आयी और सेवा म लग गयी -मौन अर्चना । तीन दिन तक श्रद्धा मणि को अपने आगे-पीछे घूमते देखती रही । उनकी हिम्मत नहीं थी उससे बात करने को । श्रद्धा की तबियत सँभल गयी थी । कल मणि के पिता उसे लेने आयग । श्रद्धा का मन भर आता है । वे रात गये कमरे की खिडकी से शहर की टिमटिमाती रोशनी देख रही थीं । रोशनी मानो झील मे तैर उठी । उन्होने अपनी आँखें पोछो और स्लीपर पहन कर मणि के कमरे की ओर बढ गयी ।

आहट होत हो मणि ने दरवाजा खोल दिया मानो जागकर उन्हीं का इन्तजार कर रही हो ।

" मैं हार गयी मणि । "

मणि उनके गले लग गयी ।

" आप कहाँ हारीं आपने तो लडना सिखाया है दीदी ।" "मैं तुम्हारे लिये क्या करूँ मणि ? " उन्होने भीतर आकर कहा ।

मणि ने उनके कन्धे पर सिर रख दिया- "दीदी मैं ठीक हूँ, बिल्कुल ठीक । मुझे खुद पर भरोसा है । आप मिल गयी हैं वापस, तो आकाश भी मुझे मिलेगा यदि वह मेरा है तो । और कभी मुझे लगा कि मैं ही आकाश को समर्पित हो जाऊँ तो हिचकिचाऊँगी नहीं । मुझे जीना आता है दीदी, आपने ही तो सिखाया । "

लगभग भोर के पहले श्रद्धा मणि के कमरे से निकली । " कल मैं और तुम दोनों मिलकर तुम्हारे पिता से बात करेंगे ।"

मणि मुस्कुरायी-"अब मैं थोड़ा सोऊँगी दीदी । हॉस्टल की घण्टी पर न उठूँ तो डाँटना नहीं ।" श्रद्धा अपने घर आ रही थी । आकाश मे भोर का तारा चमक रहा था।



गंगोली बाबू

लोकेश झा

जीवन के दशक एक के बाद एक व्यतीत होते चले जाते हैं । समय एव परिस्थिति के अनुसार कई-कई रूप कई-कई रग, बनते-बिगडते रहते हैं, व्यक्ति के और उसकी आत्म छवि के । यह रूप रग आते-जाते ऐसी छाप छोड जाते हैं जो स्मृति पटल पर अकित होकर अनजाने ही अविस्मृत रहे जाते हैं । अदृश्य छाप आहिस्ता-आहिस्ता अतीत बन जाती है, और शायद इनका ही रूप इतिहास ले लेता है । यह आवश्यक नहीं कि इतिहास किसी महान विभूति, राज-रजवाडे या देश-विदेश के भौगोलिक परिवेश के ही बनते हैं । देखा जाय तो पत्येक जीव, निर्जीव का व्यक्तित्व इतिहास के पन्नो से ही लिपटा रहता है । ऐसी ही एक स्मृति मेरे मानस पटल पर छायी रही है । इसके पन्ने अब तक या तो खो गये थे या कहिये किसी गर्द की परत मे दब गये थे । आज इसकी गर्द का सामयिक तूफान कहीं उडा ले गया है । इसलिये मुझे बीता हुआ कल बहुत कुछ स्पष्ट दिखाई दे रहा है । मेरे आगे इतिहास के पन्ने फडफडाकर एक के बाद एक खुलते चले जा रहे हैं ।

वर्षों बाद गाँव आना हुआ है । कहने को तो यह गाँव है । खेती-बाडी, किसान, पशु, पेड-पौधे, क्यारी-बगीची सब कुछ है यहाँ, साथ ही शहरी सुविधाएँ बिजली, पानी, बैंक एव बडी स्कूल भी यहाँ है । रल्वे स्टेशन तो बहुत पहले से ही है यहाँ । स्टेशन मास्टर गाँव से बाहर पढने के लिये गये थे जो शहरी बनकर ही रह गये । बाद मे पिताजी का तबादला बबई हो गया, तो शेष सदस्य भी बबई चले गये और इस तरह हम सब का नाता गाँव से टूट गया । पिताजी के एक चाचा जो कि खेती-बाडी करते थे, यहीं रह- लेकिन यहाँ के बारे मे कुछ बाते अभी भी मुझे याद हैं ।

उस समय ब्रिटिश शासन था किन्तु मुझे कोई खास जानकारी नहीं थी कि किसका राज है, या किसका होना चाहिये ? हाँ इतना याद है कि हम

लोग आजाद होने वाले थे । रोज जुलूस निकलते, नारे लगते, बाजार बद हो जाते और कर्फ्यू लग जाता था । पुलिस सीटी बजा-बजा कर इधर-उधर घूमती थी । स्कूल की छुट्टी हो जाती थी । कभी सुनाई देता मस्जिद के आगे दगा हो गया तो कभी मन्दिर के आगे, कहीं गोली चल जाती थी तो कहीं लाठी। गाधीजी का सत्याग्रह चल रहा है, देश आजाद होने वाला है, गोरे लोग चले जाएगे । मैं बहुत खुश होती थी कि अब ये बगले हम लोगो को रहने के लिये मिल जायेगे । सोचती कितना अच्छा होने वाला है लाल मुह वाले गोरे चले जायेगे । वैसे भी ये गोरे मुझे बहुत बुरे लगते थे । कभी स्टेशन पर या बाजार मे मुझे कोई गोरा दिख जाता तो मुझे बडा डर लगता था । गली मोहल्ले मे हम सब बच्चे टोली बना-बना कर खेलते थे । कभी-कभी खेलत-खेलते हम बच्चा की टोलिया चौराहे, बाजार, रेल्वे फाटक तक चली जाती थीं । हम सब मिलकर बडे जोर-जोर से चिल्लाते- "गोरा गोश रोटी खाय, अपनी मैम को नचाया" पता नहीं वो हमारी बात समझते या नहीं परन्तु हम तो अपने मन की भडास निकालते थे और ये कह कर वहाँ से ऐसे भागते थे कि न जाने हमने कौनसा अपराध कर दिया है, और पता नहीं ये गोरे हम क्या सजा दे दे ? यद्यपि उस समय मैं भी इस पक्ति का अर्थ नहीं समझती थी, तो भी हम सब के सब भदड-भदड वहाँ से ऐसे भागते कि घर आकर ही सास लेते । इस धकापेल मे एकाध गिर जाता किसी की कोहनी छिल जाती तो किसी के घुटने । बडा हाल-बेहाल हो जाता परन्तु मन को एक बडी सतुष्टि मिलती थी । हम सोचते हमने कितना रोब दिखा दिया है ? गोरे और उसकी मेम पर । उस जमाने मे अग्रेजो का रोब-रुतबा बहुत ज्यादा था । हम लोग उनके आगे साब-साब कहते भीगी बिल्ली की तरह हाथ जोडे उनके पीछे रहते थे । इन गोरे साहबो के पास यदि कोई बाबू होता तो उसका भी रोब-रुतबा कम न होता था ।

ऐसे ही थे एक गगोली बाबू । वैसे गगोली बाबू का शारीरिक गठन कोई खास प्रभावशाली नहीं था । अजीब ही आकृति थी उनकी । एकदम पतले सात फीट लबे और बिल्कुल काले, चेहरा छोटा और गोल छोटी मुखाकृति पर ऊँची उठी हुई काली मूछे । जब वे धूप का चश्मा लगाकर हाथ में अपनी घडी लेकर बाहर निकलते तो लगता जैसे कोई खेत म खडा बिजूका हो या पैर मे बैशाखी बाधे कोई नट चला आ रहा हो । गगोली बाबू के कोई सन्तान नहीं थी । उन्हे दूसरो के बच्चे भी अच्छे नहीं लगते थे । बच्चो का शोरगुल उनकी चुहलबाजी उन्हे कभी नहीं सुहाती थी । गली के बच्चे भी उनसे डरते थे । कहते थे उनकी पत्नी का स्वर्गवास भी निसन्तान होने के गम म बीमार रहने के कारण हुआ था । मुझे उनकी पत्नी की बहुत थोडी सी याद है । एकाध

बार दीवार पर चढकर, झाक कर देखा था । चूल्हे पर गर्म-गर्म रोटी सेंक कर चिमटे से ही गगोली बाबू को पकडाती थी । इनके यहाँ लीलाबाइ नाम की एक नौकरानी थी । पहले वह झाड़-पोंछा, बर्तन सफाई, का काम करती थी किन्तु गगोलन के मरने के बाद से वह गगोली बाबू का सारा काम करने लगी थी । लीलाबाई बडी सुन्दर, आकर्षक मनमोहिनी थी । गोरा रग तीखे नैन -नक्श, दाँतो मे काली मिस्सी, आँखो मे काजल डाले एक गाठ का जूडा बाधती थी । किनारवाली लाघदार साडी पहनती और उँगलियो म छल्ले की तरह बिछुये पहनकर महाराष्ट्रियन की तरह लगती थी । उसकी ठोडी पर एक काला मस्सा था । उससे वह और भी सुन्दर लगती थी । मैं अक्सर मेरी सहेली चपा के घर की दीवार पर चढकर लीलाबाई को झाककर देखती और कहती- "लीलाबाई फूल दो" - "नहीं, नहीं- राज फूल नहीं मागने का- अभी बाबूजी आयेगा मारेगा चलो भागो दीवार पर नहीं चढने का ।" इस प्रकार मीठी झिडकिया देकर वह हम सब लडकियो को भगा देती थी और कभी उसका मन होता तो फूल दे देती थी । उन फूलो का सूघ-सूघ कर मैं बहुत खुश होती थी। कभी-कभी हम उन फूलों का दीवार पर बनी हुई साझी म लगा कर सजाते थे । एक दिन मैंने कहा- "लीलाबाइ ! बाबूजी कितनी तनख्वाह देते हैं तुम्हें ?

"तुमको क्या ?"

"आठ रुपया देता है- बोलो क्या करेगा? बेमतलब बात नहीं करने का- चलो, जाओ उतरो, दीवार पर नहीं चढने का है । "

हम लोग गगोली बाबू के घर म दीवार पर चढ कर झाकते हैं, यह बात पूरे मोहल्ले म फैल गई थी । दादाजी ने मुझे बहुत डाटा था- "लीलाबाई से क्या बात करती हो ? क्या झाकते हो वहाँ ? खबरदार- अब कभी वहाँ देखा ।" दादाजी की डाट के कारण मैं कई दिनो तक चपा के घर नहीं गई । दो-चार दिन निकले की हुडक सी उठी और मैं फिर वहाँ जा पहुँची? इस प्रकार मेरा वहाँ फिर आना-जाना शुरू हो गया, फिर वही बाते- "लीलाबाई- लीलाबाई क्या करती हो ? फूल दो न ।"

"फूल नहीं देने का- इतने दिन क्या नही आई?"

"कल से आऊँगी- अब दो न फूल ।"

इस प्रकार डाटते हुए वह दो-चार फूल पकडा देती थी । गगोली बाबू लीलाबाई को अक्सर डाटते रहते थे । क्यो, ये तो हम पता नहीं । उनके बोलने की रोब आँखो के तेवर से हम समझ जाते थे । जब कभी गगोली बाबू को ज्यादा क्रोध आता तो लीलाबाई को पीटते भी थे । उस समय उनके हाथ घडी लोटा गिलास जो कुछ भी पडता वही उठा कर उसे दे मारते थे । लीलाबाई जोर-जोर से चिल्ला कर रोती । उसके रोने की आवाज सुनकर मकान के चारो

भला बताओ--कैसे-जाती ?

मन मसोसकर रह जाना पडा । इस व्याकुलता मे कई दिन निकल गये । जैस ही मौका मिला मैं भाग कर चपा के घर पहुँची और दीवार पर जा चढी तथा आवाज दी- "लीलाबाई-लीलाबाई ।"

एक दम निस्तब्धता घर में साय-साय के अलावा और कोई दिखाई नहीं दिया । मुझ विस्मय हुआ । कहाँ गई लीलाबाई? गगोली बाबू का भी कोई पता नहीं था । उनकी फटफटिया भी वहीं रखी हुई थी । उस पर ढेर सारी निबौलिया पडी हुई थीं ।

घर का आँगन पत्ते- निबौलियो से भरा पडा था । मैं दीवार पर चढी हुई थी और जार-जार स आवाज लगा रही थी ।

"लीलाबाई - ओ लीलाबाई ।" लेकिन प्रत्युत्तर देने वाली लीलाबाई न जान कहाँ थी । मेरी आवाज उस सूनी जगह से लौटकर मेरे पास ही वापस आ रही थी । अब वहा ये कहने वाला कोइ न था- "फूल रोज-राज नहीं मागने का -दीवार पर नहीं चढने का-जाओ अभी गगोली बाबू आयेगा तो मारेगा ।"

मैं चुपचाप दीवार से उतर कर वापस अपने घर आ गई । मोहल्ल म अफवाह का दौर था, कोई कहता-गगोली और लीलाबाई कहीं भाग गये हैं । कोई कहता-गगाली बाबू न लीलाबाई को मार दिया है कोई कहता- दोना ने बब मे कूद कर आत्महत्या कर ली है । भगवान ही जाने क्या हुआ ?

मेरे गाँव रहने तक गगोली बाबू और लीलाबाई का कोई पता नहीं चला था । इधर पिताजी की बदली बबई हो गई थी । उसके बाद से हमारा सारा परिवार बबईवासी हो गया ।

गाँव म चाचा ताऊ थे । परन्तु गाँव आना लबे समय तक नही हुआ । मैं अपना पढाई म व्यस्त हो गई । उसके बाद मेरा विवाह भी वहीं शहर म ही हा गया, मेरे एक चाचा थे जो गाँव मे ही,रहत थ । उनके कोई सन्तान नहीं थी । अत उन्होन परम्पराओ के अनुसार जीवित खर्च किया और सब को निमत्रित किया । इसलिये मेरा गाँव आना हुआ है । कारज क अनुसार सैकडा आदमिया ने भोज का आनन्द लिया । सारे दिन लड्डू कचौडी हलवा खा-खा कर लोग पेट पर हाथ फिराते चले गये । शाम को भी कुछ प्रमुख व्यक्तियों को भोजन पर आना था ।

"चाचा- अभी कितन लोगो का और आना ह ?" मैंने पूछा ।

"दो-चार परिवार हैं और एक यहाँ के बड नेता हैं,वे भी आयेगे ।' चाचा ने जबाब दिया ।

"कौन हैं = ।? - मैंने कहा ।

ओर भीड इकट्ठी हो जाती थी, परन्तु किसी म ये साहस नहीं हाता कि लीलाबाई को बचावे या बीच मे जाय । यदि गगोली बाबू किसी का दख लेते तो छडी उठा कर चिल्लाकर कहते- "यू डैमफूल- क्या देखते हो ? यहाँ कोई नाच का तमाशा है ?" ये सुनते ही सब इधर-उधर हो जाते । जब मुझे पता चलता कि लीलाबाई को गगोली बाबू ने मारा है तो डर के मारे कई दिन तक वहाँ उससे मिलने नहीं जाती । परन्तु जाने क्यो, मुझसे रुका नहीं जाता था । मैं फिर वहाँ जाती और दीवार पर जा चढती और कहती- "लीलाबाई- क्या हुआ ?"

"कुछ नहीं हुआ- भागो यहाँ से- दीवार पर नहीं चढने का - अभी बाबूजी आयगा तो मारेगा ।" कहत-कहते उसकी आँख डबडबा आतीं । लीलाबाइ ब्लाउज की जगह चोली पहनती थी । इसलिये उसकी पीठ का काफी हिस्सा खुला हुआ रहता था । पीठ पर पडे नीले, बैंगनी निशान, आख, नाक पर सूजन मुझे सब कुछ समझा देती । मुझ उससे बडी सहानुभूति होती थी । गगोली बाबू मुझे बड खूख्वार लगते थे । कभी मैं डर क मार इधर-उधर फटफटिया पर बैठ निकलते उन्हे देख लेती दुबक जाती थी । जब व चले जात तो चैन की सास लेती और अपना रास्ता लेती थी ।

अब कुछ दिनो से लीलाबाई बीमार सी रहन लगी थी । चेहरा एक दम पीला मुरझाया लगता था । जमीन पर ही लेटी पडी रहती, मन होता तब ही काम करती थी । कच्चे अमरूद, इमली, बेर खाती रहती । कभी-कभी मुझ आर मेरी सहेलिया को भी दे दिया करती । मं पूछती- लीलाबाई क्या हुआ? बीमार हो ?

किस्मत फूट गया- रोने का है क्या कर सकता है ? ऐसा कह कर रान लग जाती । उसका राना देखकर कभी-कभी मुझे भी रोना आ जाता । मैं दीवार पर से ही कहती- "रो मत लीलाबाइ- ठीक हो जायेगा " लीलाबाइ कहती- "तुम जाओ दीवार पर नहीं चढने का- बाबूजी आयेगा तो मारगा"

"लीलाबाई फूल दो न ।" मैं कहती ।

"नहीं अभी फूल नहीं लेने का ।"

एसे ही कुछ समय निकलता रहा । एक दिन भार होते ही सारे गाँव म शोर हा गया लीलाबाई के बटा हुआ है । सारे गाँव की औरत इधर-उधर फुसफुसाहट कर रही थी- "देखा चरित्तर लीला का भोली लगती थी ससुरी कितनी बदमाश निकली तभी तो गगोली बाबू स पिटती थी ।" सब अपना-अपना राग अलाप रह थे । वहाँ उन्हे जवाब देने वाला कोई नहीं था । मरा मन हुआ भागकर लीलाबाइ और उसके छोटे को देख आऊँ, पर मैं न जा सकी । दादाजी ने सख्त हिदायत दी थी,"खबरदार- जो चपा के घर जाकर उस लीला से बात की ।"

भला बताओ–कैसे–जाती ?

मने मसोसकर–रह जाना पडा । इस व्याकुलता मे कई दिन निकल गये । जैसे ही मौका मिला मैं भाग कर चपा के घर पहुँची और दीवार पर जा चढी तथा आवाज दी– "लीलाबाई–लीलाबाई ।"

एक दम निस्तब्धता घर म साय–साय के अलावा और कोई दिखाई नहीं दिया । मुझे विस्मय हुआ । कहाँ गई लीलाबाई? गगोली बाबू का भी कोई पता नहीं था । उनकी फटफटिया भी वहीं रखी हुई थी । उस पर ढेर सारी निबौलिया पडी हुई थीं ।
घर का आँगन पत्ते– निबोलियो से भरा पडा था । मैं दीवार पर चढी हुई थी और जोर-जोर से आवाजे लगा रही थी ।

"लीलाबाई – ओ लीलाबाइ ।" लेकिन प्रत्युत्तर देने वाली लीलाबाई न जाने कहाँ थी । मेरी आवाज उस सूनी जगह से लौटकर मेरे पास ही वापस आ रही थी । अब वहा ये कहने वाला काइ न था– "फूल रोज-रोज नही मागने का –दीवार पर नहीं चढने का–जाओ अभी गगोली बाबू आयेगा तो मारेगा ।"

मैं चुपचाप दीवार से उतर कर वापस अपने घर आ गई । मोहल्ले मे अफवाह का दौर था, कोई कहता–गगोली और लीलाबाई कहीं भाग गये हैं । कोई कहता-गगाली बाबू न लीलाबाई को मार दिया हे, कोई कहता– दोनो ने बब मे कूद कर आत्महत्या कर ली हे । भगवान ही जाने क्या हुआ ?

मर गाँव रहने तक गगोली बाबू ओर लीलाबाई का कोई पता नहीं चला था । इधर पिताजी की बदली बबई हा गई थी । उसके बाद से हमारा सारा परिवार बबईवासी हो गया ।

गाँव म चाचा ताऊ थे । परन्तु गाँव आना लबे समय तक नहीं हुआ । मैं अपनी पढाई मे व्यस्त हो गई । उसक बाद मरा विवाह भी वही शहर म ही हो गया, मेरे एक चाचा थ जा गाँव म ही,रहत थ । उनक कोई सन्तान नहीं थी । अत उन्होन परम्पराआ क अनुसार जीवित खर्च किया और सब को निमत्रित किया । इसलिये मेरा गाँव आना हुआ है । कारज के अनुसार सेकडा आदमियो ने भोज का आनन्द लिया । सारे दिन लड्डू कचौडी, हलवा खा-खा कर लोग पेट पर हाथ फिराते चले गये । शाम को भी कुछ प्रमुख व्यक्तियों को भोजन पर आना था ।

"चाचा– अभी कितन लोगो का और आना हे ?" मैंने पूछा ।

"दो-चार परिवार हे और एक यहाँ के बडे नेता हैं,व भी आयगे ।' चाचा ने जबाब दिया ।

"कौन हैं न ।? – मैंने कहा ।

"युवा नेता हैं, बड सज्जन हैं सीधे दिल्ली से सपक रखत हैं। इनकी वजह से गाँव की इतनी उन्नति हुई है। बडा अस्पताल, स्कूल कॉलेज सुपर बाजार इनके ही प्रयासो का फल है। सबसे बडी नम्रता से मिलते हैं।

"क्या नाम है उनका ?"

"गागुली बाबू" चाचा ने कहा।

"कोन हैं ये गागुली बाबू, कहाँ के हैं ?"

चाचा कुछ नहीं बोले। इस बार जवाब चाची ने दिया "अरे क्या बतावे बिटिया- कोइ लीलाबाई थी। जाने किसका पाप मिसरो की गोद म डालकर कहीं चली गइ। कह गई मौसी पाल लेना। मिसरो के औलाद नहीं थी। उसने पाल-पोष कर पढा-लिखा कर योग्य बनाया। परन्तु इन सब बातो से अपने को क्या लना-देना। आदमी बहुत ही सज्जन परोपकारी समाज सेवी हैं लोगो के सुख दुख मे काम आते हैं।"

"वो देखो- आ रहे हैं गागुली साहब।" चाचा बोले।

"आइये-आइय- नमस्कार जी।" चाचा ने कहा।

मैं समझ गई- लीलाबाई और गगोली को।

गगोली बाबू और कोई नहीं गागुली बाबू थे।



फॉस

सुदर्शन राघव

नफीसा बेगम की मुहल्ले भर मे धाक थी तमाम महिलाये उन्हे अकलमन्द और तजुर्बेकार समझती थीं, यही कारण था कि घर-आगन की छोटी-बडी उलझना की गुत्थी सुलझाने के लिये सभी नफीसाबी की शरण मे आ पहुँचती । नफीसाबी को इस बात का गरूर था । वह इतनी अधिक घमण्डी हो गई थी कि अपने आगे किसी को कुछ न गिनती थी । दूसरो के अन्दरूनी मामला म इतना रस लेने लगी थी कि अपने घर-आगन को सवारने की उन्हे होश ही न था, और मजाल है, कोई नफीसाबी की शान मे गुस्ताखी कर दे । ये किस्सा उन दिनो का है, जब औरतो को नई-नई आजादी का हक हासिल हुआ था ।

आजादी मिली तो थी, मगर किसी एक वर्ग को वह वर्ग था- प्र ढ महिलाओ का । बडी बूढियो ने तो पहले से मन मार रखे थे, नये चोंचले उन्ह पसन्द न आये, इधर जवानो की जजीर ढीली जरूर कर दी थी मगर पाबन्दिया का दौर बरकरार था सो बीच के वर्ग ने तथाकथित आजादी का लुत्फ उठाने के लिये कोई कसर न उठा रखी थी ।

किटी पार्टियो का नया-नया चलन हुआ था, फिर उस मुहल्ल की औरत भला क्यो पीछे रहतीं । चाय-पानी के साथ-साथ, गाना-बजाना ताश-चोपड का रग तो जमता ही था, पर साथ ही साथ निन्दा चुगली जिस-तिस क परिवारा की बखिया उधेडने का दौर भी शुरू हो जाता था । पार्टी की मुखिया होने के कारण नफीसाबी को ही बीच-बचाव करना पडता । नफीसाबी की बात कोई न टालता था मगर उनके स्वय के घर मे 'दीपक तले अधेरा' वाली बात थी ।

उनके इकर तै लाडले की शादी हुए तकरीबन एक साल हो गया था । वे पिछले महीने बहू का गौना करवा कर लाई थी । बडो हसरत थी उन्हे बहू को और बेटे का भरा-पूरा परिवार देखने को । मगर जब गौना करवाकर बहू

ला रहे थे तो रास्ते मे कार का एक्सीडेन्ट हो गया । कोई विशेष नुकसान तो
न हुआ बस बेटे को थोडी बहुत खरोच आई थी, बाल-बाल बच गये थे,
सब । नफीसा बेगम घबरा कर रोने लगी ।

"हे परवरदिगार तेरा लाख-लाख शुक्र है । तूने हमारे बेटे की जान
बख्श दी। हमारे घर का चिराग बुझने से बच गया ।"

फिर अपने आप ही बडबडाने लगी, "अवश्य ही किसी नामुराद,
नाशुक्रे की नजर लगी है, यह तो हमारी किस्मत अच्छी थी जो बच गये, अवश्य
ही बुजुर्गों का सबाब आडे आया है, वर्ना तो ?"

"अब बस भी करो अम्मीजान, क्यो नाहक परेशान हो रही हो, कुछ
हुआ तो नहीं न ।" एहसान मिया ने झुझलाते हुये कहा ।

"कुछ होने मे कसर थी क्या ? जरा सा झटका और लगता तो कार
खड्ड मे जा गिरती और ?"

"खुदा न करे ?" घूघट मे सिमटी नई नवेली दुल्हन रेहाना के
मुह से एकाएक निकल पडा । नफोसाबी ने बुरा सा मुह बनाते हुए बहू की
ओर अजीब निगाहो से देखा और मुह फेर लिया । उनका मन-चाहा कह दे,
यह तो शायद तुम्हारे ही मनहूस कदमो का करिश्मा है, अभी तो पैर घर मे
पडे ही नहीं आगे खुदा जाने क्या होगा, पर गम खाकर नफीसाबी खामोश हो
गई । मगर बहम की फास जो कलेजे मे चुभी तो टीसती ही चली गई । अब
अगर किसी को बुखार हो जाये तो बहू का कसूर, घर मे झगडा हो जाय तो
बहू कसूरवार रिश्ते मे किसी का इन्तकाल हो जाय तो घूम फिर कर बहू ही
निशाना बनती ।

घर मे तनाव का वातावरण बनने लगा, जिसकी आच से सभी प्रभावित
थे । इसमे एहसान अजीबोगरीब स्थिति मे पड गया था । वह अधिक वक्त घर
से बाहर बिताने लगा पर इसकी जिम्मेवारी भी बहू पर आन पडी ।

एक दिन तो पानी सिर से ऊपर आ गया, जब एहसान मिया गबन
के मामले में सस्पैंड कर दिये गये । बहू पर कहर टूट पडा । नफीसाबी रो-
रो कर कह रही थी, "ये सब इस मनहूस के कारण हुआ है, जब से आई
है कुछ न कुछ बुरा होता है । अब बदनामी तो हुई सो हुई फाकाकशी की
नौबत आने वाली है । अर । मैं कहती हूँ निकाल बाहर कर बेटे इसे तलाक
दे घर कर इस मनहूस को । एक से एक बढकर हसीन लडकिया पडी हैं,
इस सर्वनाश की पोटली को कब तक ढोता रहेगा ।"

रेहाना यह सब बाते सुन रही थी । अधिक न सुन पाने के कारण
बेहोश होकर गिर पडा । उसके गिरते ही एहसान मिया बहू की ओर लपके
और उसे उठा कर तख्त पर लिटा दिया ।

"ये सब नखरे हैं नखरे। मैं सब जानती हूँ इन चालो को, सत्यानाश करके रख दिया घर का। जरा सी भी गैरत होती तो खुद ही मुह काला कर जाती।" उस रात घर मे चूल्हा न जल पाया, जो जहाँ था, वहीं बना रहा। रात आखो म कटी।

समय जैसे-तैसे कटने लगा। आज जुम्मा था, जुम्मे के रोज टी पार्टी का आयोजन किया जाता था। नमाज अदा कर नफीसाबी पहुँची तो महफिल जमी हुई थी। सहसा उसके कानो मे अपने ही जिक्र की भनक पडी, वह ठिठक कर खडी हो गई।

"तुम क्या जानो उस नफीसा को, अरे! हमारी अम्मी तो उन्हे तब से जानती है, जब वह बहू बनकर आई थी। बडी जल्लाद है। ओह! उस दिन तो मेरे पाव तले की धरती ही खिसकने लगी, कोई बहू को यू कहता है। तलाक दिलवा रही है, उस बचारी को। और बेटा देखो चुस्का तक नहीं माँ के पल्लू से चुपचाप बधा रहा, उसमे मर्दों वाली तो कोई बात ही नहीं है।' रजिया एक सास मे ही सब कह गई।

"क्या सच मे एहसान मिया कुछ नहीं बोले ?"

"और नहीं तो क्या, मैं झूठ बोल रही हूँ ?"

"मुझे तो भई यकीन ही नहीं आ रहा।"

" खुदा कसम, दोजख मिले उसे, जो झूठ कहे।"

"अरे! मन भर गया होगा, नहीं भला किसे न भायेगी।" अल्लाहरखी की बात पर सब खिलखिलाकर हस पडी।

"पर आज आई क्यो नहीं, नफीसाबी ? मुझे तो एक मशविरा करना था उनसे ?" फातिमा ने परेशान होते हुए कहा।

"मशविरा ? अरे! जिससे अपना घर ही न सम्भलता हो, वह भला क्या मशविरा देगी ? वह तो तीर तुक्का चल जाता है तो सब समझते हैं "

"अम्मी तो कहती थी, जब यह ब्याह कर आई थी, डोला पहुँचते ही घर से ससुर की मैयत उठी थी, उसी दिन। कई दिन तक तो किसी ने सलाम करना तो दूर, सूरत भी न देखी थी। मनहूसाबी कहा करते थे, इसे। तलाक तक की नौबत आ गई थी। दिन भर घर के काम-काज मे पिसी रहती थी। हाथो की मेहदी भी न उतरी थी कि गारा-गोबर से लेकर चूल्हा-चक्की तक सब इसी के जिम्मे था। एक नौकरानी की हैसियत से अधिक कुछ थी ? यह तो भला हो उस बेवा बूआ का, जो उसने इसे बरबाद होने से बचा लिया। यह तो बाद म मिया की चहेती बनी जब सास का इन्तकाल हो गया।

अंधेरे का सैलाब

पुष्पलता कश्यप

मैं "अ" स्थान से "ब" स्थान को बस से आ रहा था। एक बुर्के वाली मेरे बराबर की सीट पर आकर बैठी। वह खिड़की से बार-बार अपना चेहरा निकाल कर इधर-उधर देख लेती थी। शायद उसे किसी का इंतजार था। बस रवाना हो गई। लेकिन कोई नहीं आया। वह अकेली थी। बस जैसे ही कुछ दूर निकली, उसने अपना बुरका उलट दिया। वह तीस के आस-पास की अच्छी-भली, शक्ल-सूरत वाली औरत थी। अपने वेनिटी बैग के अलावा उसके पास सिर्फ एक छोटा थैला था। उसमें उसका टिफिन कैरियर पड़ा था। नवम्बर के दिन थे, गुलाबी सर्दी पडनी शुरू हो गई थी। लेकिन उसके पास या तन पर कोई गरम कपडा नहीं था। कुछ देर बाद उसने थैले से टिफिन कैरियर निकाल कर खाना शुरू कर दिया। खाना खत्म करके जैसे ही बस रुकी वह बाहर की ओर कुछ खोजती हुई निगाहों से इधर-उधर देखने लगी। उसे पानी की तलब थी। मैं नीचे उतरा अड्डे पर की दूकान से लोटा भर लाया और उसे दे दिया। वह मुस्कराई और पानी पीने लगी।

साँझ ढलने पर सर्दी चमकने लगी थी। वह मेरे निकट सिमटने लगी। मैंने धीरे से कहा- "चाहो तो मेरे साथ शाल शेयर कर सकती हो।"

वह पुनः मुस्कराई और उसने अपना जिस्म शाल के अन्दर समेट लिया। अब वह मुझसे बिल्कुल सटकर बैठी थी। देखने वाले उसे मेरे साथ ही समझ रहे थे।

हम धीमी आवाज में बात करने लगे-

"तुम अकेली ही सफर कर रही हो?" [illegible] में मुझसे "तुम" [illegible] गया था।

"मैं अपने एक रिश्तेदार के यहाँ जा रही हूँ।" मेरे प्रश्न का उसने

"गोया दास्तान दोहराई जा रही है, अच्छा आपा, इत्ते दिन आपने यह सब बताया क्यो नहीं ?"

"मैं कोई ऐसी-वैसी नहीं, जो लोगा का पर्दाफाश करती रहूँ । घर-घर मटिआल चूल्हे हैं बहना । लेकिन नफीसाबी को वही जुल्म बहू पर करते देखा तो रहा न गया । भुगत भोगी होते हुए भी एसी हरकत ? छि औरत कितनी जल्दी अपना दर्द भूल जाती है । जमाना चाहे कितना बदल जाये, वह उसी खोले म पडी इतिहास दोहराती रहती है । जब तक औरत मानसिक तौर पर स्वस्थ और आजाद न हो जाय इस तरह क किस्से सुनने को मिलते रहगे ।"

नफीसाबी और अधिक न सुन सकी । अन्दर जान की हिम्मत न हुई, कदम खुद अपन घर की ओर चल दिये।

रजिया की एक-एक बात उसे बेताब कर रही थी ।

रजिया ने जो सच था, उगल दिया । सच, ओह ! कितना कडवा होता है ।

आ ! यह क्या कर डाला ? बेचारी बहू पर झूठ-मूठ के लाछन लगा कर उसे दुखी किया । जो कुछ भी घटा महज एक हादसा था, उससे बहू का क्‍ ताल्लुक या खुदा तूने क्यो अक्ल पर पर्दा डाल दिया । जिस दर्द न कभी ।रा जीना हराम कर दिया था वही दर्द छि यह मैंन क्या कर डाला । न सा जी की आखा म आसुओ का झरना फूट पडा । वह कटे पेड सी निढाल बिस्तर पर लेट गई ।

दुल्हिन ने जब उन्हे देर तक लटे देखा तो परशान हो पास आ गई तथा उन्हे प्यार से हाथो का सहारा देकर उठाकर प्यार से बोली, "अम्मीजान आपकी तबीयत तो नासाज जान पडती है । दर्द है क्या । आप कहे तो सिर दबा दूँ ।"

नफीसाबी रोज की तरह दुल्हिन को आज दुत्कार नहीं सकी । उसकी नजरो मे आज दुल्हिन के प्रति प्यार का सागर लहरा रहा था । वह धीमे स्वर मे बोली "हाँ, दुल्हिन मेरा सिर दुख रहा है, दबा दो।"

बहू की नाजुक हथेली की छुअन से नफीसा को बडा सुकून मिला । आँखो मे पानी और दिल मे प्यार लिये वह एकाएक उठ पडी और बहू को सीने से लगा फफकने लगी । आसुओ से दोनो सास-बहू काफी देर तक अपने दिल मे जमे गिले-शिकवो के मैल को धोती रहीं । इसी बीच न मालूम कब दिल मे चुभी फाँस निकल कर बह गई ।



अंधेरे का सैलाब

पुष्पलता कश्यप

मैं "अ" स्थान से "ब" स्थान को बस से आ रहा था। एक बुरके वाली मेरे बराबर की सीट पर आकर बैठी। वह खिड़की से बार-बार अपना चेहरा निकाल कर इधर-उधर देख लेती थी। शायद उसे किसी का इन्तजार था। बस रवाना हो गई। लेकिन कोई नहीं आया। वह अकेली थी। बस जैसे ही कुछ दूर निकली, उसने अपना बुरका उलट दिया। वह तीस के आस-पास की अच्छी-भली, शक्ल-सूरत वाली औरत थी। अपने वेनिटी बैग के अलावा उसके पास सिर्फ एक छोटा थैला था। उसमें उसका टिफिन कैरियर पड़ा था। नवम्बर के दिन थे, गुलाबी सर्दी पड़नी शुरू हो गई थी। लेकिन उसके पास या तन पर कोई गरम कपड़ा नहीं था। कुछ देर बाद उसने थैले में टिफिन कैरियर निकाल कर खाना शुरू कर दिया। खाना खत्म करके जैसे ही बस रुकी वह बाहर की ओर कुछ खोजती हुई निगाहों से इधर-उधर देखने लगी। उसे पानी की तलब थी। मैं नीचे उतरा, अड्डे पर की दूकान से लोटा भर लाया और उसे दे दिया। वह मुस्कराई और पानी पीने लगी।

साझ ढलने पर सर्दी चमकने लगी थी। वह मेरे निकट सिमटने लगी। मैंने धीरे से कहा- "चाहो तो मेरे साथ शाल शेयर कर सकती हो।"

वह पुनः मुस्कराई और उसने अपना जिस्म शाल के अन्दर समेट लिया। अब वह मुझसे बिल्कुल सटकर बैठी था। देखने वाले उसे मेरे साथ ही समझ रहे थे।

हम धीमी आवाज में बात करने लगे-

"तुम अकेली ही सफर कर रही हो?" बेखुदी में मुझसे "तुम" निकल गया था।

"मैं अपने एक रिश्तेदार के यहाँ जा रही हूँ।" मेरे प्रश्न का उसने उत्तर दिया।

लेकिन मैंने यह महसूस किया कि वह मुझसे अपनी असलियत छुपा रही है ।

मैंने बातो-बातो म उसका राज पता कर लिया कि दरअसल वह घर मे भागकर जा रही है । वह जहाँ जा रही है उस स्थान पर उसका प्रेमी रहता है और वह उसी के पास वहा जा रही है ।

रास्ते मे एक जगह बस रुकी तो मैं दो कप चाय ले आया । एक उमे दिया और दूसरा मैंने पिया ।

मैं उमके बारे म और अधिक जानने के लिये उत्सुक था, सा मैंने पूछा ।

"अगर तुम्हारा चाहन वाला वहाँ नहीं मिला या उसने तुम्हे रखने से इन्कार कर दिया तब क्या करोगी ?"

"उस स्थिति मे मैं तुम्हार पाम आ जाऊँगी, रख सकोग ? वह तुम्हार पास पडी रहूँगी आर सेवा कर दिया करूगी ।" उसने अथपूर्ण मुस्काराहट से मरी आर देखते हुए कहा ।

गन्तव्य स्थान पर पहुँच कर मैंने टैक्सी कर ली थी । मने उस अपना पता गलत दिया क्योकि मैं डर गया था कि वह घर से भागी हुई औरत है कहीं मैं किमी मुसीबत मे ही न फस जाऊँ ।

कुछ दिन बाद मै अपने शहर फिर स वापस आ गया । एक दिन अपने कुछ दोस्ता के माथ मे पिक्चर देखने गया था । हाल मे अधेरा होन पर मेरी बगल मे बैठी महिला ने मरे हाथ पर हाथ धर दिया । मैं हक्का-बक्का हो रहा था । कोई नकाब वाली महिला थी । गौर किया तो मुझे और भी हैराना हुई- यह वही औरत थी जो मुझे पिछले महीने बस मे मिली थी । मरे साथी जब कुछ इधर-उधर हुए ता उसने उलाहने के स्वर म कहा- "उस दिन जान छुडाकर भाग गए । क्या मैं इतनी बुरी हूँ ?"

मैंने पूछा- "आजकल कहाँ हो ?"

"अपने पति के पास ।"

"कहाँ ?"

उसने अपने घर का पता विस्तार से समझाया और कहा- "लेकिन इतवार को मत आना । उस दिन वह घर पर रहता है ।" और वह अथपूर्ण ढग से मुस्करा दी थी । इतने मे बैरा आया मैंने उसे लिम्का लाने का कहा ।

म उससे और भी कुछ पूछना चाहता था । लकिन सभी दोस्त लाट आए आर हॉल म फिर अधेरा हो गया । बैरा लिम्का लेकर आ गया था। हम दोना पास वाला की नजर बचाकर लिम्का शेयर करते रहे ।

फिल्म समाप्त हुई, हम घर लौट गए। रास्ते मे एक मित्र ने धीमे स्वर मे पूछा- वह कौन थी जिससे तुम बात कर रहे थे। उसका पता है तुम्हारे पास ? मैंने हाँ नहीं भरी। मित्र ने कहा, "मेरी भी जान पहचान है एक महिला स। मर पास उसका पता भी है।"

"यार, तुम्हारे पास तो उसका पता है। क्यो न किसी दिन उसके यहाँ चले।" मैंने उससे मजाक किया।

"पहले मैं कभी अकेले ही वहाँ हो आऊँ। हरी झडी हुई तो फिर तुम्हे भी ले जाऊँगा।" उसने शायद बात टाल दी थी।

लेकिन एक सुबह वह मेरे पास आया और बोला- "प्रोफेसर साहब! आज वह आएगी, तजुर्बा करने चलोगे कि जीवन जीना कितना दुश्वार है ?"

मैंने बात का मजा लेने के ख्याल से 'हाँ' भर दी। कहा- "जरूर चलेंगे भाई, तुम ले चल रहे हो और हम न चले, यह भी कोई बात हुई।"

"तो फिर ठीक है, वह सोजती गेट पर एक बजे मिलेगी। मैं तुम्हे वहीं मिल जाऊँगा।"

एक बज के करीब मैं वहाँ पहुँचा तो वह खडा तैयार मिला। मैंने देखा, उसके साथ कोई और नहीं था। मैं उसकी ओर बढ गया।

मेरी सवालिया निगाह के जवाब मे वह बोला- "उसने यहीं पर आने का कहा था। देखो, इन्तजार करते हैं।"

पन्द्रह मिनट के बाद मैंने देखा एक बुरके वाली टैम्पू से उतर कर हमारी ओर ही बढी चली आ रही थी। पास आकर वह मुस्कराई और उसकी बगल म सिमट आई।

"यह मेरा दोस्त है। जिगरी दोस्त।" उसने मेरे बारे मे कैफियत सा देते हुए कहा।

औरत मेरी ओर देखकर मुस्कराई।

मैंने भी "हैलो" कह दिया।

"कहाँ चलना होगा ?" उसने बिना किसी भूमिका और बेझिझक के कहा-

हमारी झिझक देखकर वह फिर बोली- "तुम्हारे पास कोई जगह नहीं है क्या ?"

मेरे दोस्त न मेरी ओर देखा और मैंने उसकी ओर देखा।

"तुम्हार फ्लैट पर चले। भाभीजी स्कूल से कब लौटती हैं ?"

"फ्लैट पर नहीं चल सकते। वह किसी भी समय घर पर आ धमक सकती है। आजकल वह मुझ पर कुछ ज्यादा ही शक करने लगी है।" मैंने अपने तई कोई रिस्क नहीं लेने के विचार से कह दिया।

"तुम्हारे यहाँ ही चले।" उसने मुझसे कहा। मैं खामोश था। मैंने सवाल कर दिया।

"तुम्हारे पास कोई जगह नहीं थी तो मुझे यहाँ क्यो बुला लिया ? मोहल्ले मे बहुत जोखिम रहती है। आस-पास के सभी देखते-सूघते और टाहने लगते हैं।"

फिर कुछ रुक कर बोली, "हम कोई पाप करने नहीं जा रहे हैं, आपस मे बतियाना, हँसना-बोलना पाप नहीं है। चलिये मेरे यहाँ ही चलते हैं।"

हम तीनो थ्री-व्हीलर म सवार हो गए।

तीसरी रोड सरदारपुरा की एक चाल मे उसन कमरा ले रखा था। वहाँ एक अपाहिज, अर्द्धविक्षिप्त, बदहवास-सा फटेहाल व्यक्ति उकड़ू ऊँघता-सा बैठा था।

उसे देखते ही वह उठ खडा हुआ और बोला- "कहाँ चली गई थी ?"

उसने उसके सवाल को अनसुना करते हुए कहा, "आज काई काम नहीं मिला क्या ? इतनी जल्दी कैसे लौट आए ?"

तभी धूल से अँटे गदे बच्च जो वहीं-कहीं पास ही शायद खल रहे थे, उसको घेरकर खडे हो गए।

उनमे एक नौ-दस साल की लडकी भी थी। उसकी गोद मे साल-सवा साल का लडका था चार साल का दूसरा लडका उसकी अँगुली पकडे हुए था।

वह कमरे का दरवाजा खोलने लगी। उस आदमी की निगाहे अब हमे घूरने लगीं। हम दोनो बडी अजीबोगरीब और असमजस की स्थिति मे थे।

दोस्त न उस औरत से कहा- "अच्छा तो अब हम चलते हैं। फिर किसी दिन आ जाएगे।"

"नहीं नहीं साहब। ऐसा कैसे हो सकता है। अन्दर आइए न। चाय पीकर जाइएगा। आप देखना चाहते थे न कि मैं किस प्रकार अपना जीवन बिता रही हूँ।"

फिर वह कमर म दाखिल होती हुई उस आदमी की ओर मुखातिब होते बोली- "बैंक के आदमी हैं। मेहरबान और गरीब परवर है। सिलाइ मशीन के लिये मुझे बैंक स कर्जा दिलवा रह हैं। मकान दिखान साथ लेती आई हूँ जरूरत पडन पर मुझे बुला लेंगे।"

हम मजबूरन अदर जाना पडा ताकि उस आदमी का बेवजह शक न हो।

दीवार के सहारे टिकी एक मात्र खाट को बिछाकर हमे बिठा दिया गया। वह आदमी उसी तरह फिर ऊंघता-सा बैठ गया था । बच्चे इर्द-गिर्द खडे होकर फटी-फटी आँखो मे हमे देख रहे थे ।

"आपके हाथ को क्या हुआ ?" दोस्त ने उस आदमी के लुज-लूले हाथ को देखते हुए पूछ लिया ।

लेकिन उत्तर उस औरत ने ही दिया- "तीन साल पहले आरा मशीन से कट गया था । दो महीने से ज्यादा हॉस्पिटल मे रहना पडा । इलाज मे जो कुछ था सब खर्चा हो गया ।"

"मुआवजा मिला होगा ?"

औरत ने इन्कार मे सिर हिला दिया ।

"नहीं, कुछ नहीं दिया । गरीब मजदूर की कौन सुनता है ।"

"यूनियन ने भी कुछ नहीं किया ?"

"यूनियन वाले कहते हैं, गलती खुद इसकी थी । फिर मालिक ने छटनी मे नौकरी से ही निकाल दिया ।"

मैंने कमरे पर दृष्टि डाली । दो-चार टूटे-फूटे बर्तन, फटे-पुराने गुद्दड, तथा चिथडा कपडो के सिवा कुछ नहीं था ।

उसने उस आदमी को चाय की पत्ती, शक्कर और दूध लाने के बहाने बाहर भेज दिया । पैसे हमने ही दिये । बच्चो को भी पडोस से कप-प्लेट लाने का कहकर बाहर धकेल दिया गया ।

मित्र का मकसद यहाँ आने का क्या था- कह नहीं सकता, लेकिन मैं तो समाज के नासूर समझी जाने वाली औरत के जीवन को निकट से देखने को आया था ।

मैं सोच रहा था कि स्त्री जो महान होती है इस स्तर तक क्यो गिर जाती है ? वह मेहन्त-परिश्रम से क्यो नहीं अपनी जिदगी को खींचती है ।

वहाँ के माहौल मे मैं ज्यादा देर खडा नहीं रह सकता था । कमरे मे बैठा नहीं जा रहा था । मैंने दोस्त का वहाँ से चलने का इशारा किया । इतने मे उस औरत का आदमी लौट आया।

"इनको गली तक छोडकर आती हूँ । इनको देर हो रही है ।"

"फिर आना साब ।" वह आदमी इतना ही किसी तरह बोल पाया ।

गली मे दोस्त ने उसकी मुट्ठी मे पचास का एक नोट देते कहा- "अच्छा, अब चलते हैं ।" चलते-चलते मित्र बोला ।

"इस रास्ते पर चलकर कोई औरत मेहनत-मशक्कत के काबिल नहीं रह जाती। किसी के साथ कुछ देर के लिए हँसने-बोलने भर से कुछ हरे नोट पा जाने का चक्कर ऐसा ही होता है ।"

कुछ ठहर कर वह फिर बुदबदाया- "एक गरीब-अनपढ औरत की अपनी अस्मिता की लडाई मे अस्मत बचती ही कहाँ है ? फिर वह क्यो न अपनी अस्मत का सौदा करे ।"

लगा कि इम औरत के घर का माहौल देखने के बाद दोस्त का मन अब आत्मग्लानि से भरा हुआ था,वह उसके साथ होटलो म ही बतियाता होगा । इस घर मे वह पहली बार आया होगा । सही है, दूर और पास मे बहुत अन्तर है ।

"इसका आदमी बिल्कुल नाकारा है, हिजडा! कुछ दिन पहले मैं इसके यहा आया था तो इसका कोई तथाकथित भाइ यहा आया हुआ था । उससे यह अपने पति के बारे मे कह रही थी ।" मित्र बोलता जा रहा था ।

"इसकी हालत तो देख ही रहे हो । इतने साल हो गए न कुछ कमाता है न किसी काबिल है । घर मे पाँच प्राणी हैं । तीन बच्चे और दो हम । जिन्दा रहने के लिये क्या-कुछ नहीं चाहिये । कुछ पुश्तैनी रकम-जमीन थी, लेकिन इसक भाइयो ने सब-कुछ छीन लिया और इसे मार-पीट करके घर से बाहर बेदखल कर दिया यह तो अपने भाइयो से मेरी रक्षा भी नहीं कर सका ।"

"मैं इसका अब अपने साथ ही ले जाऊँगा ।" उस भाई ने कहा था ।

"और यह यहीं रह जाएगा! अपाहिज है इसकी देख-भाल कौन करेगा ?"

मेरा इशारा इस औरत की पति की तरफ था ।

"बहुत साल तक किया है मैंने इसके लिये बहुत कुछ । रोटी भी मेरी कमाई की खाता है यह ।"

"तुम्हारा पति है ।"

"हुँ म् पति ।" उसने पिच्च से एक तरफ थूकत हुए विद्रूपता से अपने होठ सिकोड लिये ।

"तुम्हारे यहाँ से चल जाने के बाद यह कहा रहेगा, क्या खाएगा, इसका कुछ सोचा है ?"

"अपने भाइया के पास चला जाएगा ।"

"भाई इस बोझ को हरगिज नहीं रखेंगे । वहाँ उनकी मार खाएगा, इसस तो अच्छा है यहीं भीख माग कर पडा रहे ।"

"इसके भाई चाहेंगे तो इसे यहाँ से ले जाते वक्त ट्रेन से रास्ते मे कहीं उतार देंगे ।" मुझे स्पष्ट लगा "उतार देंगे" के स्थान पर उसके मुह से 'धक्का दे देंगे' की बात निकलते-निकलते रह गई थी । वह बात सभाल कर बोली- "वहाँ भीख मागकर गुजारा कर लेगा । नहीं तो हमारी आँखो से कहीं दूर तो मरेगा ।"

मैं चुप था क्या कहता ? मनुष्य की प्रकृति ही ऐसी है कि वह नकारा जीवन सहन नहीं कर सकता। मैंने धीरे से अपने मन की बात मित्र को चलते-चलते कह डाली।

"यार, नाटकीय जीवन की अनुभूति करना ही जब इतना कठिन है तो इसे भुगतना "

"इस हालत मे प्राणी के लिये क्या नाता और क्या रिश्ता ? इसीलिए यह औरत पति और बच्चो के प्रति निर्मम है।"

"जब अपना ही जीवन स्थिर नहीं है तो अन्यो की चिन्ता कैसे करे?"

"इसकी असहाय अवस्था पर तरस खाकर मैं इसकी मदद करता हूँ।"

मित्र की बात पर मैं मन ही मन विचार कर रहा था कि यह उसकी दयानतदारी है या मजबूरी से लाभ उठाने की चाल। खैर ! कुछ भी हो उस औरत की कोठरी की याद करके मैं सिहर उठा।

मेरा जी कसैला हो गया।

मैं भारी मन और बोझिल कदमो से मित्र के साथ चल रहा था। वहाँ अंधेरे का सैलाब था।



कुछ ठहर कर वह फिर बुदबदाया- "एक गरीब-अनपढ़ औरत को अपनी अस्मिता की लड़ाई में अस्मत बचती ही कहाँ है ? फिर वह क्यों न अपनी अस्मत का सौदा करे ।"

लगा कि इस औरत के घर का माहौल देखने के बाद दोस्त का मन अब आत्मग्लानि से भरा हुआ था, वह उसके साथ होटलों मे ही चतियाता होगा। इस घर म वह पहली बार आया होगा । सही है, दूर और पास मे बहुत अन्तर है ।

"इसका आदमी बिल्कुल नाकारा है, हिजड़ा! कुछ दिन पहले मैं इसके यहा आया था तो इसका कोई तथाकथित भाई यहा आया हुआ था। उससे यह अपने पति के बारे मे कह रही थी ।" मित्र बोलता जा रहा था।

"इसकी हालत तो देख ही रहे हो । इतने साल हो गए, न कुछ कमाता है, न किसी काबिल है । घर म पाँच प्राणी हैं । तीन बच्चे और दो हम । जिन्दा रहने के लिये क्या-कुछ नहीं चाहिये । कुछ पुश्तैनी रकम-जमीन थी, लेकिन इसके भाइयो ने सब-कुछ छीन लिया और इसे मार-पीट करके घर से बाहर बेदखल कर दिया यह तो अपने भाइयो से मेरी रक्षा भी नहीं कर सका ।"

"मैं इसको अब अपने साथ ही ले जाऊँगा ।" उस भाई ने कहा था ।

"और यह यहीं रह जाएगा। अपाहिज है इसकी देख-भाल कौन करेगा ?"

मेरा इशारा इस औरत की पति की तरफ था ।

"बहुत साल तक किया है मैंने इसके लिये बहुत कुछ । रोटी भी मेरी कमाई की खाता है यह ।"

"तुम्हारा पति है ।"

"हुँ म् पति ।" उसने पिच्च से एक तरफ थूकते हुए विद्रूपता से अपने होठ सिकोड लिये ।

"तुम्हारे यहाँ से चल जाने के बाद यह कहा रहेगा, क्या खाएगा, इसका कुछ सोचा है ?"

"अपने भाइयो के पास चला जाएगा ।"

"भाई इस बोझ को हरगिज नहीं रखेगे । वहाँ उनकी मार खाएगा, इससे तो अच्छा है यहीं भीख माग कर पडा रहे ।"

"इसके भाई चाहेगे तो इसे यहाँ से ले जाते वक्त ट्रेन से रास्ते मे कहीं उतार देगे ।" मुझे स्पष्ट लगा, "उतार देगे" के स्थान पर उसके मुह से 'धक्का द देगे' की बात निकलते-निकलते रह गई थी । वह बात सभाल कर बोली- "वहाँ भीख मागकर गुजारा कर लेगा । नहीं तो हमारी आँखो से कहीं दूर तो मरेगा ।"

मैं चुप था क्या कहता ? मनुष्य की प्रकृति ही ऐसी है कि वह नकारा जीवन सहन नहीं कर सकता। मैंने धीरे से अपने मन की बात मित्र को चलते-चलते कह डाली।

"यार, नाटकीय जीवन की अनुभूति करना ही जब इतना कठिन है तो इसे भुगतना "

"इस हालत मे प्राणी के लिये क्या नाता और क्या रिश्ता ? इसीलिए यह औरत पति और बच्चो के प्रति निर्मम है।"

"जब अपना ही जीवन स्थिर नहीं है तो अन्यो की चिन्ता कैसे करे?"

"इसकी असहाय अवस्था पर तरस खाकर मैं इसकी मदद करता हूँ।"

मित्र की बात पर मैं मन ही मन विचार कर रहा था कि यह उसकी दयानतदारी है या मजबूरी से लाभ उठाने की चाल। खैर। कुछ भी हो, उस औरत की कोठरी की याद करके मैं सिहर उठा।

मेरा जी कसैला हो गया।

मैं भारी मन और बोझिल कदमो से मित्र के साथ चल रहा था। वहाँ अधेरे का सैलाब था।



आषाढ़ का तपता दिन

ओम प्रकाश शर्मा

आषाढ का तपता हुआ दिवस, मध्याह्न का समय, प्रखर धूप स त्रस्त समस्त जीव लोक तरु तले विश्राम लीन, शून्य व्योम वीथी के एकाकी पथिक भगवान भास्कर अस्ताचल की ओर बढ रहे थे, ठीक उसी प्रकार असावलम्बी कृष्णकुचितकेश कटि मे मोञ्जो, दाँयें हाथ मे कमण्डल और वक्ष पर सुशोभित यज्ञोपवीत सूर्य के सामन तेजस्वी एक ब्रह्मचारी अमरावती से आचार्य शुक्र के आश्रम की ओर बढ रहा था। मुख पर प्रस्वेद बिन्दुओ को चीर कर चिन्ता की अस्पष्ट रेखाये झलक रही थीं। फिर भी "कार्य वा साधयामि देह वा पातयामि" का सकल्प लिये तीव्रगति से लक्ष्य की ओर बढ रहा था। आचार्य शुक्र का आश्रम समीप नहीं था, फिर भी ब्रह्मचारी सूर्यास्त से पूर्व गन्तव्य पर पहुँच जाना चाहता था और इसीलिये उसकी गति तीव्र से तीव्रतर होती चली जा रही थी। कुछ देर बाद आचार्य शुक्र के आश्रम की गगनचुम्बी वृक्षमालिका स्पष्ट दिखाई देने लग गई। ज्यो-ज्यो आश्रम समीप आ रहा था त्यो-त्यो पथिक के हृदय स्पन्दन बढते जा रहे थे। सूर्यास्त से पूर्व वह आचार्य शुक्र के आश्रम म था।

अनति विस्तीर्ण नाना प्रकार के पादप पुञ्जो से वलयित, शुक्र-सारिका आदि विहगो से कूजित आश्रम बडा ही मनोहारी था। आश्रम के उत्तरी भाग मे छोटी-छोटी दो कुटियाँ बनी हुई थीं और पूर्व की ओर यज्ञशाला थी जहाँ से सायकालीन यज्ञ धूम उठ रहा था। यज्ञशाला के समीप ही अतिथि गृह बना हुआ था। आश्रम के मध्य म एक छाटा सा सरोवर था। सरोवर के चारो ओर स्फटिक क समान शुभ्र एव स्निग्ध सोपान बने हुए थे, और स्वच्छ शीतल जल द्रवीभूत चन्द्रकान्त मणि सा प्रतीत हो रहा था। नाना प्रकार के कमलो से सुशोभित एव सुरभित जल म मछलियाँ कल्लोल कर रही थी। चारो ओर सुन्दर वेदिकाये बनी हुई थीं। शीतल मन्द सुगन्ध-पवन के झोको ने आगन्तुक का स्वागत करते हुए उसका मार्ग श्रम दूर कर दिया। सरोवर के अति समीप कुञ्ज मे से कोकिल

कण्ठी मिश्रित वीणा का नाद निनादित हो रहा था और जब पथिक की दृष्टि उस ओर मुडी तो स्तम्भित हो गई, बुद्धि जड हो गई, हृदय निस्पन्दित हो गया और चतना शून्य सी हो गई । कुञ्जस्थ वेदिका पर पद्मासना, कन्धो पर झूलते हुए वेणी रहित कुञ्चित केश, ज्योत्सना के समान शुभ्रवर्ण, तन्वगी, कलहसी सी सगीत साधना मे लीन साक्षात् भगवती, सरस्वती सी षोडसी बाला विराजमान थी । उसके स्वरो के उतार चढाव से सरोवर के जल म भी लहरे उठ रहीं थी, पर पथिक का हृदय-सरोवर स्तम्भित हुआ जा रहा था ।

चेतना लोटी । कानो मे देवराज का स्वर गूज रहा था- 'गुरुपुत्र ! राष्ट्र के लिये बडे से बडा बलिदान भी करना पड सकता है । आपका मार्ग मङ्गलमय हो, आप अपनी इष्ट सिद्धि को प्राप्त कर, परन्तु आचार्य शुक्र के आश्रम मे एक विघ्न, अपूर्व विघ्न ।'' चतना लौट रही थी, अस्पष्ट ध्वनि गूज रही थी- ''कच जन्मभूमि की ललचाई दृष्टि तुम्हारे ऊपर है, देश रक्षा का गुरुतर भार तुम्हारे कधो पर है । कच इसे मत भूल जाना- जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।'

साधिका की सगीत साधना समाप्त हुई । सूर्य अस्त हो चुका था । कच की तन्द्रा टूटी तो तेजस्विनी, तपोमूर्ति कन्या सम्मुख खडी थी । उसका मधुर स्वर गूजा- 'देवगुरु आचार्य बृहस्पति के पुत्र कच को प्रणाम स्वीकार हो ।'

'देवि' आगन्तुक का स्वर फूटा ।

'आचार्य शुक्र के आश्रम मे मैं आचार्य की कन्या देवयानी ब्रह्मचारी कच का स्वागत करती हूँ' और कच कुछ बोले कि इससे पूर्व वह पुन बोली- 'ब्रह्मचारी बहुत लम्बा मार्ग तय किया है, अत्यधिक क्लान्त हो आज रात विश्राम कीजिये' कहती हुई देवयानी आतिथ्य का भार एक स्नातक को सोपकर अपनी कुटी की ओर बढ गई ।

भगवान कुमुदनी नामक चन्द्रमा पश्चिम दिशा की ओर लटक चुके थे । पूर्व दिशा म लालिमा छा चुकी थी । और नक्षत्र मण्डली अपनी प्रभा खो चुकी थी । कच भी शय्या त्याग कर चुका था । स्नातका के वेदघोष ने आश्रम की नीरवता भग कर दी थी और सुगन्धित हवनीय द्रव्यो की गन्ध से तपोवन सुरभित हो उठा था । देवयानी पूर्व परिचित वेदिका पर समाधिस्थ साक्षात् मूर्तिवत प्रतीत हो रही थी । कच अभी प्रात कालिक क्रियाओ से निवृत हुआ ही था कि द्वार पर पदचाप क साथ ही 'अतिथि को कष्ट तो नहीं हुआ ? निद्रालाभ ठीक से हुआ?' मधुर स्वर उभर पडे ।

'आपका सहज स्नेह और कष्ट दोनो एक साथ कैस रह सकते हैं देवि' -कच ने कहा ।

'फिर भी अतिथि की सुश्रूषा का भार हमारा कर्त्तव्य है ।

'पर अब मैं अतिथि नहीं रहा ।'

देवयानी के मुख पर मधुर मुस्कान थिरक उठी और वह बोली 'आपके आगमन के मनोरथ को जान सकती हूँ ?'

'क्षमा करे देवि । वह सब तो आचार्य शुक्र से ही निवेदन कर सकूँगा ।'

'देवि नहीं देवयानी ।'

'तो फिर अतिथि नहीं कच ।'

'ठीक है कच ही सही परन्तु पुरुष के इसी दम्भ के कारण समाज मे विकृतिया उभर रही हैं ।'

'देवयानी, मैं आपका तात्पर्य नहीं समझा ।'

'पुरुष ने नारी को समझना ही कब चाहा है । नारी के बिना ही पुरुष पूर्ण बनना चाहता है यही तो छलना है ।'

'देवयानी बुरा न मानों आप अभी गोप्य की अधिकारिणी नहीं हैं ।'

'बुरा क्यो मानूँ, पर कभी सोचा नीति शास्त्रो की रचना किसने की? पुरुष ने सारे लाभ तो अपने पक्ष मे रख लिये'

कच ने कानो पर हाथ रखते हुये कहा- 'देवि । यह तो शास्त्रो की निन्दा है ।'

'यही तो तुम्हारी क्लीवता है, कच'

'दवयानी, इस सौम्य तपोवन मे ये विरोधी भावनाय कैसे जन्मीं आपके मन म ?'

देवयानी मुस्करा उठी, 'घबरा गये कच । य विरोधी भावनाये नहीं । जब तक नारी-पुरुष की सहभागी नहीं होगी, तब तक हम इस हिंसा क ताण्डव को नहीं राक सकगे और आप भी सफल मनारथ न हो सकग ।'

कच चौंक उठा 'तो आप मेरा मनोरथ जानती हैं ?'

'क्या नहीं । तातश्री आश्रम से बाहर गये हुए हैं । उनक लौटने म तीन दिन लगगे । आपका मनारथ दुष्कर है, फिर भी मैं यथाशक्य सहयाग प्रदान करूँगी ।'

'यह सब आपन कैस जाना ।' कच विस्मित था ।

'कच । तुम यह क्या भूल जात हो यह आश्रम कुटिल राजतत्र स भी जुड़ा है।' कच अपन को बड़ा लज्जित सा अनुभूत कर रहा था कि वह इतनी सी साधारण बात का नहीं जान सका ।

अभी सूर्यदेव की किरणों म प्रखरता नहीं आई थी । आश्रम के मुख्य द्वार पर शिष्य चहल-पहल थी । प्रभात की घड़िया बीत चुकी थीं और दीर्घ प्रवास के बाद लौटकर आचार्य शुक्र आश्रम म प्रविष्ट हो चुके थ । स्वागतार्थ [illegible] । उमड़ी भीड़ म कच सबस पीछे खड़े थ, परन्तु गुरुदेव का कुशलक्षेम

का पहला प्रश्न कच से हुआ। देवयानी ने मध्यस्थता करते हुए सारा वृतान्त कह सुनाया। मध्याह्न मे कच को आने को कहकर आचार्य अपनी कुटी मे जा चुके थ।

नियत समय पर कच आचार्य के समक्ष उपस्थित हुआ। बिना किसी भूमिका के आचार्य ने पूछा- 'ब्रह्मचारी जान सकता हूँ तुम्हारा आगमन कैसे हुआ ?'

'सजीवनी विद्या प्राप्त करने।' शकित मन कच ने कहा।

'क्या कहा सजीवनी विद्या सीखने ? परन्तु कच यह सम्भव न हो सकेगा और अतिथि को निराश करना भी महान पातक है। अत सजीवनी तो नहीं, परन्तु मैं तुम्हे राजनीति के सम्पूर्ण कुटिल दाव-पेचो की सागोपाग शिक्षा प्रदान करूँगा।'

'परन्तु गुरुदेव मेरा आगमन मात्र सजीवनी विद्या प्राप्त करने हेतु ही हुआ है राजनीति से मेरा कोई प्रयोजन नहीं।'

'हठ कर रहे हो कच ! अस्तु इसके लिये कुछ प्रतीक्षा करनी होगी और दानवराज वृषपर्वा को भी इसके लिये विश्वास मे लेना होगा। तब तक देवयानी के सरक्षण मे सावधानी से रहना।'

'जैसी आज्ञा गुरुदेव।' कह कच ने सिर झुका दिया और आश्वस्त, प्रसन्न मन देवयानी के पास चला गया।

'आइये कच ! इष्टसिद्धि हुई ?' देवयानी ने पूछा।

'आपकी कृपा से ।'

'नहीं, नहीं कच, कृपा नहीं सहभागिता कहो। अच्छा कच एक बात पूछूँ बुरा तो नहीं मानोगे ?'

'पूछो देवयानी, पूछो'

'सजीवनी विद्या सीखने से क्या दानव देवताओ से डर जायगे ? क्या दोनो पक्षो की युद्ध लिप्सा समाप्त हो जायेगी ? देव और दानव क्या शान्ति से जी सकगे ?'

'मैं यह सब तो नहीं जानता देवयानी परन्तु युद्ध मे देवगण दानवा की समता अवश्य कर सकेगे।'

'पुरुषार्थ का दम्भ भरने वाले पुरुषो की यही तो भूल है कच, युद्ध का परिणाम कितना विनाशकारी होता है। सोचा है कभी ?'

'जीने के लिये युद्ध अपरिहार्य है। देवयानी तुम स्त्री, पुनश्च मुनिकन्या, क्या समझोगी युद्धो की अनिवार्यता ?'

'छलना, प्रवचना मिथ्याभिमान ओह! क्या आप जैसे मनीषी भी यही सोचेगे तो कैसे त्राण होगा इस वसुधा का ? "सर्वेभवन्तु सुखिन" क्या होगा

आषाढ की पहली वर्षा ने तपती धरती के वक्ष को आप्लावित कर दिया। सौंधी गन्ध उठने लगी। आकाश काली-काली घन-घटाओ से भर उठा। कच लौटने को अधीर हो उठा परन्तु आचार्य की आज्ञा के बिना विवश था। कुछ समय से देवयानी का मिलना- जुलना भी प्राय नहीं हो रहा था। विगत और आगत को जोडने का प्रयत्न सा करता हुआ कच ध्यानस्थ हो गया। मानस पर उभर रहे थे, एक नय युग का सूत्रपात और कर्णधार दानो। देव संस्कृति दुर्बल आदि आदि देवयानी के शब्द। फिर लगा अन्त स्तल से कोई पुकार रहा है, कच अब चले जाओगे। सम्भवत फिर न देख पाओ इन आश्रमो के मृगशावको को तरु पादपो को, इन गिरि निर्झर काननो को और न जाने क्या-क्या। चिन्तन कितना दीर्घ होता यदि देवयानी ने आकर ध्यान भग न किया होता।

'गुरुकुल वास सानुकूल रहा कच ?'

'पूर्ण काम हुआ देवि आपकी कृपा से।'

'पुरुष तभी तो स्वार्थलिप्सा की प्रतिमूर्ति है कच। आज मैं फिर देवि हो गई।'

'क्षमा कर दो देवयानी मुझसे भूल हो गई।'

'बुरा न मानो, चलो आज एक नये युग का सूत्रपात करे। आओ भी न, हँसी की बात का बुरा नही मानते।' देवयानी उठकर चल दी और कच भी पीछे-पीछे चलने लगा। दोनो चले जा रहे थे। कोई मौन भग करने का साहस नहीं कर पा रहा था। सुन्दर उपवन, चहकते विहग वृन्द हरित-भरित सुरम्य घाटी कलकल छल-छल करता झरना आकाश मे उमडते-घुमडते बादल और मन्द-मन्द बहता पवन, कुछ-कुछ कहता सा प्रतीत हो रहा था।

'सजीवनी पाकर क्या देवगण-दानवो पर विजय प्राप्त कर लेगे कच' मौन तोडते हुए देवयानी ने पूछा।

'नि सन्देह देवयानी।'

'यहीं पर तो भूल कर रहे हो कच। पराजय से निरन्तर प्रतिशोध की भावना भडकेगी। हिंसा का अनवरत ताण्डव होगा। विश्वशान्ति सकट में पड गई कच। दो ब्रह्मास्त्रधारी शत्रु भाव से क्या शान्ति से जी सकेगे ?'

'परन्तु अप्रतिहत शत्रु से त्राण पाने के लिये शक्ति साधना से अतिरिक्त कोई उपाय है ?'

'है कच। प्रेम और मैत्री का सदेश, संस्कृतियो का आदान प्रदान। नवीन सम्बन्धो की स्थापना और हृदयो का मिलन।'

'यह सब कैसे होगा देवयानी। मैं समझ नहीं रहा और तुम पहेलियां बुझा रही हो।'

इस वैदिक घोष का ? साचो कच युद्ध का परिणाम कितना वीभत्स हाता है। निर्दोष नारियां का सुहाग उजड जाता है, कितनी नारियां कुत्सित पर पुरषो की भोग लिप्साग्नि म सतीत्व को हाली जलान को, और कितन बच्चे अनाथ जीवन जीने को विवश हो जाते हैं। विनाशकारी अस्त्र-शस्त्रा के दुष्परिणाम अभागी आगामी पीढ़ियां तक को भोगने पडग कच। अत्याचार आर शोषण की अन्तहीन साधना ओह! कितना कुत्सित कितना घृणित युद्ध और अपरिहार्य! अनिवार्य।'

'परन्तु दवयानी जीवन के कठोर धरातल पर आम भावनाओं और सवदनाओ स तो काम चल नहीं सकता।'

'भूल रह हो कच। छोडना होगा युद्ध सस्कृति को कच क्या अच्छा हो देव-दानव मिलकर सृजन के गीत गाये।'

'देवयानी यह तो असम्भव है।'

'शौर्य के दम भरन वाले पुरुषो। क्लीव कच असम्भव भी कुछ होता है ?' देवयानी मुस्करा उठी और बाली- कच चला एक नये युग का सूत्रपात करें विश्वमगल के लिये और कर्णधार बन जाय हम दानो और हा जाय मिलकर दो सस्कृति एक। एक नई सस्कृति का जन्म दें और दें एक नव सदश करुणा-मुदिता-मैत्री और प्रेम का दवा को दानवा को।

'देवयानी कहाँ देवा को पावन सस्कृति, और कहाँ दानवा की दूषित प्रवृत्ति।'

'कच दोनो पक्ष पथ भ्रष्ट हैं। दवा की सस्कृति निबल है और दानवा की उच्छृखल। यदि दोनो मिल जाय कच तो एक ऐसी आदर्श उद्‌भावना का जन्म हा जहाँ प्रेम की पुण्यसलिला भागीरथी हिलार ल उठे। हागा शौर्य की ललित साधना का जन्म, और होगा युद्ध निशा का अवसान।'

देवयानी के प्रखर पाण्डित्य एव अप्रतिहत तर्कों स कच अभिभूत सा हो गया। हर भत्र म देवयानी उसस आग प्रतीत हा रही थी। समय जात देर नहीं लगती। दवयानी के सहज स्नेह और मैत्री को पा वह सानन्द विद्या अध्ययन करने लगा। धीर-धीर उसन अपनी सेवा और निश्छलता स गुर का मन जीत लिया और पूर्णकाम हो गया। पूरा एक वर्ष बीत चुका था। कच पुन दवलोक जाना चाहता था परन्तु अभी गुर न आज्ञा प्रदान नहीं की थी। इस अन्तराल म कच मन ही मन देवयानी क सहयोग की सराहना करता रहता था। छाया की तरह साथ देने वाली हर विपत्ति से रक्षा करने वाली विदुषी बाला देवयानी कच के हृदय की अतल गहराई तक उतर चुकी थी। कष्ट था अनति दूर का विछोह। अचानक कच स बिना कुछ कहे आचार्य शुक्र आश्रम से चले गय कहीं दूर दीर्घप्रवास क लिये।

आषाढ़ की पहली वर्षा ने तपती धरती के वक्ष को आप्लावित कर दिया। सौंधी गन्ध उठने लगी। आकाश काली-काली घन-घटाओं से भर उठा। कच लौटने को अधीर हो उठा परन्तु आचार्य की आज्ञा के बिना विवश था। कुछ समय से देवयानी का मिलना-जुलना भी प्राय नहीं हो रहा था। विगत और आगत को जोड़ने का प्रयत्न सा करता हुआ कच ध्यानमग्न हो गया। मानस पर उभर रहे थे एक नये युग का सूत्रपात और कर्णधार दोनों। देव सस्कृति दुर्बल आदि आदि देवयानी के शब्द। फिर लगा अन्त स्तल से कोई पुकार रहा है, कच अब चले जाओगे। सम्भवत फिर न देख पाओ इन आश्रमों के मृगशावकों को, तरु पादपों को, इन गिरि निर्झर काननों को और न जाने क्या-क्या। चिन्तन कितना दीर्घ होता यदि देवयानी ने आकर ध्यान भंग न किया होता।

'गुरुकुल वास सानुकूल रहा कच ?'

'पूर्ण काम हुआ देवि आपकी कृपा से।'

'पुरुष तभी तो स्वार्थलिप्सा की प्रतिमूर्ति है कच। आज मैं फिर देवि हो गई।'

'क्षमा कर दो देवयानी मुझसे भूल हो गई।'

'बुरा न मानों चलो आज एक नये युग का सूत्रपात करें। आओ भी न, हँसी की बात का बुरा नहीं मानते।' देवयानी उठकर चल दी और कच भी पीछे-पीछे चलने लगा। दोनों चले जा रहे थे। कोई मौन भंग करने का साहस नहीं कर पा रहा था। सुन्दर उपवन चहकते विहग वृन्द हरित-भरित सुरम्य घाटी, कलकल छल-छल करता झरना आकाश में उमड़ते-घुमड़ते बादल और मन्द-मन्द बहता पवन कुछ-कुछ कहता सा प्रतीत हो रहा था।

'सजीवनी पाकर क्या देवगण-दानवों पर विजय प्राप्त कर लेंगे कच' मौन तोड़ते हुए देवयानी ने पूछा।

'नि सन्देह देवयानी।'

'यहीं पर तो भूल कर रहे हो कच। पराजय से निरन्तर प्रतिशोध की भावना भड़केगी। हिंसा का अनवरत ताण्डव होगा। विश्वशान्ति सकट में पड़ गई कच। दो ब्रह्मास्त्रधारी शत्रु भाव से क्या शान्ति से जी सकेंगे ?'

'परन्तु अप्रतिहत शत्रु से त्राण पाने के लिये शक्ति साधना से अतिरिक्त कोई उपाय है ?'

'है कच, । प्रेम और मैत्री का संदेश सस्कृतियों का आदान प्रदान। नवीन सम्बन्धों की स्थापना और हृदयों का मिलन।'

'यह सब कैसे होगा देवयानी। मैं समझ नहीं रहा और तुम पहेलियाँ बुझा रही हो।'

'समझ कर न समझने वाले को कौन समझाय ?'

'दवयानी ।'

'सुनो कच, पिताजी की आज्ञा से मैं और तुम लोक मगल क लिये विवाह बन्धन म बध जाय तो निर्बल आर उच्छृंखल सस्कृति मिलकर एक आदर्श समाज की रचना कर सकती है । असम्भव सम्भव हो सकता है । दव और दानव प्रेम स रह सक्ते हैं । परम्परा का बीज बढता हा जायेगा और फिर प्रेम, मैत्री, करुणा ओर मुदिता की अजस्र निर्झरणी बह उठेगी ।'

कच को मानो बिच्छू ने काट लिया और बोला- 'यह सम्भव नहीं हा सकता देवयानी । मैं राष्ट्र क लिय, समाज क लिये प्रतिश्रुत हूँ और राष्ट्र और समाज व्यक्ति स ऊपर है ।'

'ओर व्यक्ति से ही राष्ट्र ओर समाज बनता है । मैं जो कुछ कर रही हूँ वह राष्ट्र और समाज से ऊपर उठकर विश्व कल्याण क लिये है, मात्र भोग लिप्सा क लिये नहीं ।'

'परन्तु बन्धनग्रस्त प्राणी स्वार्थों से ऊपर नहीं उठ पाता ।'

'ओर बन्धन स ही नवसृजन होता है कच । उन्मुक्त तरिनी कूल कगारो को विनष्ट करती है, और वही बध कर सृष्टि का पोषण करती है ।'

'परन्तु देवि ।'

'कच नारी मन को समझो । नारी की ममता ही सुख शान्ति को सम्बल प्रदान कर सकती है ।'

'तुम्हारा सजीवनी विश्वशान्ति को युद्ध की ज्वाला मे झाक दगी ।'

'देवयानी यदि एसा ही था तो सजीवनी प्राप्त करने मे तुमन मुझे सहयोग ही क्या दिया ?'

'कच विद्या का प्रयोग सृजन और विनाश दोनो के लिये ही हो सकता है । दूसर तुम्हारे निराश मन म प्रतिद्वन्द्वी भाव ही उत्पन्न होते । अपनी बात मनवाने के लिये पहल स्वय को भी कुछ त्याग करना हो पडता है ।'

'दवयानी देवराज को यह सत्र स्वीकार्य नहीं है ।'

'कच, इस निर्झरणी के दानो तट देख रहे हो ?'

'देख रहा हूँ ।'

'इनका मिलना क्या सम्भव है ?'

'नहीं ?'

'पर देख रहे हो यह ममतामयी जलधारा दानो किनारो को मिला रही है । उसी प्रकार दानवराज वृषपर्वा और दवराज इन्द्र दोना को मरी ममता, मेरा त्याग और मेरी तप साधना निश्चित हो एक तट पर ला खडा करगी ।'

'परन्तु दवयानी ।'

'कच, देव और दानव शान्ति से जी सकेगे ।'

'मैं विवश हूँ, देवयानी ।'

'कच, एक महा भीषण विनाश होगा और भावी समय इसका उत्तरदायी तुम्हे ठहरायेगा । कच, सोच लो भावी पीढी तुम्हे क्षमा नहीं करेगी ।'

'देवयानी ! मैं लज्जित हूँ ।'

'क्लीव, मूख पण्डित ! तुम्हारी भूल का भयकर परिणाम विश्व को भोगना होगा । महासमर होगा । आह ! मैं नियति को बदलना चाहती थी । कच, तुम्हारी विद्या निष्फल ही रह गई । कच, शस्त्र से हत्या भी होती है और रक्षा भी ।'

कच का मन विचलिन हो उठा पर बोल नहीं सका । देवयानी का स्वर भी बुझ सा गया, नय युग की सृष्टि जन्म से पूर्व ही विनष्ट हो गई ।

कच को आचार्य की दीर्घ प्रतीक्षा नहीं करनी पडी । कच निष्फल विद्या का भार ले अमरावती को लौट रहा था । आचार्य आज्ञा प्रदान कर चुके थे । उषा की पहली किरण फूटी थी । कच देवयानी की कुटी के द्वार पर सिर झुकाय खडा था ।

'आइये कच रुक क्यो गये?' देवयानी ने कहा ।

'मैं कृतघ्न हूँ देवयानी ? मैं अपराधी हूँ ।'

'नहीं कच ऐसा मत सोचिये । मेरा ओर तुम्हारा लक्ष्य एक था । अन्तर इतना ही था कि तुम शक्ति साधना से शान्ति का असफल प्रयास कर रहे थे ओर मैं प्रम स शाश्वत शान्ति की सफल कामना । मैं हार गई और तुम विजयी हुए ।'

कच की दशा बलि के पशु से अच्छी नहीं थी । सिर और झुक गया। उसका स्वर फूटा- 'देवयानी मैं तुमसे विदा लेन आया हूँ ।' वह इतना ही बोल सका ।

साश्रुनयना से देवयानी न विदाई दी और कच देवलोक को लौट चला ।



निर्णय

अरनी रॉबर्ट्स

सुनदा को उस समय बडी बोरियत हुई जब पाँच बजे वह टेबल से उठने ही वाली थी कि पियान ने आकर उस सूचित किया कि साहब उसे याद कर रह थे। इच्छा हुई कि वह मना कर दे। घर जाने का टाइम हुआ कि साहब ने बुला भजा। यह भी कोई बुला भेजने का टाइम था। मल्होत्रा साहब प्राय ऐसा ही करते थे। पता नहीं ऑफिस समय समाप्त होने पर उसे बुलाने म क्या तुक है ? और दूसरे बॉस भी तो हैं- कभी किसी को बेवक्त नहीं बुलाते। ? ग नही मल्होत्रा साहब के दिमाग मे क्या था ? वैसे भी सुनदा को कभी मल्होत्रा साहब अच्छे नहीं लगे-ना व्यवहार से और ना ही व्यक्तित्व से। ठिगना सा कद ओर छाटी-छाटी चालाक आखें मोटे गिलासो वाला चश्मा गर्दन तो जैसे थी ही नहीं उनके, पेट आगे की ओर निकला हुआ और आवाज फटे बास जैसी बेसुरी।

मिसेज धवन जा उसके पास वाली सीट पर बैठती थी एक व्यग्यात्मक मुस्कान बिखेरती हुई बोली- "अच्छा सुनदा आप तो रूकगी साहब के पास, हम चलते हैं। हमारा अब यहा क्या काम। आय एम नाट एन इमपारटेट पर्सन।" सुनदा की इच्छा हुई कि वह मिसज धवन का मुँह नाच ल। उनके दिमाग म हमेशा उलटी-सीधी बात ही आती थीं। जबकि वह अच्छी तरह जानती थी कि मिसेज धवन कैसी औरत थी। मल्होत्रा साहब व अन्य साहबो के पीछे घूमना उनको लल्लो-चप्पो करना इधर को उधर भिडाना और स्वय को उनकी निगाहा मे अच्छा सिद्ध करने का प्रयास करना। सारे ऑफिस मे वह अफलातून क नाम से प्रसिद्ध थीं।

जो आप समझ रही हैं वो अपने दिमाग स निकाल द मिसेज धवन। मैं नौकरी करती हूँ यहा स्वाभिमान गिरवी रखन नहीं आई हूँ। जिस दिन मेरे स्वाभिमान पर आँच आएगी मैं नौकरी से इस्तीफा द दूँगी। सबको अपने जैसा नहीं समझना चाहिए।'

" आप तो बुरा मान गईं सुनदाजी, मेरे कहने का अर्थ यह नहीं था।"

मिसेज धवन अपना लच बाक्स उठाकर तेजी से चली गईं। अन्य कर्मचारी भी लगभग आफिस छोड चुके थे। आज ता वह सोच रही थी कि घर जल्दी जाएगी। पवन को प्रॉमिस करके आई थी कि आफिस से लौटने पर उसे बाजार ले जाऊँगी। कई दिना से वह पी टी शूज और बेल्ट के लिए जिद कर रहा था। आज सुबह तो वह रो भी पडा था सुनदा द्वारा डाट दिए जाने पर, लेकिन बाद म उसने यह कह कर मनाया था उसे कि वह शाम को बाजार ले जाएगी।

शैलेश की असामायिक मृत्यु के बाद सुनदा ही पवन की माँ और पिता सब कुछ थी। पवन को अपने पिता का अभाव महसूस न हो इस बात का भरसक प्रयत्न करती थी वह। पति की मौत ने बुरी तरह तोड डाला था उसे। वह महीनो इस हादस की पीडा से वह उभर नहीं पाई थी। वह अर्द्ध-विक्षिप्त सी हो चली थी पर फिर भी सभाला था उसने स्वय को। आखिर उसे जीना था पवन के लिये। और फिर भाई-भाभी पर बोझ बन के कब तक रहती वह। भाभी ने ता एक माह बाद ही तेवर दिखाने शुरू कर दिये थे। बात-बात पर झुझलाना, अपने बच्चो को अकारण ही डाटना-पीटना महगाई का बहाना बनाकर रूखा-सूखा बदमजा भोजन बना देना। सुनदा के माँ-बाबूजी भी असहाय से सब कुछ दखते-सुनते, पर क्या कह पाते वे लोग? वे स्वय भी ता बड भैया क ऊपर आश्रित थ। युवा पुत्री के वैधव्य न उन्ह ओर दु खी कर दिया था। इस सकट से उबरने का एकमात्र उपाय था सुनन्दा का नोकरी कर लेना या फिर ससुराल म चल जाना, जहाँ शराबी लम्पट देवर के रहत उसकी इज्जत कतई सुरक्षित नहीं थी। एक दिन कह भी तो दिया था उसने- "भाभी भैया तो अब रह नहीं पर तुम चिन्ता मत करो मेरे रहते तुम्ह कोई दिक्कत नहा हागा। तुम इस कचन काया को क्या बरबाद करती हो। तुम मुझे खुश रखो मै तुम्ह खुश रखूगा" और यह कहकर वह बेहूदगी भरी हँसी हँसने लगा था और सुनदा का हाथ पकड लिया था।

/ मारे गुस्स क काप उठी थी सुनदा। इच्छा हुई थी कि एक कस कर चाटा लगाए उस लम्पट क जो अपने बडे भाई के प्रखर व्यक्तित्व का एकदम विपरात घिनौना और निर्लज्ज व्यक्तित्व था। झटके मे अपना हाथ छुडाकर चीखत हुए सुनदा न कहा था- "छी छी शम आना चाहिय तुमको अपनी भाभी क प्रति इतन तुच्छ विचार रखते हुए। तुम्ह अपना तेवर कहते हुए भी मुझ लज्जा आती है। भाभी ता माँ समान होती है। तुमने मुझ समझा क्या है? खबरदार जा कभी मर सामने आए।

शराब मे डूबे हुए उस पतित व्यक्ति ने कहा- "मैं क्या करूँ तुम्हारा रूप ही ऐसा है सुनदा ।"

अपने कानो पर हाथ रख क वह हट गइ थी वहाँ स । उस दिन अपन रूप पर उसे ग्लानि हो आई थी । इच्छा हुई थी कि तजाब स अपना रूप कुरूपता मे बदल डाले । जिस सौन्दर्य पर उसे गव था कभी अब वही सौन्दर्य उसे अपना शत्रु लग रहा था । ससुराल मे वह किसी तरह सुरक्षित नहीं थी, अत उसने यही फैसला किया था कि वह पवन का लेकर अपने मायक चली जाएगी । और फिर यही किया भी था उसने । काफी भागदौड के बाद इस फर्म मे नौकरी मिली थी उसे टाइपिस्ट की । टाइप करना वह जानती थी । अपनी लगन और मेहनत से शीघ्र ही उसने अपना अच्छा स्थान व प्रभाव बना लिया था । लेकिन बहुत सी प्राइवेट फर्मों की तरह यहाँ का बॉस भी महिलाओ के प्रति कोई अच्छा दृष्टिकोण नहीं रखता था । विशेषकर सुनदा को तो वह किसी न किसी बहाने अपने चम्बर मे बुला भेजता था । पर सुनदा क तने हुए चेहरे और उपेक्षित भाव के आगे उसे कुछ कहने की हिम्मत नहीं होती थी ।

"आपने मुझ बुलाया सर ?"

"हाँ, हाँ मिसेज सुनदा कुछ जरूरी लेटर्स टाइप कराने थे । मैं जानता हूँ पाँच बज चुके हैं पर काम बहुत जरूरी है । आप चिन्ता न कर मैं अपनी कार से आपको छोड दूगा घर ।"

"इसकी कोई आवश्यकता नहीं सर मैं बस से चली जाऊँगी । मुझे कारो म बैठन का शौक नहीं है ।"

उसका बॉस मल्होत्रा एक क्षण को सहम गया उसकी सपाट बात सुनकर फिर स्वय का सयत करते हुए बोला "आप तो बुरा मान गईं सुनदाजी आई वाटेड टू हेल्प यू ।"

"थैक्यू सर । हेल्प वे लेते हैं जो अपाहिज होते है या जिन्हे स्वय पर भरोसा नहीं होता । लाइए लैटर्स जो टाइप होने है ।"

बॉस लैटर्स डिक्टेट कराने लगा । सुनदा जानती थी मल्होत्रा की नजरे उसके शरीर पर स्थिर थीं अत उसने अपने वस्त्र ठीक तरह से फैला लिये ताकि शरीर का कोई अग दिखाई न दे । डिक्टेसन लेने के बाद वह लैटर्स टाइप करने बैठ गई । वह जानती थी मल्होत्रा अच्छा आदमी नहीं था । पहले भी वह एक युवा टाइपिस्ट के साथ अशोभनीय हरकत कर चुका था इसलिय वह काफी सतर्क थी ।

"आप कॉफी पीयेगी सुनदा जी ?"

"नो सर थैंक्यू, मे आई रिक्वैस्ट यू टू बी क्वायट फॉर सम टाइम । लैटर्स गलत टाइप हो जाएँगे सर । मल्होत्रा मन मारकर चुप हो गया । उसने

सिगरेट सुलगा ली । पत्र टाइप करते हुए सुनदा की आँखो के सामने श्रीनिवास का चेहरा उभर आया । आज वह जिस पद पर है और जिस सम्मानित ढग से जीविकोपार्जन कर रही है, वह सब श्रीनिवास के ही कारण है । उसी के प्रयत्नो से यह सम्भव हो सका है । यू श्रीनिवास से उसकी पहचान बहुत पुरानी नहीं है । श्रीनिवास सामने के मकान मे प्रोफेसर माथुर के यहाँ किरायदार है और पब्लिक लाइब्रेरी मे पुस्तकालयाध्यक्ष पद पर है । पडौसी होने के नाते घर पर भी आना जाना है । वह बहुत ही अल्पभाषी और सरल स्वभाव का व्यक्ति है । प्रथम डिलिवरी के समय ही उसकी पत्नी की मृत्यु हो गई थी । पत्नी की मृत्यु क बाद उसन स्वय को अपने म समट लिया है । कभी-कभी पवन का अपन साथ बाजार घुमा लाता है । पता नहीं क्या सुनदा श्रीनिवास को देखते ही ढेर सार अपनत्व से भर उठती है । वह नोकरी न मिलने से हार सी बैठी था पर श्रीनिवास ने उसे हौसला बधाया था । उसने अपने किसी परिचित से सिफारिश करवा क यह नौकरी दिलवा दी थी ।

आध घट म लैटर्स टाइप हो गए । मल्होत्रा उसे कॉफी क बहाने रोकना चाहता था पर वह नहीं रुकी और नमस्ते करके ऑफिस से बाहर आ गई । पौन छ बज रह थे । सडक पर निकलते मनचल उसकी ओर अजीब निगाहो स देख रह थे । बस की प्रतीक्षा करती महिलाओ को यह सब रोज ही झेलना होता है । पता नहीं एक अकेली युवती को दखकर क्या सोचते है ये? बाप र । इस शहर के लोग सभ्यता भी कभी जान पाएँगे या नहीं ? एक शोहदा टाइप व्यक्ति उसके पास स सीटी बजाता हुआ गुजरा, भद्दा सा इशारा करता हुआ । उसकी इच्छा हुई दो तमाचे उसके रसीद करे । पर तमाशा खडा हो जाने क डर स वह गुस्से का घूट पीकर रह गई । बस नहीं आ रही थी । वह झुझला उठी और हाथ से इशारा करके एक ऑटो रुकवा लिया आर पता बताकर चलने क लिये कहा ।

सुनदा घर पहुँची तब अधेरा घिर आया था । उसे फिकर हो रही थी पवन की । वह स्कूल स आकर उसकी प्रतीक्षा कर रहा होगा । वह दूसरी कक्षा म पढता था । सुनदा भागती हुई सी घर म घुसी । सामने बदहवास से माँ और भाभी दिखाई दिये ।

"आज बडी दर कर दी सुनदा ।" माँ ने कहा ।

"हाँ माँ काम कर रही थी । जरूरी लैटर्स टाइप करने थे । क्या बात है आप लोग बडे परशान से दिखाई दे रहे हैं?"

"हाँ बेटी पवन सीढिया से फिसल कर गिर पडा । माथे मे चोट आई है । यह तो अच्छा हुआ कि श्रीनिवास जी यहीं थे । तुरन्त स्कूटर पर उस अस्पताल ले गए हैं । साथ मे तेरे बाबूजी भी गए हैं । पता नहीं पवन कैसा होगा ?"

"पवन ।" कहती हुई सुनदा बिलखकर रो उठी । माँ उसे सांत्वना देने लगीं । "चुप कर सुनदा ईश्वर सब ठीक करेगा ।"

"मैं क्या करूँ माँ इस नौकरी के कारण मैं अपने बच्चे को ढंग से नहीं सम्भाल पा रही हूँ ।" वह बदहवास सी कमरे में घूमने लगी । भाभी चाय ले आई पर मन न होते हुए भी उसने कुछ घूट हलक में उतार लिये । बेचैनी बढ़ती जा रही थी । रह-रहकर वह दरवाजे में जाकर बाहर देख लेती थी । सहसा स्कूटर रुकने की आवाज आई । वे लोग आ गए थे । श्रीनिवास पवन को सहारा देकर ला रहा था । उसने रोते हुए पवन को अपने से चिपटा लिया । उसके माथे पर पट्टी बंधी हुई थी । वह बेहद कमजोर नजर आ रहा था ।

"आप चिन्ता मत कीजिये सुनदा जी पवन ठीक है । खून जाने से कुछ कमजोरी आ गई है । पट्टी हो गई, इंजेक्शन भी लग गया दो-तीन दिन में ठीक हो जाएगा । यह काम मुझ पर छोड़ दो ।"

"श्रीनिवासजी की वजह से सब काम तुरन्त हो गया । डॉक्टर इनकी पहचान का था ।" सुनदा के बाबूजी ने कहा ।

भीगी आँखों से श्रीनिवास की ओर देखते हुए सुनदा बोली- "हम आपको कितनी तकलीफ देते हैं इतना तो कोई अपना के लिये भी नहीं करता । किन शब्दों में आपको धन्यवाद दूँ ।"

"उसकी कोई जरूरत नहीं है सुनदाजी एक पड़ौसी होने के नाते यह मेरा फर्ज था ।"

लेकिन सुनदा जानती थी पड़ौसी तो और भी थे, पर इस तरह का निःस्वार्थ व्यक्ति कोई नहीं था । किसी का कोई स्वार्थ होता तो बात करते अन्यथा किसी से कोई मतलब नहीं रखते थे । एक श्रीनिवास थे- एकदम निःस्वार्थ व्यक्ति । बात भी करेंगे तो संक्षिप्त ।

अगले तीन दिनों तक पवन की मरहम पट्टी श्रीनिवास ही करवाते रहे । सुनदा के भाई ने औपचारिकतावश भी पट्टी कराने हेतु नहीं पूछा । सुनदा को लगा कभी-कभी पराये लोग इतना सब कुछ करने को तैयार रहते हैं जो अपने नहीं कर पाते । श्रीनिवास ने सुनदा को ऑफिस से छुट्टी नहीं लेने दी । नई नौकरी के कारण छुट्टी लेने से निश्चित ही वेतन कटता पवन इतना हिलमिल गया श्रीनिवास से कि उसे देखकर अंकिल-अंकिल की रट लगा देता था ।

अचानक एक दिन श्रीनिवास आया तो उसके हाथ पर फफोले और जख्म हो रहे थे ।

"यह क्या हुआ आपको ?" चिल्ला सी पड़ी सुनदा ।

"कुछ नहीं सुनदाजी सब्जी बनाते वक्त भगोनी टेढी हो गई और तेल हाथ पर गिर पडा ।"

वेदना से भर उठा सुनदा का मन। अचानक वह बुदबुदा उठी- "कितना कष्ट उठाते हैं आप। ये हाथ रोटी-सब्जी बनाने के लिये नही हैं। ठहरिए मैं बरनाल लगा देती हूँ।"

"रहने दीजिये मैंने डॉक्टर से दवा लिखवा ली है।"

"एक बात कहूँ ?"

"कहिए।"

"आप पुन विवाह क्या नहीं कर लेते श्रीनिवासजी कब तक इस तरह कष्ट उठाएँगे।"

श्रीनिवास कुछ देर सोचता रहा फिर सहसा बोला- "क्या नहीं यह कमी आप ही पूरी कर देती हैं। मैं बहुत दिनो से यह बात कहना चाह रहा था पर कहत हुए रुक जाता था। अगर आप चाहे तो "

वह एक सास म यह सब कह गया।

हतप्रभ रह गई सुनदा। उसने कभी सपने मे भी नहीं सोचा था श्रीनिवास के मन म यह बात हागी। उसने तो पुनर्विवाह के सम्बन्ध मे कभी सोचा ही नहीं था। और सोचकर होता भी क्या ? उसने तो पवन के लालन-पालन और नौकरी म स्वय को इतना व्यस्त कर लिया था कि इन सब बातो पर सोचने के लिये उसके पास समय नहीं था। श्रीनिवास के इस प्रश्न पर वह घबरा सी गई। उसे हतप्रभ देखकर श्रीनिवास बोला- "आप सोचकर बता दीजिये अपना निर्णय। वैसे मुझ मालूम है आप उचित ही निर्णय लेगी।" यह कहकर श्रीनिवास चला गया।

रात के ग्यारह बज चुक थे। सुनदा की बगल मे पवन था जो बहुत पहले ही सो चुका था, लेकिन विचारो से जूझती हुई सुनदा की आँखा मे नींद नहीं थी। रह-रहकर श्रीनिवास का चेहरा, तो कभी दिवगत पति का चेहरा उसकी आँखा के सामने उभर आता था। शैलेश बेहद प्यार करने वाले पति थे- इतना सौम्य और प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व था उनका कि क्या उस स्थान की पूर्ति श्रीनिवास कर पाएगा और फिर सुनदा अब महसूस कर रही थी कि अनायास ही श्रीनिवास द्वारा किये गय उस पर इतने अहसान क्या उसे पत्नी के रूप मे पा लने का एक क्रमबद्ध तरीका नही था ? छी क्या बिना स्वार्थ दुनिया मे किसी का काम नहीं किया जा सकता। सहयाग सहायता जैसे शब्दा ने भी क्या आज की दुनिया म स्वार्थ का लबादा ओढ लिया है ? उसक लिये नौकरी दिलान म भागदाड पवन के लिये इतना कुछ करना क्या सब मात्र इसलिये था कि वह उसक जीवन मे पत्नी के अभाव को पूरा कर दे। और फिर श्रीनिवास

का इतना विश्वास मुझ पर कि मैं जो निर्णय लूगी उचित हागा यानि उसकी इच्छा क अनुरूप हो होगा । ऐसा आखिर कैसे सोच लिया श्रीनिवास ने । ठीक है वह विधवा है, लेकिन असहाय और निराश्रित तो नहीं है । उसने ऐसा आखिर सोच कैसे लिया कि वह उसके बगैर कुछ नहीं कर सकती । अगर श्रीनिवास नौकरी नहीं दिलाता तो वह निराश होकर बैठ जाती ? टूट जाती ? पता नहीं श्रीनिवास ने ऐसा क्या सोच लिया कि वह एक थकी हुई औरत है और उसमे सघर्ष करने का मादा चुक गया है । शायद यही सब सोचकर उसने सुनदा के सामने यह प्रस्ताव रखा । क्रोध का लावा सा उसके भीतर उबलने लगा यह सोचकर कि मल्होत्रा, श्रीनिवास और इसी तरह के पुरुष नारी को कमजोर समझते हैं । इनका सोच एक ही तरह का हाता है ।

पवन न नींद म करवट बदली । सुनदा ने पवन क चेहरे पर एक दृष्टि डाली । वह सोचने लगी- पवन ने तो पिता के रूप मे शैलेश को ही जाना है । उसके दिमाग मे पिता की जो इमेज है क्या वह श्रीनिवास या किसी और से विवाह कर लेने पर वह खडित नहीं हो जायेगी । और फिर क्या गारटी है कि वह पवन को हमेशा अपना समझ कर ही प्यार करता रहेगा । नहीं वह ऐसा समझौता कभी नहीं कर पाएगी । पवन के प्रति जो वह समर्पण भावन से जी रही है, वह उसमे व्यवधान नहीं होने देगी । वह अपने आप को पूरं तरह से उसके भविष्य को सवारने मे लगा देगी । उसके देह का सुख तो शैलेश के देहावसान के साथ ही समाप्त हो गया । अब तो सिर्फ उसे अपने बेटे पवन के लिये जीना है । कल वह अपने निर्णय से श्रीनिवास को अवगत करवा देगी ।

उसने झुक कर पवन के गालो को चूमा और आँखे मूद कर सोने का प्रयास करने लगी ।



प्रायश्चित

मुरारीलाल कटारिया

विक्षुब्ध मन, कुम्हलाया चेहरा, रूखे-सूखे बडे घने बालो के गुच्छे, फटे-पुराने वस्त्रो से झाँकती कृश-काया, हाथो मे एक मात्र सहारा लकडी, इन सब ने उसे पागल का सा रूप दे रखा था। मुर्दनी छाये चहरे पर आँखे किसी विलक्षणता के क्रारण चमक रही थीं। वह लकडी की होने वाली ठक-ठक से दूर-दूर तक अपनी उपस्थिति का आगाह करता प्रतीत होता था। नगर का बच्चा-बच्चा, युवक-युवतियाँ, बडे-बूढे उसे जानते थे। युवक-युवतियाँ उसकी खिल्ली उडाया करते थे। बडे-बूढे उसे घाघ कहते न चूकते थे। बच्चे पागल कह कर चिढाते, पत्थर मारते और गालियाँ देकर भाग जाते थे। लेकिन वह उफ तक न करता था। आगे बढ जाता था, मानो कुछ हुआ ही नहीं। बूढे इसमे भी उसकी चाल समझते थे। समय की थपेडो ने उसे ठूठ बना छोडा था।

वह आज बडी तेजी से गलियो को पार करता हुआ जा रहा था। एक गली के मोड पर बच्चो की टोली नजर आयी। कुछ पहचाने कुछ अनजाने। अनजाने लडको मे से एक उसे पागल-पागल कह कर कर चिल्लाने लगा। दूसरे बालक भी पागल-पागल चिल्लाने के अलावा गालियो की बौछारे करने लगे। पहले बालक ने दौडकर उसकी लाठी छीनने का असफल प्रयास भी किया। बूढा रुका नहीं, मानो रुकना सीखा ही नहीं। बालक की शैतानी चरम-सीमा पर पहुँच गई। हाथ मे पत्थर लिये उसके सामने आ डटा, बेखौफ। "रूक जा बुड्ढे।" कह कर वह उसकी प्रतिक्रिया जानने को रुका। परन्तु बूढा मुस्करा भर दिया। फिर रास्ता काटकर चल पडा। बालक फिर सामने आया। आग्नेय नेत्रो से देखा। फिर भी मुस्करा ही तो दिया बूढा! लेकिन यह क्या? विधि का कैसा क्रूर मजाक! आँखो के आगे तारे झिलमिला उठे। वह बैठ गया।

उफ! कैसा साहस, चिल्लाहट नहीं प्रतिवाद नहीं गाली-गलौज नहीं । बूढा धोती के एक सिरे से बहते खून को रोकने का असफल प्रयास कर रहा था । कई बच्चे घबराकर भाग उठे । डरता-डरता एक बालक उसके पास आया । पट्टी बाँधी । सुखद स्पश । वह तडफा करता था ऐस सुखद स्पश पाने को । आँखो म आँसू लिय एक आक्रामक बालक सामन खडा था । बूढ ने प्यार से उसके गाल थपथपाते आँसू पोछते हुए उसे पुचकारा । उसके सिर पर प्यार से हाथ फेरकर चल पडा मानो कुछ हुआ ही नहीं । बच्चे उस हतप्रभ जाते हुए देखते रहे ।

वह चला जा रहा था । इस गली का दूसरा छोर मुख्य सडक स जा मिलता था। बूढा अपनी लकडी के सहारे निरन्तर बढा चला जा रहा था, सिर पर रक्तिम पट्टी बाँधे हुए। सडक पर उसे भीड दिखाई दी, अनियन्त्रित भीड । युवा-वर्ग के आक्रोश की भीड।।

गली के छोर पर पहुँचकर उसकी तेज निगाह कुछ ढूढने लगी । उसने सिर इधर-उधर घुमाया । अन्तत वह अपने उद्दश्य म सफल हुआ । वह वहाँ तक पहुँचन का मार्ग ढूँढने लगा । चारो आर भीड ही भीड थी । कुछ नारे लगा रह थे । कुछ थे कि गरमागर्मी मे कुछ का कुछ कर बैठें ।

वह भीड को चीरता धक्के खाता आग बढता गया । वह युवा शक्ति की आग की लपटो की चिन्ता न करते हुए बढता ही चला जा रहा था कि किसी ने उसकी लाठी छीन ली । लाठी हवा म उछली । फिर उछलती ही गई । बूढे का एक मात्र सहारा हवा म और स्वय बूढा ? वह सब कुछ तो खो बैठा था, भरा पूरा परिवार पहल पत्नी, फिर एक-एक करके ताना बच्च । अब उसके पास कुछ भी नहीं बचा था । धन सम्पत्ति भी दूर के रिश्तेदारो मे बँट गई थी । सबने मिलकर उसे पागल करार कर दिया था । लकिन अब जब एक मात्र सहारा लकडी भी छिनती हुई देखी तो वह सिहर उठा । उसका शरीर झुकना सीखा ही नहीं था । प्रकृति उस सजा दता रही वह टूटता गया । परन्तु आज सिर पकड कर बैठ जाने का दिन नहीं था । वह लडखडाता धक्के खाता आगे बढने लगा । बूढे के अदम्य साहस से युवक प्रभावित हुए । एक युवक ने उसे रोक कर कहा- "ए बूढे ! कहाँ चला जा रहा है ? कुचला जायेगा । देखता नहीं युवा वर्ग की अपार शक्ति को ।" बूढे ने झुके-झुके सिर ऊपर करके उस युवक को देखा फिर मुस्करा दिया । उसी समय एक युवा-नेता भीड को चीरता उसके पास पहुँचा । पहले वाले युवक क कान म कुछ कहा । अगले ही कुछ क्षणो मे लाठी बूढे के हाथो म नजर आने लगी । वह

खिल उठा । युवा-नेता का सहारा लिये चल पडा गन्तव्य की ओर । जीप पर पहुँच कर युवा नेता ने माइक पर उद्घोषणा की- "साथियो! आपको जानकर अत्यन्त हर्ष होगा कि आज, इसी घडी, हमारे बीच मे सभी के जाने-पहचाने सबसे लोकप्रिय वयोवृद्ध माननीय भूतपूर्व मत्री उपस्थित हैं । मैं उनस प्रार्थना करता हूँ कि वे आपके सामने मनोद्गार प्रकट करके आप मे एसा जोश उत्पन्न कर दे, जैसा कि वे पूर्व मे भी करते आये हैं, जिससे युवा शक्ति से जा भी टकराये, वह चूर-चूर हो जावे ।" इसके बाद युवा नेता ने नारा लगाया,- "विद्यार्थी एकता !" भीड चिल्लायी- "अमर रहे।" भीड ने साथ दिया "प्रज्वलित रहे ।"

युवा-नेता ने माइक बूढे के आगे कर दिया । बूढे ने बोलना शुरू किया- "युवको! देश के नौनिहालो! अपार शक्ति क सागर ! सबसे पहले मैं आपकी असीमित शक्ति का अभिनन्दन करता हूँ ! यह एकता है ।" नारा गूँज उठता है- "बूढे व युवा वर्ग की शक्ति! अमर रह ।"

बूढे ने बोलना शुरू किया,- "साथियो ! भूल गये हो अपन इस साथी को, उसके क्रियाकलापो को ! नहीं जानते कि मैं कौन हूँ ? आगाह करना चाहूँगा उन भोले-भाले चहरो को, उन निरीहो को कि आपकी अपार सृजन शक्ति का हम जैसे कुछ स्वार्थी, मुझ जैसा स्वार्थी, हाँ - हाँ, मुझ जैसा स्वार्थी दुरुपयोग करेगा ! क्योकि मैं राजनीति का मजा हुआ खिलाडी हूँ । मैं भली-भाँति जानता हूँ कि इस शतरजी राजनीति मे किस मोहर को कहाँ रखूँ कि बाजी जीत जाऊँ ! सबको कठपुतलिया की तरह नचाऊँ । मैं शतरज खेलता रहा, कठपुतलियो को इशारो पर नचाता रहा । परन्तु यह भूल ही गया था कि मरी डार भी किसी और के हाथ म है ।" वह सास लेने के लिये कुछ क्षण रुका । फिर बोलने लगा, "साथियो जोश क साथ होश भी रखो ! जोश-जोश मे यह मत भुला दो कि तुम क्या करने जा रह हो ? आज जिस कारण स तुम प्रदशन कर रहे हो उसक पीछे तुम्हारा उद्देश्य क्या है ? कहीं स्वार्थी तत्वा के चक्कर म पड कर ।" युवा नेता को वृद्ध को अपने विरुद्ध भीड को भडकाते देख आश्चर्य होने लगा । उसने उसके हाथ से माइक छीनना चाहा । परन्तु बुड्ढ म न जाने कहाँ से शक्ति आ गई थी कि उसने युवा नेता को एक आर धकेल दिया । उसने बोलना शुरू किया- "युवको ! मैं तुम्हारी शक्ति का पुन अभिनन्दन करता हूँ । मुझे केवल एक सवाल का जवाब दीजिये । मुझे रोकिये मत ! मैं और कुछ नहीं तुम्हारी ही बात कह रहा हूँ । क्या तुम चाहते हो कि तुम भी मेरी स्थिति म पहुँचा नहीं कदापि नहीं ! साथियो युवा-शक्ति सृजन हेतु है, न कि विनाश हेतु । मैं वही घाघ हूँ न जिसने अपने ही

देश-वासियों के पेट पर लात मार कर अपना घर भरा था। आज न घर रहा, न बीवी और न ही बच्चे। ईश्वर ने क्रूरता नहीं दिखायी, उसने तो मुझे मेरी क्रूरता का दण्ड मात्र दिया है। मुझे रोको मत मुझे कह लेने दो। मुझे तड़फने दो, मैंने न जाने कितनों को सताया, तड़फाया और जिन्दों को जलाया है। हर मोड़ पर मिल जाएंगे तुम्हें, मुझ जैसे स्वार्थी। वे तुम्हें भटका देंगे। तुम्हारी शक्ति से विनाश का मार्ग ढूँढ निकालेंगे। साथियो! सोचो-समझो, फिर कदम उठाओ। अलविदा! अलविदा!!" बूढ़े से माइक छीन लिया गया। न जाने उस पर कितने प्रहार एक साथ हुए। वह डरा नहीं। वह सन्तुष्ट था कि उसे कहने का अवसर मिला। वह भटकती भीड़ को विनाश के मार्ग पर बढ़ने से रोक सका। वह गिर पड़ा॰।



पाखण्डी

रामजीलाल घोड़ेला

विशाल बडा मेहनती और प्रतिभाशाली लडका था। वह सातवीं कक्षा मे पढता था। उसके पिता एक मिल मे काम करते थे। उनके वेतन मे मुश्किल से घर का गुजारा चलता था, परन्तु नाना प्रकार की कठिनाइयो को सहकर भी वे विशाल को पढाये जा रहे थे।

विशाल की माँ पुराने विचारो की थी। वह हमेशा वहमो और अन्ध-विश्वासो की बाते किया करती थी। विशाल को भी वह अन्ध-विश्वासो की मनघडत कहानिया सुनाया करती थी, परन्तु विशाल नये विचारो का होने के कारण इन बातो पर ध्यान नहीं देता था।

विशाल के इम्तहान सिर पर थे। वह अपने घर से थोडी दूर जाकर एक पार्क म हर रोज पढा करता था। वह पूरी तरह इम्तहानो की तैयारी मे लगा हुआ था।

एक दिन शाम को जब वह पार्क मे पढने गया तो कुछ ही देर बाद वहाँ एक बूढा व्यक्ति आया तथा उसकी तरफ हैरानी से देखते हुए बोला बेटा तुम्हारा नाम क्या है?

विशाल ने उत्तर दिया- "जी मेरा नाम विशाल है।"

"किस कक्षा मे पढते हो?"

"सातवीं मे।"

"लगता है, तुम्हारे इम्तहान सिर पे हैं?"

"जी हाँ। इसीलिये मैं तैयारी कर रहा हूँ।"

"परन्तु बेटे! तुम कितनी भी तैयारी कर लो इम्तहान मे पास नहीं हो सकते।" वह व्यक्ति बोला।

यह सुन कर विशाल को हैरानी होने लगी कि वह इतनी मेहनत से पढाई कर रहा है, फिर भला पास क्यो न होगा? वह बोला, "इन्सान अगर मेहनत करे तो कोई भी ऐसा काम नहीं जो नहीं हो सकता।"

"परन्तु बेटा इन्सान के जब ग्रह बिगड जाएँ तो वह किसी काम का नहीं रहता।" वह व्यक्ति विशाल की तरफ ध्यान से देखते हुए बोला।

"श्रीमानजी मैं इन बातों को नहीं मानता। आप जाइये मुझे पढना है।" विशाल ने कहा।

"तुम्हे मानना पडेगा, बेटा। नहीं तो तुम कितनी भी मेहनत क्यो न कर लो कभी पास नहीं होओगे। हमेशा सातवीं कक्षा मे ही रहोगे।"

उस आदमी की यह बात विशाल के मन में तीर की तरह चुभ गइ। वह सोचने लगा कि वह गरीब माँ-बाप का बेटा है। अगर वह कभी पास ही न हुआ तो फिर वह अपने माँ-बाप की सेवा कैसे कर पाएगा। वह कुछ नर्म आवाज मे बोला, "मैं गरीब माँ-बाप का सहारा हूँ बाबा। अगर मैं पास न हुआ तो बहुत बुरा होगा। मेरी सारी मेहनत बेकार चली जाएगी।"

"तुम चिन्ता न करो, बेटा। मैं जो तुम्हारे साथ हूँ। मैं तुम्हारे ग्रह ठीक करूँगा।" उस व्यक्ति ने विशाल के सिर पर हाथ रखते हुए कहा।

"आप ? आप कैसे ठीक करेगे, मेरे बिगडे ग्रहो को ?" विशाल ने पूछा।

"मैं ग्रह ठीक करने के लिय पूजा करूँगा बस हम किसी तरह सौ रुपया का प्रबन्ध कर ले। आज कल एक सौ रुपये कोई बडी चीज नहीं है। अगर तुम पास होना चाहते हो तो सौ रुपये लेकर कल सुबह मुझसे यहाँ मिलना। मैं सब ठीक कर दूगा। एक बात का ध्यान रखना कि इस बात का किसी को पता न चले। नहीं तो पूजा मे विघ्न पडेगा।" वह व्यक्ति इतना कह कर चला गया।

उसके जाते ही विशाल गहरी सोच मे डूब गया। उसे ध्यान आया कि आज उसके पिता को वेतन मिलने वाला है। वह किसी तरह सौ रुपये निकाल लेगा और बाद मे पिताजी को सब कुछ बता देगा।

वह बिना कुछ पढे ही पार्क से घर चला गया। और सारी रात पैसे निकालने की स्कीम बनाता रहा।

सुबह होते ही विशाल ने पिताजी की जेब से सौ रुपये का नोट निकाल लिया और पार्क की तरफ चल दिया।

पार्क मे वह बूढा व्यक्ति विशाल की राह देख रहा था। विशाल ने जाते ही उसे रुपये दिये और कहा "यह लो, बाबा। मैं बडी मुश्किल से यह रुपये लेकर आया हूँ। अब मेरे लिये पूजा करो ताकि मैं पास हो सकूँ।"

"तुम्हे आते हुए तो किसी ने नहीं देखा ?"

"नहीं किसी ने नहीं देखा। आप निश्चित होकर पूजा करिए।" विशाल ने कहा-

''बेटा पूजा यहाँ नहीं होगी । मैं घर जाकर आराम से करूँगा ।'' इतना कह कर वह व्यक्ति उठ कर चलने लगा ।

तभी विशाल के माँ और पिताजी तथा दो-तीन पडौसी वहाँ आ गये । उन्होने आत ही उस व्यक्ति को दबोच लिया और उसकी जेब से सौ रुपये का नोट निकाल लिया ।

''विशाल, तुमने आज पहली बार घर मे चोरी की है । क्या तुम बता सकते हो कि तुमने चोरी क्या की ?'' विशाल के पिताजी ने पूछा ।

''पिताजी, यह बाबा कह रहा था कि मेरे ग्रह बिगडे हुए हैं और अगर मैंने इसे सौ रुपये दे दिये तो यह पूजा करके मेरे ग्रह ठीक कर देगा । और मैं कक्षा म पास हो जाऊँगा । नहीं तो मैं सदा सातवीं कक्षा मे ही रहूँगा । इसीलिय मुझे चोरी करनी पडी ।'' कहते हुए विशाल की आँखो मे आसू तैरने लगे ।

''विशाल, तुम इतने समझदार होते हुए भी इस पाखडी की बाता मे आ गये और वहम का शिकार हो गये । तुम तो कभी मेरी बातो की तरफ भी ध्यान नहीं देते थे । फिर उसकी बातो मे कैसे आ गये ?'' विशाल की माँ ने कहा ।

''माँ, मुझसे बडी भूल हो गई है । मुझे माफ कर दो । आगे से कभी ऐसी बाता को नही मानूगा ।'' विशाल बोला ।

''तुम्हारे साथ अब मैं भी कभी इन बाता को नहीं मानूगी । मुझे नहीं मालूम था कि अन्धविश्वास की बाते इन्सान को चोरी करने पर भी मजबूर कर देती हैं ।'' विशाल की माँ ने विशाल के सिर पर हाथ रखते हुए कहा ।

इसके बाद उस पाखडी व्यक्ति को पुलिस के हवाले कर दिया गया और विशाल माता-पिता के साथ घर की तरफ चल दिया ।



काश! मुझे नींद न आती

शकुन्तला गौड़

स्टेशन पर काफी देर रुकी रहने के बाद जनता गाडी चली ही थी कि किसी औरत का विद्रोहात्मक स्वर सुनाइ पडा । मैं नहीं चढूगी गाडी म नहीं मैं नहीं । इतने म रेल्वे के तीन चार वर्दीधारी सिपाही उस औरत को डिब्ब म धकलत हुये उसी के साथ गाडी म चढ गये । लकिन वह औरत अभी तक भी विरोध प्रकट कर रही थी । एक बडी-बडी मूछो वाले सिपाही ने उस मोटी सी गाली देते हुए चुपचाप बैठन को कहा । गाडी अपनी गति से चल पडी थी । थोडी देर डिब्बे मे सन्नाटा छाया रहा । वह भयभीत हिरणी सी चारा ओर देख रही थी । एक नजर देखने पर कोई भी उसे पागल कह सकता था, किन्तु उसके बोलने का तरीका ऐसा था कि उसे पागल नहीं माना जा सकता था । उसके रूखे और उलझे बाल और मैले फटे कपडो से लग रहा था कि वह महीनो से नहीं नहाई हागी । वह सभी यात्रियो की दृष्टि का केन्द्र बिन्दु बनी हुई थी ।

वह थोडी-थाडी दर म उन सिपाहिया की ओर देखती और बडबडाने लगती । उसकी आँखो मे घृणा और क्रोध झलक रहा था । उसके विषय मे जानन के लिय मरी जिज्ञासा तीव्र हो गई थी । मैंने उससे पूछा- तुम्हारा क्या नाम है बहिन ? वह चुप । मैंने पुन पूछा- बताओ न बहिन तुम्हारा क्या नाम है ? कहाँ से आई हो ? कहाँ जा रही हो ? कुछ क्षण चुप रह कर वह झुझलाती हुई बोली- क्यो पूछ रही हो मेरा नाम और पता ? क्या करागी नाम गाँव पूछ कर ? सब बकवास है- कोई कुछ भी नहीं कर सकता सब झूठी हमदर्दी दिखात हैं । न जाने कितनी बार किस-किस को नाम पता बतला चुकी हूँ । सभी भूखे-दरिंदे-नीच कहीं के कहते हुए उसने उन सिपाहिया की ओर देखा । वे सिपाही भी उसी की ओर देख रहे थे । उनमे से एक सिपाहा ने दोन म रखी हुई पकौडिया उसे खाने के लिये दी, किन्तु

उसने वह दोना चलती गाडी की खिडकी से बाहर फक दिया और आँखो से आग बरसाते हुए कहा- मुझे तुम्हारी कोई चीज नहीं खानी भले ही भूखी मर जाऊँ । मक्कार कहीं का । मैंने उसे सहलाते हुए कहा अच्छा मत खाओ उनकी कोई चीज, मेरे पास खाना है वह खालो । लेकिन उसके स्वाभिमान को वह भी स्वीकार नहीं हुआ ।

थोडी देर यू ही चुप्पी छाई रही । मैंने उसे फिर कुरेदा- तुम्हारा घर-परिवार, बच्चे, पति सब कहाँ है ? वह कुछ पल मुझे देखती रही फिर सिसक उठी । उसका स्वर फूटा- क्या बताऊँ दीदी ! मैं विदेश की रहन वाली हूँ, मैंने इटर तक पढाई की है, मेरे प्यारे-प्यारे दो बच्चे थे, छोटा सा घर ससार था हमारा । मेरे पति एक कम्पनी मे क्लर्क थे । बडे आराम से जिन्दगी गुजर रही थी, लेकिन हाय ! रे मेरा भाग्य ! मेरे पति को न जाने कैसे शराब और जुए की लत लग गई और हमारा सब कुछ समाप्त होता गया ओर एक दिन तो वह द्रोपदी की तरह मुझे जुए मे हार गए ।

मुझे पता चला तो मैं बच्चो को लेकर वह शहर छोडकर कहीं ओर चली जाने के लिये गाडी मे सवार हो गई किन्तु मेरे दुर्भाग्य ने वहाँ भी नहीं छोडा । मेरा पति नशे मे धुत अपन जुआरी-शराबी साथियों को लेकर उसी गाडी म सवार हो गया था । आखिर उन्हाने हमारा डिब्बा ढूढ ही लिया और गाडी मे ही मुझे पीटा, घसीटा और भरे डिब्बे मे उसके साथियो ने मेरे साथ फिर मैं नहीं जानती मुझे कौन-कौन, कहाँ-कहाँ ले गए । और न जाने मैं कितनो की हवस का शिकार बनी लेकिन मुझे मौत नहीं आई वह अपना मुह दोनो हाथो से ढाप कर फफक-फफक कर रो उठी ।

मैं उसके सिर और पीठ को काफी देर तक सहलाती रही, उसे सात्वना देती रही और सोचती रही एक मजबूर औरत की असहाय स्थिति पर । अब वह चुप और शान्त थी । मैंने निश्चय किया कि अपने गन्तव्य पर पहुँच कर मैं उसकी कुछ न कुछ व्यवस्था अवश्य करूँगी । मैं उसे अपने साथ ही ले जाऊँगी । उसने फिर बाते करनी शुरू कर दी थी । वह अपने बच्चो क लिये तडप रही थी । उसने बातो-बातो मे ही अपना नाम राधा बतलाया था । मैंने उसे अपने पास से खाने के लिये कुछ नमकीन और बिस्कुट दिए । उन्हे खाकर उसने पानी पिया और शान्त भाव से न जाने क्या-क्या सोचती हुई बैठी रही । उसे अब नींद आने लगी थी । वह जहाँ बैठी थी वहीं लेट गई, और थोडी दर म गहरी नींद आ गई उस । डिब्बे म जहाँ जिसे जगह मिली वह वहीं किसी न किसी तरह आड-तिरछे होकर सो रहे थे । उसके विषय म हा साचते-सोचते न जान कब मरी भी आँख लग गइ ।

मैं राधा की आवाज सुन कर चौंक कर जाग गई थी । वह चिल्ला रही थी कुत्ते कमीने नाच शर्म नहीं आती तुझे, मुझे छेडते हुए । मैंने देखा मजदूर जैसा एक अधेड व्यक्ति उसकी गालिया का शिकार हो रहा था । मैंने उसे डाटा तो अन्य यात्री भी कहने लगे, बहिनजी यह आदमी इस बेचारी को काफी देर स तग कर रहा है । मैं उन यात्रियो पर भी बरस पडी कि उन्होंने उसे रोका-टोका क्या नहीं । फिर तो मैंने उस व्यक्ति को अगले स्टेशन पर उतार कर ही दम लिया ।

अब वह आराम स सो रही थी । उसे चैन से सोते देख मुझे तसल्ली हुई तथा मेरे मन म यह निश्चय और भी दृढ हो गया कि इसे अपने साथ ही ले जाऊँगी । गाडी अपनी गति से चली जा रही थी । रात्रि के नीरव और शान्त वातावरण म मुझे भी नींद आने लगी थी ।

कोलाहल सुनकर मेरी आँख खुली तो देखा कि गाडी दिल्ली क प्लेट फार्म पर खडी है । मैंने इधर-उधर देखा और अपना सामान सभाला । यात्री उतरने की उतावली मचा रहे थे , किन्तु राधा कहीं नहीं दिखाई दे रही थी । मैंने आस-पास क यात्रिया स उसके विषय म पूछा तो किसी ने बतलाया कि उसे तो पिछले स्टेशन पर ही उन सिपाहियो ने उतार लिया था । यह सुनकर मुझे बहुत दुख हुआ । स्वय को बहुत कोसा । मैं उसकी कुछ भी सहायता न कर सका । वह न जाने कहाँ-कहाँ भटकेगी? कितने और अत्याचार होगे उस बेचारी पर ?

उसकी भोली और मासूम सूरत मेरी आँखो के सामने घूम रही थी । अत्याचारियो और दरिंदो के प्रति उसकी आँखो मे घृणा और वाणी म आक्रोश था । अपने बच्चो क प्रति कितनी तडप और मजबूरी के आँसू लिये कितनी दुखी थी बेचारी ।

मैंने अपना सामान उठाया और प्लेट-फार्म पर आ गई । मेरी आँख राधा की तलाश कर रही था । किन्तु उसका कही दूर तक पता न था । मैं अपना सामान उठा कर अपने गन्तव्य की ओर चल पडी थी पर मैं राधा की सहायता न कर सकी । उसका बहुत दुख हो रहा था। काश ! मुझे नींद न आती ।



अकाल

मोहन सिंह

"बेटा सहीराम, गोधू अपनी गाये ले आया क्या ?" सहीराम ने उत्तर दिया-पिताजी, गोधू गाये ले आया है। यह सुनकर आपको दु ख होगा कि आज अपनी चार राठी गाये मर चुकी हैं। गोधू कह रहा है कि गाँव के जगल मे चरने को कुछ नहीं है। कुए के खारे पानी को गाये नहीं पी रही है। यही हाल रहा तो एक भी गाय बचनी मुश्किल है। पिता का स्वर फिर गूजा- "तीन-चार वर्ष से पानी की एक-एक बूद को हम तरस रहे हैं पर जैसे-तैसे हमने अपने पशुधन को बचा रखा है। यही इस मरुप्रदेश मे, धोरो की धरती मे हमारा वास्तविक धन है। इस वर्ष इस धन की रक्षा करना सभव नहीं लगता। चारे के भाव आसमान को छू रहे हैं। गाँव का 'बोहरा' दस रुपये सैकडा ब्याज लेकर भी उधार पैसे देने को तैयार नहीं। क्या किया जाये? मेरी बुद्धि काम नहीं करती। बेटा, तू ही बता, क्या उपाय करे ?" सहीराम ने फिर उत्तर दिया- पिताजी हमने सदैव लोगो को पैसे दिये हैं। किसी से उधार लेने की आवश्यकता आज तक नहीं हुई। अत किसी से उधार मागते भी शर्म आती है। हमारी अन्तरात्मा कराहती है। पर मरता क्या न करता। अब तो एक ही उपाय है। हमारे पास जो भी गहना है उसे बोहरे के पास गिरवी रख कर परिवार की शान बचायी जाये। अपने प्राणो से भी प्यारे, पशुधन को बचाया जाय।

बाप, बेटे की बातें सुनकर सहीराम की माँ पास मे आकर कहने लगी। बेटा, क्या बात कर रहे हो। घर म अनाज भी पन्द्रह-बीस दिन का ही है? सहीराम माँ से बोला- माँ इसके बार मे हम विचार कर रह हैं। घर म अनाज नहीं, बुखारिये सारी खाली हो गई, पशुओ के लिय चारा नहीं। माँ हमारी वर्षो स अर्जित शान जायेगी मान जायेगा। अब तू ही हमारी सहायता कर सकती है। मैं हाथ जोड कर निवेदन करता हूँ कि तेरे पास जो गहने हैं वे मुझ दे दे जिससे उन्हे गिरवी रख कर मैं पैसे उधार ले सकू।

गहनो को गिरवी रखने की बात सुनकर माँ की आँखो मे आँसू आ गये । भाव विह्वल होकर वह बोली, "बेटा, गहने गिरवी रखने से हमारी इज्जत को बट्टा लगेगा । हमने सदैव लागा की सहायता की है । क्या कोई गहने गिरवी रखे बिना हमे पैसे नहीं देगा ?" सहीराम का जवाब था- माँ इस स्वार्थी ससार मे कौन किसकी सहायता करता है ?

इस पर माँ बोली- बेटा, अकाल ने लोगो के विश्वास को डगमगा दिया है । किसी को विश्वास नहीं कि एक दिन फिर काली कजरारी घटाएँ घिरेंगी उमड, घुमड कर इस मरुधर प्रदेश की सुध लेगी । बूदा स अमृत बरसेगा ये धोल धवल धोरे भी हरियाली के दर्शन करेगे ।

माँ को भावना मे बहते देख कर सहीराम ने पुन कहा- माँ गहने दे दो । माँ बोली- बेटा मेरे पास कौन सा गहना है । गहने तरी बहू के पास हैं । और उसको गिरवी रखने का पता लगते ही कुहराम मचा देगी । अनपढ औरत को घर की कठिनाइ, मान, सम्मान की चिन्ता नहीं हाती । उसे गहना प्राणो से भी प्यारा होता है । वह गहना देने को सहज मे तैयार नहीं हो सकती । हाँ इतना ही क्या बेटा गाँव म खबर फैलते देर नहीं लगगी । कि चौ रतीराम ने गहने गिरवी रखकर छोगमल बोहरे से पैसे उधार लिये हैं । वह भी दस रुपये सैकडा ब्याज देकर ।

अपनी माँ की उलझन एव दु ख का दख कर महीराम न अपनी पत्नी को पास बुलाकर कहा "प्रताप की माँ, तुम्हे पता है, घर मे खाने को अनाज नहीं, पशुओ के लिये चारा नहीं । अकाल मे उधार पैसा नहीं मिलता । बोहरा जा भी पैसे दता है वह गहने गिरवी रखता है । अत तू तेरी 'हँसली' मुझे दे दे जिसस इसे छोगमल के पास गिरवी रख कर तीन-चार हजार रुपये उधार लेकर अकाल का समय काट । वर्षा होने पर फसल होते ही तेरी हँसली छुडा लग । अगर तू हँसली नहीं दती ता चारे के अभाव मे हमारा पशुधन काल कवलित हो जायेगा हम भी भूखे मरेंगे । परिवार की बडी हेठी होगी ।

सहीराम ने अपनी बात समाप्त ही नहीं की थी कि उसकी पत्नी रोते हुए कहने लगी- प्रताप क बाप गहने बार-बार थाडे ही बनते हैं । सोने के भाव आसमान को छू रहे हैं । मेरी प्यारी हँसली तो मेरी बहू के डालूगी । अकाल तो पडते ही रहते हैं । मैं हँसली नहीं दूँगी । चाहे हम भूख मर चाहे पशु । मुझे पता हे आपकी माँ ने आपको सिखाया है। मैंने आपको कभी बताया नहीं आज बताती हूँ गाँव की औरत पनघट पर मुझ कहती हैं कि प्रताप की दादी के पास चाँदी वाले बहुत रुपये हैं । दादी इस समय अपने रुपये क्यो नहीं निकालती ? दादा को मेरे गहने दिखाई देत हैं ।

अपनी पत्नी की बात सुनकर सहीराम को बडा दु ख हुआ। भारी मन से अपने पिता के पास जाकर वह कहने लगा- "पिताजी, मरने की स्थिति हो गई है। पशुधन दिन प्रतिदिन खत्म होता जा रहा है। अत मैं अपने मित्र गोविन्द के गाँव जाकर, उससे पाँच हजार रुपये उधार लाता हूँ, हमने उसे कई बार बिना ब्याज पैसे दिये हैं। आर्थिक कठिनाई मे उसकी सहयता की है।

अनुभवी पिता को किंचित मात्र भी आशा नहीं थी कि गोविन्द पैसे देगा, पर पुत्र का मन रखने के लिये अनुमति दे दी। सही बस द्वारा मित्र के घर पहुँचा। वह घर पर ही था। सहीराम को देख कर वह अन्दर चला गया। ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे वह स्थिति को भाप गया हो। सहीराम ने आवाज देकर उसको बाहर बुलाया। गोविन्द का व्यवहार वस्तुत बदला हुआ था। उसने सामान्य शिष्टाचार के नाते चाय-पानी के लिये भी नहीं पूछा। सहीराम के दु ख का पारावार न रहा। फिर भी हृदय पर पत्थर रख कर सहीराम ने कहा- "भाई, तुम्हे पता है, अकाल पड रहा है। खाने को अनाज नहीं, पशुओ को चारा नहीं। अत पाँच हजार रुपये उधार देकर सहायता करो। जमाना होते ही ब्याज सहित पैसे लौटा देगे। आपत्ति मे मित्र ही सहायता करता है।" गोविन्द बोला- "भाई पैसे कहाँ है ? मेरे पास कोई खजाना थोडे ही गडा हुआ है। मैं तो स्वय कठिनाई मे हू। मेरी हवेली अधूरी पडी हुई है। आने-जाने मे बडी कठिनाई होती है। अत जीप खरीदनी है। मैं आपको सौ रू भी नहीं दे सकता। तुम्हे मेरे पास आना ही नहीं चाहिये था।"

अपने चतुर चालाक मित्र से ऐसा उत्तर सुनकर अकाल की त्रासदी से त्रस्त सहीराम के गुस्से की सीमा न रही, और वह गोविन्द को राम-राम कहता हुआ बस स्टैंड पर आकर तैयार खडी बस मे बैठ गया। स्वार्थी मित्र के व्यवहार को देखकर हठात् उसकी आँखो मे आँसू आ गये। वह फूट-फूट कर रोने लगा। रोने से मन कुछ हल्का हो गया।

सयोग से इसी बस मे सहीराम का ससुर हेमाराम बैठा हुआ था। सहीराम को देखते ही वह उसक पास आकर बैठ गया, दोनो मे बाते होने लगी। सहीराम ने अकाल के सम्बन्ध म ससुर को बताया तो वह कहने लगा- "आप कष्ट क्यो उठा रहे हैं ? मैंने आपको पत्र दिया था। घर का सारा सामान एव पशुओ को लेकर मेरे गाँव आ जाओ। ढाणी मे रहने का प्रबन्ध कर देंगे। हमारे नहरी क्षेत्र मे अकाल का प्रभाव चारे का सकट नहीं है।"

ससुर के मुँह से सहानुभूति की बात सुनकर सहीराम बोला, "चौधरी जी, कितना ही कष्ट क्यो न हो, रिश्तेदार के यहाँ जाना शोभा नहीं देता। व्यावहारिक दृष्टि से भी अच्छा नहीं। रिश्तेदार के पास रहने पर पारस्परिक व्यवहार मे

मधुरता नहीं रहे तो । हाँ, एक बात और आदमी तो फिर भी सहन कर लेता है पर औरत रिश्तेदार को परिवार सहित आने को अच्छा नहीं मानती । यह आप देख ल । ऐसा न हो कि मुझे बाद म नीचा देखना पडे ।''

चौधरी हेमाराम बोला, ''ऐसा कैसे हो सकता है ? आप तो फौरन आ जाओ । मैं ढाणी म पहले हो प्रबन्ध करवा दूँगा । आपको रती भर भी शर्म-शका करने की आवश्यकता नहीं ।''

बाता ही बातो म सहीराम का बस स्टैंड आ गया । सहीराम उतर गया । उसका ससुर आगे चला गया ।

घर जाकर सहीराम ने अपने पिता को गाविन्द के व्यवहार एव ससुर की बात स अवगत कराया ।''

सहीराम की बात सुनकर उसके अनुभवी पिता कुछ नहीं बोले । इस पर सहीराम ने कहा- ''पिताजी बोलते क्यो नहीं गोविन्द स्वार्थी है, निम स्तर का व्यक्ति हे । मेर ससुर का घर अपना घर है । हमे वहाँ काई कठिनाई नहीं होगी । वे ढाणी मे हमारे रहने का प्रबन्ध कर देगे । वे बडे भल एव उदार हृदय व्यक्ति हैं ।

बेटे के मुह स हेमाराम की प्रशसा सुनकर चौधरी से रहा नहीं गया । वे बोले ''बेटा ! दूर के ढोल सुहावने होते हैं रिश्तेदार के पास कई दिन रहने से वहाँ भी आपत्ति मे प्रेम समाप्त हो जाता है । देख ले तरे ससुर ने तो हाँ कर ली । कभी हमारे परिवार और पशुआ को दखकर तरी सास न बिगड जाये ।'' सहीराम ने कहा- नही पिताजी, ऐसा नहीं हो सकता । मैंने इस सम्बन्ध मे उन से स्पष्ट बात की है । अकाल की दारुण दशा से द्रवित पिता ने मन मारकर चलने की स्वीकृति दे दी ।

पाँच-छ दिन मे ट्रक की व्यवस्था कर, परिवार एव पशुओ सहित सहीराम अपनी ससुराल पहुँच गया । ट्रक का सडक पर छोड कर वह प्रसन्न मन तेज कदमा से ससुर के घर पहुँचा । दरवाजे पर ही उसे सास मिल गई । उसने सास को प्रणाम कर कहा- ''माताजी हम परिवार एव पशुओ सहित आ गये हैं । हमे ढाणी म भिजवा दो । आपने ढाणी मे हमार लिये प्रबन्ध कर दिया हागा ।'' ढाणी का नाम लेते ही सास दहाडी ''ढाणी बनवा क गये थे क्या? ढाणी धर्मशाला नहीं । आपको शर्म नहीं आई । ससुराल म आते हुए । रहना है तो तुम आर गीता घर मे रह लो । तुम्हारे माँ-बाप एव पशुआ के लिये यहाँ कोई जगह नहीं है । अकाल पड गया तो हम क्या करे ?'' कहते हुए सास बाहर चली गयी । खाट पर बैठा हुआ सहीराम का ससुर टुकर-टुकर देखता रहा । एक शब्द भी नहीं बोला । वह खामोशी पसरी हुई थी ।



पंडिताइन

सत्य शकुन

मै बहुधा चाय ऑफिस मे ही मगवा लेता हूँ लेकिन आज सोचा वहीं चाय वाली के पास चल कर चाय पी जाए। चायवाली को सभी पडिताइन कह कर बुलाते थ वह हमारा मान-सम्मान करती थी। शायद इसलिये कि हम पढे-लिखे अच्छे वेशभूषाधारी तथा बोलने म मितभाषी थे।

पडिताइन की दूकान क्या थी, एक खोखा था कीकर के पेड के नीचे। कीकर की छाया क नीचे ईंटो पर पत्थर की एक पट्टी रखी हुई थी। इस पट्टी की बगल म कभी-कभी एक मूज की खाट भी बिछी रहती थी और उस पर पडिताइन पसरी रहती थी। उसका इस बेढग सें पसरना मुझे बहुत खलता था। मैं मित्रो को कहता।

"यार यह ढग है क्या पसरने का ? बडी चालू औरत दिखती है।"

"कमर ता इसकी सीधी होती नहीं।" मित्र राय व्यक्त करते।

"में लिफाफा खुलने स पहले की बात कर रहा हूँ।" मैं साकेतिक शब्दा मे कहता। हम आया देख कर पडिताइन स्टोव के पास बैठे लडके को पुकारती।

"चल हट रे। बाबू लोग आए हैं। मैं चाय बनाऊँगी।"

पडिताइन स्टोव पर चाय की पतीली चढा देती। हम कहने की जरूरत नहीं पडती थी- कितनी बनानी हैं। चार मित्रो तक, तो चार म हो जाती कभी-कभा चाय की ज्यादा तलब हाती ता हमम स कोई भी कह दता-

"तीन चार म कर दना।"

पडिताइन का स्वर उभरता।

"हटो मुओ तुम्हारी बाप की पट्टी है क्या ? साहब लोगा को बैठने दो।"

पट्टी पर बैठे हुए आवारा किस्म के युवक इधर-उधर हो जाते। हमारी छाती फूल जाती पडिताइन के इस व्यवहार को देखकर। वह हमसे वी आई पी का सा व्यवहार करती। हम अपने से कुछ दूरी पर बैठे हुए चार-चार व्यक्तियो के समूहो की ओर दृष्टि डालते कि सभवत उन्होंने भी सुना हो। लेकिन वे तो अपने-अपने ताश के पत्तो मे इतने मशगूल होते कि शेष दीन-दुनिया से उन्हे कोई मतलब ही नहीं होता।

पडिताइन से जल्दी उठा भी नहीं जाता था सो चाय के कप हममें से किसी को उठाने पडते। हमे इससे बडी हीनता महसूस होती थी। कुछ देर पहल की आन्तरिक प्रसन्नता ऐसे छू हो जाती, जैसे कि किसी पुलिस के सिपाही को थानेदार कहिए और सिर पर असली थानेदार आ जाए, तो पुलिस के सिपाही की खुशी उडन छू हो जाती है। पडिताइन का चेहरा निर्विकार रहता था।

आज भी हम जब चाय पीने पडिताइन की दूकान पर पहुँचे तो वहा पर मजमा लगा हुआ था। पडिताइन खाट पर लेटी हुई थी, और दो युवक उसके सिरहाने तो दो पैरो की तरफ बैठे हुए थे। हमारे साथ हमारे कार्यालय का चपरासी भी था। आज पडिताइन नहीं उठी बल्कि हमे देखते ही बोली-"कालिये, पट्टी पर से उठ जा। साहब लोगो को बैठने दे। तू सारे दिन बैठे-बैठे थकता नहीं है क्या ? तुलसी तू स्टोव छोड दे। जगदीशजी आज तुम चाय बनाओ।"

एक साथ प्रसारित इन आदेशो की पालना होती, जगदीशजी हमारे कार्यालय के चपरासी थे। वृद्ध व्यक्ति थे। उन्हे हम भाई साहब कह कर बुलाते। व फौरन चाय बनाने बैठ जाते। पता लगता कि चीनी नहीं है। पडिताइन जगदीशजी को आदेश देती-

"जगदीशजी सामने वाले खोखा से चीनी ले आओ।"

जगदीशजी चीनी ले आते। बात जगदीशजी की ही नहीं पडिताइन के अन्य भक्त भी इसी प्रकार उसकी आज्ञा पालन करते। कोई सामने की टूटी से पानी की बाल्टी भर लाता कोई स्टोव साफ कर देता तो कोई खोखे को झाड-बुहार देता, कोई मिट्टी के तेल लाने को भागता-फिरता तो कोई स्टोव को सुधरवाने बाजार दौडता।

"बाबूजी आज तो सुबह से तबियत खराब चल रही है।" पडिताइन हमारी ओर मुखातिब होकर बोलती।

"क्यो ? क्या हो गया ?" हमसे से कोई पूछता।

"वायु का रोग है न।"

"दवाई क्यो नहीं लेतीं आप ?"

"इस रोग मे दवाई क्या करेगी। वैदजी का कहना है, आराम करो।"

"तो आराम करो। घर मे जी नहीं लगता क्या ?"

जगदीशजी हम लोगो को चाय के कप थमा देते। हम चाय की चुस्किया लेते हुए अपने ऑफिस की बाते करने लग जाते। जगदीशजी चाय का कप लेकर पडिताइन के पास बैठ जाते। हम उन दोनो को घुट-घुट कर बातें करते देखकर, आँखो ही आँखो म बाते करते। चाय पीकर पैसे चुका, हम ऑफिस लौट आते। आते समय जगदीशजी को कोई न कोई छेड देता।

"भाईसाहब, आज तो घुट-घुट कर बाते हो रही थीं ?"

जगदीशजी मुस्करा कर रह जाते। हममे से दूसरा बोलता-

"भाईसाहब, काफी पुरानी दोस्ती लगती है पडिताइन से आपकी ?"

"काय की दोस्ती। पडिताइन चलाकर बोल लेती है तो मैं भी बोल लेता हूँ।"

"यह अपने घर क्यो नहीं पडी रहती, भाईसाहब ?"

"सुबह घर से काम कर-कुराकर यह यहाँ आती है दिन भर घर मे क्या करे।"

"इसका आदमी क्या काम करता है ?"

"वैटरनरी मे चपरासी था। दारूबाज है एक नम्बर।"

"अच्छा! पडिताइन तो अपने बीकानेर की नहीं लगती ?" मैं पूछता।

"यू पी की है यह।"

"इसका आदमी भी यू पी का है क्या ?"

"नहीं, वह नागौर का है।"

दस कदम दूर सरदार हॉल मे अपना कार्यालय था। हममे से दो जने मुख्य द्वार से कार्यालय मे प्रवेश करते, और मैं जगदीशजी को लेकर अन्डरग्राउन्ड मे स्थित अपने पुस्तकालय मे आ जाता। तसल्ली से बैठकर सिगरेट सुलगाता और गहरा कस खींचकर अपनी जिज्ञासानुसार प्रश्न शुरू कर देता।

"इसे रहने के लिये यह हनुमानहत्था ही मिला क्या ? इस मोहल्ले मे अच्छी भली-औरत का रहना दूभर है खासकर बिचले भाग मे। और फिर सामने गिन्नाणी, इस मोहल्ले से भी गया गुजरा अपने जमाने में पडिताइन चालू रही होगी। खूब मजे किये होगे ? आप इसे कब से जानते हैं ?"

"यही तीसेक साल हो गए होगे।"

"कितने बच्चे हैं इसके ?"

"चार लडकिया और एक लडका है ।"

"लडकिया ब्याह दी क्या ?"

"तीन तो ब्याह दी एक बाकी है ।"

"अच्छा, अच्छा ! वह जो कभी-कभी दूकान मे आती है। अरे! भाई साहब, वह क्या छोटी है आजकल की लडकिया तो जन्मते ही युवतिया बन जाती हैं । और माँ का असर तो इन पर बहुत ज्यादा पडता है । जैसी माँ, वैसी छोरिया ।"

"पडिताइन ऐसी औरत नहीं है ।"

"अरे भाई साहब आपको क्या पता ? इसकी छोरी के आगे-पीछे लूगाडों की टोली देखत हा न ?

"ये फौज तो इसकी हर लडकी के पीछे रही है मीरकी बीरमी, नीरकी ! अपने ऑफिस के सामने सडक के उस पार पानी की टूटी है न । वहा किसी वक्त सूरज निकलने से पहले ही लूगाडो की लाइन लग जाती थी ।"

क्यो ?

"मीरकी क लिय ।"

"ऐसी कान सी वह श्रीदेवी थी ।"

"अर साहब पूछो मत । गोरी-चिट्टी काली आख गोल चेहरा माती से दाँत "

"अच्छा-अच्छा समझा । आज से कोई बारह-पन्द्रह वर्ष पहले की बात है शायद । मैंने उस लडकी को इसी टूटी के पास पानी की बाल्टी भरते कई बार लडका से भिरा दखा था । मैं उस समय इस दफ्तर म नहीं था । लेकिन पास की ही सिगरेट की दूकान से मैं भी उसकी हरकतो को देखता रहता था । उस लडकी की पानी की बाल्टी को भरने म आधा घण्ट स कम समय नहीं लगता था ।"

"वही थी वही थी ।" जगदीशजी आह्लादित होकर कहत ।

"पन्द्रह साल म तो काफी कुछ बदल गया है । वह भी बदल गई होगी । औरत के पन्द्रह वर्ष का मतलब पचास वर्ष समझो ।"

"क्या बात करते हो साहब ? वह तो अभी भी वैसी है । जोधपुर ब्याही है तीन बच्चे हैं किन्तु अदाएँ वही हैं । आस-पडौस म खूब बदलाव आ गया है किन्तु "

"भाइ साहब इसका मतलब हुआ कि लडको बिगडी हुई नहीं है । बीरमी को नहीं देखा । नीरकी तो मेरे सामने ही ब्याही गई है । गगानगर दी है शायद ।"

"बीरमी थी तो सुन्दर किन्तु एक पैर पर जरा सा खोट था। उसे पडिताइन न कहाँ ब्याहा या बचा, कुछ पता नहीं। ब्याह होने के बाद उसे कभी देखा नहीं। नीरकी ता आपके सामने ही गइ है।"

"अरे वह नीरकी कौन सी सती-साध्वी थी। पडोस के बैंक मे चाय देने जाती थी। आपको पता है, बैंक मे क्या गुल खिलते थे?"

"जवान लडकी गुल नहीं खिलायगी तो और क्या करेगी?"

"यह गलती तो पडिताइन की है।"

"हाँ, हर जवान लडकी की माँ गलत ही होती हे।" जगदीशजी न जाने कहाँ खो गए मुझे तो ईश्वर न कोई लडकी नहीं दी किन्तु जगदीशजी की चार-पाँच लडकिया थीं।

"लडकी के लक्षण ठीक न हो ता क्या माँ को पता नही लगता? बाप ता चलो बेचारा परिवार के लिये दाल-रोटी के चक्कर मे घन चक्कर बना रहता है। माँ की जिम्मेदारी है अपनी लडकियो के चरित्र की।"

मैं अपनी रौ मे बहा जा रहा था। जगदीशजी बोले।

"मै तो पडिताइन को सारा घर सभालते देख रहा हूँ शुरू से। वह लडकिया को सभालती या उस दारूबाज को?"

"भाई साहब लगता हे पडिताइन को बहुत अच्छी तरह जानते हो?" मैं हँसा। भाइ साहब झेप गए और मंद स्वर मे बोले।

"साहब, पडिताइन जब दूकान पर आइ थी ता होगी बीसेक साल की। पूरा मोहल्ला दीवाना था इसका।"

"आप भी थे उनमे?"

"हाँ, मै भी था।"

खूब आनन्द लिया होगा आपने?

"नहीं पर मैंने इसके आगे-पीछे चक्कर खूब लगाए हैं, मैं रात देखता था न दिन।"

इतने मे ऊपर से एक कर्ण कटु स्वर लगभग चीखता हुआ सा अडरग्राउन्ड की दीवारो से टकरा कर पूरे हॉल मे गुजरित हो गया। सैकण्ड भी नहीं हुआ कि वही स्वर पुन अपनी शैली मे उभरा।

"जगदी श अ "

मुझे लगा कोई प्रेतात्मा चीख रही हो। वर्षो पहले बने सरदार हॉल के अन्डरग्राउण्ड मे सुना हे आत्माएँ निवास करती हैं। बीकानेर के महाराजा गगासिह ने इस हॉल को अपने ताजीमी सरदारो के लिये बनवाया था। इस हॉल मे क्या कुछ होता था? रातें कितनी और कैसी रगीन हुआ करती थीं? इनकी दंत कथाएँ धूमिल हो गइ हैं। सुना है अन्डरग्राउण्ड भोग-विलास के

लिये प्रयुक्त होता था। सोच ही रहा था कि अन्डरग्राउण्ड के प्रवेश द्वार पर से तीसरी बार वही स्वर उभरा। वह कोई अतृप्त आत्मा नहीं थी हमारे बॉस थे।

"भाई साहब जाइए। श्रीमानजी बुला रहे हैं।" मैं झुझलाया सा कहता।

"नीचे बैठ रहते हो। मैं आवाज देता रहता हूँ।"

एक चिड़चिड़ा स्वर उभरा। मैंने बॉस का नकचढा चेहरा अपनी आँखो के आगे से हटाया और ऑफिस को काम पर लग गया। लेकिन मुझे अपनी संवेदना टूटती देखकर बडी झुझलाहट हो रही थी सो लेखनी साथ नहीं दे रही थी। पंडिताइन की जगह अब बॉस ने ले ली थी।

बॉस हास्य रस के कवि थे। मैं नहीं कह सकता कि हास्य रस के कवि असंवेदनशील होते हैं। लेकिन इनकी संवेदनशीलता आज तक कहीं नजर नहीं आई। संवेदनहीन चेहरे के साथ निर्पेक्षभावी हृदय जब मिल जाता है तो चेहरा भयावह हो जाता है। इस बात के पीछे जब जाता हूँ तो दिमाग मे आता है कि शायद नाटक करते-करते हास्य कवियो को ऐसी दशा हो जाती है, क्योंकि उस बेचारे को अपनी सारी आन्तरिक अनुभूतियो को दफ्न करके लोगो को हँसाना पडता है। वह अपना चेहरा निर्विकार, निर्लेप और तटस्थ रखता है। लम्बे समय तक अगर इसका अभ्यास जारी रखा जाए तो वह चेहरे की आवश्यकता बन जाती है। उसके बाद ऐसा व्यक्ति हँसेगा भी, तो उसके चेहरे पर थोपी गई मुद्रा परिलक्षित होगी।

बॉस अभी तक मंच और माइक प्रिय थे। संभवत यही कारण था कि उनकी त्वरा तारीफ काबिल था। मंच और माइक पर कब्जा करने के लिये अतिरिक्त क्षमता चाहिये और वह हमारे बॉस मे भरपूर था। उनका मोटो था- "मुझे किसी भी कर्मचारी की बीमारी उसकी परिवार की परिस्थितियां और काम करने की अशक्तता से कोई लेन-देन नहीं है। मैंने आज तक कोई आकस्मिक अवकाश नहीं लिया है क्योंकि मुझे काम प्रिय है चाम नहीं। आदमी को कार्य का भूत होना चाहिए।" यही कारण था कि वह ऑफिस के कर्मचारियों को आपस मे बतियाते सहन नहीं कर सकते थे।

अन्डरग्राउन्ड की सीढियो पर परछाईं नजर आई और साथ ही पदचाप का आभास भी हुआ। सोच भंग हुआ। जगदीशजी थे।

"क्या काम था ?" मैंने सवाल किया।

"पानी पिलाना था।"

"किसे ?"

"कोई बाहर से आया था।"

हमारे बॉस की यह भी एक विशेषता थी कि जो भी उनके पास आए जगदीशजी से मगवा कर एक लोटा ठडा पानी अवश्य पिलवाते थे । गर्मियो मे तो उनका यह कृत्य मानवीयतापूर्ण एव अतिथि सत्कार भरा सिद्ध होता था किन्तु दिसम्बर और जनवरी की कडकडाती सर्दियो मे उनके आग्रह पर बर्फ जैसा पानी पीकर जब लोग जुकाम की पकड मे आते थे, तो उन्हे कोसे बिना नहीं रह पाते थे । उनका सरल एव ठोस सिद्धान्त था कि आए-गए लोगो का सत्कार अति सादगीपूर्ण होना चाहिये । चाय या मिठाई खिलाकर लोगो को बीमारियो की ओर मत ढकेलिये । वैसे वे खुद चाय और मिष्टान्न के बेहद शौकीन थे। मैंने बॉस की आकृति एक ओर छिटकाई और जगदीशजी से बोला, "हाँ तो भाई साहब पडिताइन बीसेक वर्ष की अवस्था मे बिजलिया गिराती फिरती रही होगी । आशिको की खूब मौज रही होगी । पडिताइन को दूकान भी उन्होने खुलवाई होगी । मैंने पीछे की बातो का सूत्र पुन जोडा ।

"दूकान मे है क्या ? जैसी आज है, वैसे ही पहले थी । मैंने कहा न पडिताइन का आदमी दारूबाज है । अपनी सारी तनख्वाह वह दारू पर उडा देता है । पडिताइन ने उसे सुझाव दिया कि वैटरनरी कॉलेज के कई छात्र और प्रोफेसर ऐसे होगे जो होटल मे खाते हैं । यदि वे लोग अपना-अपना टिफिन दे दे तो मैं खाना बना दिया करूँगी और आप उनके पास टिफिन पहुँचा दिया करे शाम और दोपहर को आप खाली टिफिन ले आया करे। उन लोगो को दोनो टैम खाना पहुँच जाया करेगा । इसके आदमी के दिमाग म यह बात बैठ गई । इस प्रकार पडिताइन ने दो पैसा कमाकर दूकान खोली ।"

"लेकिन इस दूकान से इसकी कोई ज्यादा कमाई होती तो दिखती नहीं । सारी कमाई तो इसके इकट्ठे किये ये लूगाड खा जाते होगे, कभी-कभी इसका आदमी भी दूकान पर बैठा दिखता है । यह रगडा समझ म नही आया ।"

"साहब रगडा पैसे का है । पडित को जब पैसे की जरूरत होती है दारू के लिये तो वह दूकान पर आकर बैठ जाता है । दो-चार घण्टे म गल्ला साफ करके चलता बनता है। पडिताइन मर्दानी औरत है । तीन-तीन बेटिया इसी ने ब्याही हैं, बेटे की बहू लाई है और अब चौथी लडकी को ब्याहेगी । गल्ले से कौन कितना पैसा मारता है यह पडिताइन को पता है ।"

"तो वह रोकती क्यो नहीं है इन्हे ?"

"उसका कहना है कि- मैं जिसको भी खोखा सौंपती हूँ उनमे से कोई दारूबाज नहीं है, जुएबाज नहीं है । बेकार जरूर हैं, यदि चीनी-चायपत्ती लाकर किसी को चाय पिलाकर दो पैसा कमाकर ले जाते हैं तो क्या बुराई है । मैं तो पाँचेक किलो दूध लाकर रख देती हूँ और उसके पैसे मुझे मिल जाते हैं ।"

"अजीब चित्तर है पडिताइन क ।"

"साहब ये लूगाड पडिताइन की मदद भी तो पूरी करते हैं। पडिताइन का यहाँ कौन है। आप इसकी छोरियो के ब्याह के समय देखते। सारा काम इन लोगो ने ही सलटाया था। एक बार नगरपालिका वाले इसके खोखे को ले जाने के लिये आए, तो इन्हीं लोगा ने मुकाबला किया था उनका।"

"कॉलेज के छोरो के लिये यह अब भी खाना बनाती है क्या ?"

"जी हाँ उसी से तो यह दो पैसे कमाती है।"

"और इसके सरताज अभी तक नौकरी करते हैं क्या ?"

"जी नहीं वह अब रिटायर हो चुका है।"

"उसका दारू का खर्च कैसे चलता है ?"

"कुछ पन्शन और कुछ पडिताइन के देने से उसका खर्च चलता है।"

"इस गन्दी आदत के लिये पडिताइन उसे पैसे क्यो देती है ?"

"पडिताइन कहती है कि इस आदमी के पीछे आई हूँ सो इसे आखिर तक निभाऊँगी।"

"इसकी सबसे छोटी छोरी के भी पर निकल आए हैं।"

"बाबूजी छोरियो का तो मैं कुछ नहीं कह सकता। लेकिन इस पडिताइन को कभी ऐरे-गैरे क साथ नहीं देखा। इसका स्वभाव खिलदडा है पर चरित्र की पक्की है।"

"तुम्हे क्या पता ? यह बात तो कोई ऐसा व्यक्ति कह सकता है जो इसके साथ चौबीसो घंटे रहा हो।"

"मैं चौबीसो घण्टो की तो नहीं कह सकता किन्तु पडिताइन के पीछे बीस-बीस घण्टे मैंन बर्बाद किय हैं।"

"अर वाह ! भाइ साहब आप ता छिपे रुस्तम निकल" मैंने भाई साहब को उकेरा।

"वह एक उम्र होती है साहब, उस समय वक्त का पता नहीं लगता।"

"पडिताइन के पीछे बीस घण्टे आप कहाँ बिताते थे ?"

"साहब क्या कहूँ, दीवानगी ऐसी थी। पडिताइन के सामने खुलकर भी आता था और छिप-छिपकर भी इस पर नजर रखता था।"

"छिप-छिप कर !" मैंने भोलेपन का नाटक किया।

"यह जब वैसे हाथ नहीं आई तो मैंने इस पर छिपकर नजर रखी, ताकि इस रगे हाथ पकड सकूँ।"

"आपका इस पर शक था ?"

"हाँ, जैसा कि आपको है। इसके आगे-पीछे लूगाडों की लाइन लगी देखकर मोहल्ले और अन्य जान-पहचान के लोग कहते थे कि पडिताइन चालू है। यही गलतफहमी मुझे भी हो गई थी।"

"गलतफहमी ?"

"हाँ साहब, मैं खट-खटकर मर गया, पर मजाल है कि इसे किसी के साथ गलत देखा हो । यह बाहर सभी से बोलती, हँसती-खेलती थी किन्तु अपनी कोठरी मे कभी किसी को नहीं आने देती थी ।"

"कोठरी ?"

"जी, और अभी तक इसके पास वही कोठरी है । इसका कोई भी दोस्त शायद ही आज तक इसकी कोठरी मे जा पाया हो । इसकी छोरिया का रुख भी यही है । इसलिय कैसे कह दें कि वे चालू हैं ।"

"जगदीशजी, आपने पैसा नहीं आजमाया होगा । इन धधा के लिये जेब भरी होनी चाहिये ।"

"साहब मैंने यह भी आजमा कर देखा था । इसी चक्कर म मैंने माँ के गहने चुराकर बेच डाल थे । उस जमान म दो हजार रुपये कीमत रखत थे । एक दिन इसी दूकान म शाम के समय जब जरा अधेरा हो गया था, पडिताइन का हाथ दबाकर मैंने इसकी गोद मे दो हजार के नोट रख दिये थे ।"

"*अच्छा !*"

"साहब, इसे तो जैसे नाग खा गया था ।"

"अच्छा, क्या बाली ?"

"यह बोली जगदीशजी इन पैसो को ले जाकर वापस कर दो । मैं ऐसी औरत नहीं हूँ ।"

"यह पैसे मेरे ही हैं पडिताइन- मैंने जोर देकर कहा था । पर एक नहीं मानी ।"

"कमाल है, इसे कैसे *पता लगा* ?"

"भगवान जाने साहब । लेकिन मैंने बिना बहस किये पैसे वापस ले लिये ।"

"इसके बाद तो आपने इसका पीछा छोड दिया होगा ?"

"पीछा तो छोड दिया पर नजर रखे रहा ।"

"सफलता नहीं मिली ?"

"जी नहीं मिली ।"

मैंने प्यार के इस परास्त योद्धा पर एक दृष्टि डाली । पडिताइन की चरित्र की अटलता की कहानी सुनी और उसके बारे मे नए सिरे से धारणा बनाने की कोशिश की ।

अगले दिन मैं मित्रो के साथ फिर पडिताइन की दुकान पर चाय पीने गया । *आज उसकी तबियत ठीक थी सो हमे देखते ही उसने चाय का टोपिया*

स्टोव पर चढा दिया था। हमे खाट पर बैठे अभी पाँच मिनट भी नहीं हुए थे कि पडिताइन का एक भक्त आ गया ।

"आ गया रे तू? बच्चा दिखाया ?" पडिताइन अपने विशेष लहजे म बोली । मैं उस युवक का नाम नहीं जानता था, किन्तु उसका मुँह लटका दखकर मैं पूछ बैठा ।

"बच्चा बीमार है क्या ?"

"हाँ, इसका बच्चा बीमार है नौकरी है नहीं मजदूरी करता है । बच्चा बीमार है और कहता है कि ठीक हो जाएगा । बिना दवा-दारू के बच्चा ठीक हुआ करता है क्या? दिखा दिया रे- क्या बाला डॉक्टर ? चुप क्या है ?"

"पडिताइन, उस डॉक्टर ने सौ रुपये से ज्यादा की दवाइया लिख दीं ।"

"दवाइ वाल स पूछा था ?"

"हाँ, उसी से पूछकर आ रहा हूँ ।"

"तेरे पास कितने पैसे हैं ?"

"सत्तर रुपये हैं ।"

पडिताइन ने अपना गल्ला टटाला । कुछ नोट आर खुले पैस उस युवक के हाथ मे देते हुए कहा ।

"गिन ले इनको ।"

वह युवक पैसे गिनने लगा और उधर पडिताइन ने हम चार कपो मे चाय डाला दी । हम चाय की चुस्किया लेने लगे ।

"चौंतीस रुपये हैं ।" युवक ने रुपये गिनकर कहा ।

"अब तेरे पास कितने हो गए ?" पडिताइन ने प्रश्न किया ।

"एक सौ चार रुपये हो गए ।"

पडिताइन ने उगलियो पर कुछ हिसाब लगाया और हमसे बोली ।

"बाबूजी इसको छ रुपये दे दो । आपकी आज की चाय की पक्की ।" पडिताइन बोली । मैंने जेब से छ रूपये निकाल कर उस युवक के हाथ पर रख दिये ।

"अब एक सौ रुपये से ज्यादा हो गया । जा भाग दवाई लाकर बच्चे को दे।" युवक जाने के लिये मुडा कि पडिताइन ने रोका ।

"और ठहर, पैसे होते ही वापस दे दियो ।"

युवक तेजी से चला गया । जगदीशजी हँसकर बोले ।

"पडिताइन आज तक किसी ने तुम्हारे पैसे वापस किये हैं ?"

"जगदीशजी आदमी को मुसीबत पेले है । नहीं भी दगा ता इसका बच्चा तो ठीक हो जाएगा ।"

पंडिताइन उठी और सामने बैठे एक युवक को कहा ।

"देख रे अब कोई चाय पीने वाला आए तो पैसे पहले ले लेना । चीनी नहीं है, चायपत्ती नहीं है और गल्ला भी खाली है । उधार मत करना ।"

वह धीरे-धीरे सड़क पार कर गई । हम भी उठ । मैं अपने दिमाग से इस बात को निकाल नहीं पा रहा था कि मैं कितना गलत था ।



"पर आपा मैं क्या करूँ   कहीं बडी मेडम होगी तो केस दर्ज कर देगी।"

"बडी बेरहम है ?"

"आपा आप अकेली चली जाओ ।

"ठीक है मैं होकर आती हूँ । जा तू फरीदा से मरहम पट्टी करवा। पहले हल्दी का सेक करवाना ।

"अच्छा । "

जद्दनबाई ने घर के कपडों के ऊपर ही चादर डाली और ऐनक चढा कर चल दी । रास्ते मे जद्दन आपा को जो भी मिलता सिर झुका कर सलाम कह देता । जद्दन आपा मधु मुस्कान, पान से रचे होठों के साथ मुस्करा देती। साठ साल की उम्र पाने के बाद भी जद्दन आपा के जिस्म मे चमक थी, जो बडे सहज तरीके से दूसरो को अपनी ओर आकर्षित कर लेती । गोरेपन की चर्बी से ढका जिस्म देख कोई भी अदाजा लगा सकता था कि जवानी मे इन खण्डहरो की मजबूती और सुन्दरता की झलक दूसरो को मदहोश करने वाली रही होगी । जद्दन आपा निराले व्यक्तित्व की मलिका थी ।

"आपा   आपा नानी   जय माता दी ।"

नन्ही बेलू ने जद्दन आपा के करीब आकर कहा । आपा ने उत्तर दिया- "जय माता दी। मेरी बेलू रानी, कहा नगे पैर घूम रही है। "

"बेलू बडे मासूम भोले अदाज से बोली- "नानी- काकू ने नयी चप्पल नहा दी । " सब पैसा खलास कर दिया । नयी माँ के साथ ।"

जद्दन आपा ने बेलू को साथ ले लिया और बोली, "मेरी बेटी को अभी दिलाती हूँ ।"

चल मेरे साथ । दोनों सदर थाने चल दीं । आपा ने बीच बाजार मे बेलू को नयी चप्पल दिला दी और घर भेज दिया ।

सदर थाना बाजार के बीच बना था । बडी चहल पहल थी । जद्दन आपा को देख दो सिपाहियो ने सलाम किया और पूछा- आज तकल्लुफ कैसे किया ।

"अरे बेटा, अपने बिलावल की खैरियत का समाचार पूछने आई थी।"

"अरे आपा। आप सरदर्दी लेकर घूमती हैं ।"

"अन्दर बडी मेडम हैं । मिल लीजिए ।"

जद्दन आपा तेजी के साथ बडी मेडम के चैम्बर मे चली गयी । और बोली, " बडी मेडम साहब को जद्दन आपा का सलाम कबूल हो । "

"अरे जद्दन आपा ।" आश्चर्य से सीमा ने कहा- आपक यहा आने का मकसद?

और जहन आपा चली गयी

करुणा श्रीवास्तव

"कमबख्त मुआ अभी तक नहीं आया। मारा-मारा फिर रहा होगा। पतग की तरह दीवाना।"

"बडी आपा। किस कमबख्त की बात कर रही हैं।" फरीदाबी ने पूछा। मुँह मे पान की गुलरी लेते हुए जहन आपा बोलीं- "अरे वही बिलावल।" जहनआपा जहन आपा मैं मर गया। मैं मर गया ?

जहन आपा ने अपने चर्बी युक्त शरीर के साथ तेजी से दौडने की कोशिश की और दरवाजे पर बिलावल को खून मे सना देख- माथा ठोककर बोली- " "मबख्त फिर उन कटको से लड मरा अरे डेढ पसली का तो शरीर है। फिर क्यो उलझ जाता है -साडो से।"

"आपा, मैं नहीं लडा, इकबाल ने गोपी पर चाकू से वार कर दिया बेमतलब के और मैने देख लिया तो कहने लगा साला रपट लिखा देगा पहले इससे निपट लो।"

"हाँ-हाँ मैं सब समझती हूँ तू बडा सैयाना है जो सफाई द रहा है।

"सच जहन आपा तुम्हारे दिल की कसम खाता हूँ, मैं तो गोपी को दूर करने की कोशिश कर रहा था कि बीच म ही मेरे ऊपर वार कर दिया। और झूठी रपट भी लिखवा दी मेरी।"

जहन आपा ने सिर पकड लिया और चारपाई पर बैठ गयी पखा झलने लगी। सोचने लगी- "मिया बिलावल दिल की कसम झूठी थोडी ही खायेगा सदर थाने म जाकर पूछ लेना ही ठीक है। नहीं तो कोर्ट-कचहरी के चक्कर काटने पड जायगे।"

"अरे बिलावल-ओ-बिलावल! चल जा सदर थाने" कहीं आगे बात न बढ जाये।

"पर आपा मैं क्या करूँ कहीं बडी मेडम होगी तो केस दर्ज कर देगी।"

"बडी बेरहम है ?"

"आपा आप अकेली चली जाओ।

"ठीक है मैं होकर आती हूँ। जा तू फरीदा से मरहम पट्टी करवा। पहले हल्दी का सेक करवाना।

"अच्छा।"

जद्दनबाई ने घर के कपडों के ऊपर ही चादर डाली और ऐनक चढा कर चल दी। रास्ते म जद्दन आपा को जो भी मिलता सिर झुका कर सलाम कह देता। जद्दन आपा मधु मुस्कान, पान से रचे होठों के साथ मुस्करा देती। साठ साल की उम्र पाने के बाद भी जद्दन आपा के जिस्म मे चमक थी, जो बडे सहज तरीके से दूसरो को अपनी ओर आकर्षित कर लेती। गोरेपन की चर्बी से ढका जिस्म देख कोई भी अदाजा लगा सकता था कि जवानी म इन खण्डहरो की मजबूती और सुन्दरता की झलक दूसरो को मदहोश करने वाली रही होगी। जद्दन आपा निराले व्यक्तित्व की मलिका थी।

"आपा आपा नानी जय माता दी।"

नन्ही बेलू ने जद्दन आपा के करीब आकर कहा। आपा ने उत्तर दिया- "जय माता दी। मेरी बेलू रानी, कहा नगे पैर घूम रही है। "

"बेलू बडे मासूम भोले अदाज से बोली- "नानी- काकू ने नयी चप्पल नहा दी। " सब पैसा खलास कर दिया। नयी माँ के साथ।"

जद्दन आपा ने बेलू को साथ ले लिया और बोली, "मेरी बेटी को अभी दिलाती हूँ।"

चल मेरे साथ। दोनों सदर थाने चल दीं। आपा ने बीच बाजार म बेलू को नयी चप्पल दिला दी और घर भेज दिया।

सदर थाना बाजार के बीच बना था। बडी चहल पहल थी। जद्दन आपा को देख दो सिपाहियो ने सलाम किया और पूछा- आज तकल्लुफ कैसे किया।

"अरे बेटा अपने बिलावल की खैरियत का समाचार पूछने आई थी।"

"अरे आपा। आप सरदर्दी लेकर घूमती हैं।"

"अन्दर बडी मेडम हैं। मिल लीजिए।"

जद्दन आपा तेजी के साथ बडी मेडम के चैम्बर मे चली गयी। और बोली " बडी मेडम साहब को जद्दन आपा का सलाम कबूल हो। "

"अरे जद्दन आपा।" आश्चर्य से सीमा ने कहा- आपक यहा आने का मकसद?

कि कहाँ जा.? बाजार के बहके हुए लोग तिरछी-पूरी सिपाही के साथ उस घूर रहे थे । एकाध नशे के हालत म आकर उसे अपशब्द से सम्बोधित कर जाते । वह घबरा उठी और तेजी के साथ मर्द से लैम्प पोस्ट के नीचे जाकर खडी हो गयी ताकि आने-जाने वाला की एकदम नजर नहीं पड पाये ।

रात्रि के दस बज चुके थे । बाजार पूरे रौनक के साथ गर्म था । हल्की-हल्की गुलाबी सर्दी सीमा के जिस्म मे मदहोशी का आलम पैदा कर रही थी । ऐसे माहौल मे जवान क्या, बूढे भी अपनी भावनाओ पर काबू न पा सकते थे । वह महसूस कर रही थी कि अकेली लडकी का जीवन कितना दुखदायी साबित हो रहा है । यहा इसान नहीं भेडियो का आवास है । ए मेरे ईश्वर मुझे क्यो पैदा किया ? मेरा कसूर क्या था ? जिसकी कठोर सजा मिल रही है । ऐसी काली रात मे कहाँ जाऊँ ? भगवान! हर मोड पर इज्जत का सौदा है । नेक दिल का मालिक कोई नहीं जो इस बेसहारा को शरण दे सके। वह फूट पडी । और सिमट कर लैम्प पोस्ट के निकट बैठ गई। सर्दी का आगमन तेज हो गया था । रात्रि का योवन और गहरे गर्त म डूबता जा रहा था । वह नींद के झोंको के साथ सहम जाती । वेदना-आत्मपीडा की पुकार सुनने वाला इस अनाथ का कोई नहीं था । उसने डरे और सहमे भाव से चारों ओर नजर उठाई। बाजार की खिडकियाँ बन्द हो चुकी थी । हल्की मद रोशनी कहीं-कहीं जल रही थी । बहादुर डडे व विसिल बजा कर पहरेदारी का सबूत प्रकट कर रहा था । अचानक ही बडी कोठी की खिडकी खुली, सीमा ने सिर उठा कर देखा । बेहद खूबसूरत प्रौढ महिला अगडाई के साथ मद का आनद ले रही थी । वह अकेली तेज रोशनी मे आकर खडी हो गयी । प्रौढ महिला लैम्प पोस्ट के नीचे उस नवयौवना को देख चौंकी और सोचने लगी देर रात इस लडकी को क्या सूझा यहा आने का ? कहीं कोई । नहीं-नहीं ऐसा नहीं हो सकता । भोली लडकी नजर आती है । उलझ गयी है या फिर घर स भागी होगी? जद्दन बाई की ग्रथिया उलझ बैठी वह सीढियो से उतर कर नीचे आयी तथा दूर से ही आवाज दी- "बेटा ठण्डी रात मे अकेली क्या कर रही हो, बीमार हो जाओगी, यहा आ जाओ मेरे पास । "

"वह डरी सी थकी सी कुछ न कह पायी । कुछ क्षण खडी रही और फिर तेजी स दौडकर उस अनजान महिला से लिपट गयी । और फूट फूट कर रोने लगी। रोत हुए बोली-मुझे बचा लीजिए । मेरी रक्षा कीजिए । नहीं ता इस बाजार के रईस मुझे जीवित खा जायगे । इन दरिन्दो को नारी का मूल्य नहीं मालूम । इनकी नजरो मे नारी की कीमत केवल पैसा है । जद्दन ने कहा- "हाँ बेटी ठीक कहती हो । नारी की कीमत आज तक कोई मर्द नहीं समझ पाया है । केवल भोग का साधन समझ नीलामी की है उसक तन की मन

"बेटा बिलावल की रपट तो दर्ज नहीं है न ? वही इकबाल कटक का झगडा है । मुओं जब से कोठी के इलाके म आया है । सब का जानी दुश्मन बन बैठा है ।"

"जद्दन आपा इकबाल को बन्द कर दिया है । मैं समझ गई थी कि चालाक गीदड किसी को भी फँसा सकता है। आप फिक्र न करे मैं सब ठीक कर लूँगी ।"

"जद्दन आपा ने हल्की मुस्कराहट बिखेर दी । जुग-जुग जियो मेरी बच्ची। खुदा तुम्हे लाख-लाख उन्नति दे । मेरी दुआए तुम्हारे साथ हैं ।"

आपा ऐसा कहकर मुझ गरीब को अहसानो के तले न दबाओ । "आपके रहमा और कम म पली यह बेसहारा नारी आपके सम्मुख सिर ऊँचा करके नहीं जी सकती । यदि आपने अपने दामन का सहारा न दिया होता । "

"बस मेरी बेटी-ऐसा कह कर बडप्पन का अहसास न दिलाओ, नहीं ता यह जद्दन टूट जायेगी बिखर जायगी । अधूरे प्यार क लिये एक तुम ही थी बेटी जिसने जद्दन की पीडा व दर्द का अहसास किया । इन्सान की सबसे बडी दौलत सहानुभूति की डोर से बधे किसी भी इन्सान की रहमीयत पाना खुदा की अमानत है । कोई इन्सान भी इस रहमीयत से महरूम रहे तो मैं उसे दुनिया का सबसे बडा पाप समझूगी । अच्छा सीमा बेटी चलती हूँ । नमाज का वक्त हो रहा है । फुरसत के वक्त शौहर के साथ गरीब खान म तशरीफ लाना बेटी ।"

सीमा ने ग्रीवा हिलाई । एकटक जद्दन आपा को निहारते हुये बोली- आपा क्या गुजरा वक्त वापस नहीं आ सकता? आपको देखकर लगता है कि मैं दुबारा आपकी सीमूजान बनकर अठखेलिया करूँ ।

जद्दन आपा हस दी आर बोली- घर आकर अठखेलिया कर लेना । यह कहते हुए वह घर की ओर बढ गयी ।

इन्सपैक्टर सामा हाथ मे डडा थामे चेयर पर बैठ गयी और जद्दन आपा के विचारो को साथ लेकर अतीत की स्मृति की धुन्धली तस्वीरो के बीच खो गयी ।

बाजार की चहल-पहल और शोरगुल के बीच धीरे-धीरे कदमो के साथ एक नवयौवना मैले से कपडे पहने चली जा रही थी । आँखो म जलधारा प्रवाहित हो रही थी । केश उलझे से भीगे थे । चेहरा मासूमयत से भरा । नयन गोल-गोल, ललाट चौडा उभरा हुआ था । होठो की पखुडियाँ दबी सी-सूखी पपडीदार हो रही थी । गोरे गुलाबी रग मे हल्की सी कालिमा की झलक उभर रही थी । चिन्ताओ के जाल मे उलझने के कारण कुछ समझ नहीं पा रही थी

कि कहाँ जा ? बाजार के बहके हुए लोग तिरछी-भूखी निगाहो के साथ उसे घूर रहे थे । एकाध नशे के हालत मे आकर इसे अपशब्द से सम्बोधित कर जाते । वह घबरा उठी और तेजी के साथ मदें से लैम्प पोस्ट के नीचे जाकर खडी हो गयी ताकि आने-जाने वाला को एकदम नजर नहीं पड पाये ।

रात्रि के दस बज चुके थे । बाजार पूरे रौनक के साथ गर्म था । हल्की-हल्की गुलाबी सर्दी सीमा के जिस्म मे मदहोशी का आलम पैदा कर रही थी । ऐसे माहौल मे जवान क्या, बूढे भी अपनी भावनाओ पर काबू न पा सकते थे । वह महसूस कर रही थी कि अकेली लडकी का जीवन कितना दुखदायी साबित हो रहा है । यहा इसान नहीं भेडियो का आवास है । ऐ मेरे ईश्वर मुझे क्या पैदा किया ? मेरा कसूर क्या था ? जिसकी कठोर सजा मिल रही है ! ऐसी काली रात म कहाँ जाऊँ ? भगवान! हर मोड पर इज्जत का सौदा है । नेक दिल का मालिक कोई नहीं जो इस बेसहारा को शरण दे सके। वह फूट पडी । और सिमट कर लैम्प पोस्ट के निकट बैठ गई। सर्दी का आगमन तेज हो गया था । रात्रि का यौवन और गहरे गर्त म डूबता जा रहा था । वह नींद के झोंको के साथ सहम जाती । वेदना-आत्मपीडा की पुकार सुनने वाला इस अनाथ का कोई नहीं था । उसने डरे और सहमे भाव से चारों ओर नजर उठाई। बाजार की खिडकियाँ बन्द हो चुकी थी । हल्की मद रोशनी कहीं-कहीं जल रही थी । बहादुर डडे व विसिल बजा कर पहरेदारी का सबूत प्रकट कर रहा था । अचानक ही बडी कोठी की खिडकी खुली, सीमा ने सिर उठा कर देखा । बेहद खूबसूरत प्रौढ महिला अगडाई के साथ मद का आनद ले रही थी । वह अकेली तेज रोशनी मे जाकर खडी हो गयी । प्रौढ महिला लैम्प पोस्ट के नीचे उस नवयौवना को देख चौंकी और सोचने लगी देर रात इस लडकी को क्या सूझा यहा आने का ? कहीं कोई । नही-नहीं ऐसा नहीं हो सकता । भोली लडकी नजर आती है । उलझ गयी है या फिर घर से भागी होगी? जद्दन बाई की ग्रथिया उलझ बैठी वह सीढियो से उतर कर नीचे आयी तथा दूर से ही आवाज दी- "बेटा ठण्डी रात मे अकेली क्या कर रही हो, बीमार हो जाओगी, यहा आ जाओ मेरे पास । "

"वह डरी सी थकी सी कुछ न कह पायी । कुछ क्षण खडी रही और फिर तेजी से दोडकर उस अनजान महिला से लिपट गयी । और फूट फूट कर रोने लगी। रोते हुए बोली-मुझे बचा लीजिए । मेरी रक्षा कीजिए । नहीं तो इस बाजार के रईस मुझे जीवित खा जायेगे । इन दरिन्दो को नारी का मूल्य नहीं मालूम । इनकी नजरो मे नारी की कीमत केवल पैसा है । जद्दन ने कहा- "हाँ बेटी, ठीक कहती हो । नारी की कीमत आज तक कोई मर्द नहीं समझ पाया है । केवल भोग का साधन समझ नीलामी की है उसके तन की, मन

के विचारा की मुस्कराहटा की यौवनता की । बेरहम हैं आदमी । चलो मेरे साथ ऊपर । वहा तुम्हारे नारीत्व का मूल्य कोई नहीं छीनेगा।''

सीमा ने गौर से जद्दन बाई को देखा फिर कहा- चलूँ । कोई एतराज तो नहीं ?

जद्दन बाई ने सिर हिला दिया ।

दोनों ऊपर काठी म चली गयी । कोठी का आलम उसकी सीमा से बाहर था । उसे लगा कि किसी महल म आ गयी है । चकाचौंध देखकर खो सी गयी और सोचने लगी कहीं यह सावन बाजार की मलिका जद्दन बाई तो नहीं । बहुत नाम सुना था । उनके रहम और नकी का । इन्सानियत की देवी के रूप म जानी जाती हैं । वे दौलत की मलिका हैं ।

''कहा खो गयी बेटी?'' जद्दन ने पूछा-

'' कुछ नहीं । आप ही कहीं वो मसीहा तो नहीं जो सभी क दुख-दर्द को बाट कर गरीबा की आत्मा बन जाती है। आपका नाम ।''

''जद्दन बाई बीच म ही बोल पडी- ''मुझे जद्दन बाई कहते हैं । तुम डरना नहीं । तुम्हारे एकाकीपन का फायदा नहीं उठाऊँगी । मैं तुम्हे जीवन के लिए तैयार करके ही रुखसत करूँगी । भविष्य की ज्योति बनाऊँगी बेटी। तुमने विश्वास के साथ इस कोठी पर अपना दामन रखा है । खुदा के ऊपर एतबार करो । ''

वह अबला लडकी भावनाआ के धागो मे पिरोए शब्दो को सुन अपनी सवेदना को भूल सी गयी । वह मस्तिष्क म हल्का और ठडापन महसूस कर धीरे-धीरे कदमा से बढ जद्दन बाई के चरणा मे झुकी और फिर जद्दन बाई से लिपट कर उसके कधो को आसुआ से भीगो दिया ।

''बेटी रोने-धोने मे नाम पूछना ही भूल गयी ।'' माहोल म तबदीली लाने के विचार से जद्दन ने झट बहाना बनाया ।

वह लडकी सुबकते हुए बोली- ''सीमा । ''

''हम तो सीमू कहेगे। और तुम हम ''आपा'' कहागो समझी बट।''

''हाँ आपा ।''

जद्दन बाई ने आगोश के बधन और कस दिये । ममता की बेल से लिपटने के लिए कुछ पल दोनों ऐसी ही थमी रहीं । माना अचानक बरसा का स्नेह मिलन पाकर दोनो एक दूसरे को पूर्ण समझने लगी ।

''चलो आपा मुझे नींद आ रही है । बहुत थक गयी हूँ ।''

''हाँ बेटी हल्का मन करके सो जाओ । ''

अल्ला सभी को मुबारक दिन देगा । '' दोनो स्वप्न की दुनिया मे कैद हो गयीं ।

प्रभात की पहली किरण, ऊषा का आगमन हुआ। पक्षियो की चहचहाटो से कोठी गूँज उठी। जद्दन बाई नमाज अदा कर रही थी। सीमा अभी तक नींद की दुनिया मे कैद थी। हल्की-हल्की ऊषा की किरणो का आँचल सीमा के यौवन से टकराकर वापस जा रहा था। एकाध किरण उसके जिस्म पर ठहर जाती और शरीर मे हलचल पैदा कर देती।

जद्दन बाई ने उसे जल्दी उठाना उचित न समझा। जानती थी दिमागी बोझ अभी हल्का नहीं होगा। इसलिए कमरे के बाहर चक्कर लगाती रही। सुनहरी सूरज की रश्मि न सीमा को उठाने के लिए विवश कर दिया। सीमा सूजी हुयी आखो को मलती हुयी उठी। और जद्दन आपा को प्रणाम करते हुये फ्रेश होने का चली गयी।

जद्दन बाई अखबार से नये समाचारो का आनद उठा रही थी। चाय की प्याली करीब रखी थी। इतने मे ही सीमा भी बैठ गई और चाय बनाने लगी। चाय की चुस्कियाँ लेती हुयी जद्दन बाई बोली, "थकान मिटी या नहीं।"

"हाँ आपा।"

"जल्दी नहा धोकर मेरे सूट पहन लो, फिर तुम्हारे लिए जरूरी सामान खरीद लाये।"

"ठीक है।"

करीब एक घन्टे बाद दोनों तैयार होकर न्यू मार्केट चली गयीं।

न्यू मार्केट की गरमाहट सीमा को बेताब कर रही थी। मार्केट की चकाचौंध देख वह ऊब सी गयी और उसे महसूस हुआ कि वह रईसो के बाजार के लायक नहीं। क्यो व्यर्थ आ गई है। कहीं जद्दन बाई अपना स्वार्थ तो नहीं पका रही है। क्या मेरी नीलामी का सौदा तो करने नहीं आयी ? ढेरो शकाओ से घिरे प्रश्नो को दिमाग मे लेकर उथल-पुथल होती रही। धनपतराय शो रूम के एयरकडीशन मे बैठे-बैठे जद्दन आपा ने इधर ढेरो साडिया-सूट पैक करवा लिये। बिना सीमा के पसद के। जद्दन जानती थी। झिझक सकोच इन्सान की कमजोरी है। चाह हुए भी स्वीकृति नहीं मिलेगी। लगता था जद्दन आपा इन्सान को परख रखती हा। नारी के हृदय की बात को पहले से ही जानती हो, इसलिए सामान पैक करवाते हुये बोली– धनपतरायजी – गाडी मे सामान भिजवा दो। दानों उठकर बार म आकर बैठ गयी।

"आपा।"

"हाँ सीमा बेटी।"

"इतने कीमती कपडे क्यो लिए ?"

"बेटी को नया रूप देने के लिए। दुनिया को दिखाने के लिए, नारी की इज्जत को मिट्टी करने वाले समाज को दिखाने के लिए । नारी का दुख केवल नारी ही समझ सकती है । चाहे वह तवायफ ही क्यो न हो ।"

सीमा फूट-फूट कर रो पडी । जहन आपा ने सीमा का सिर अपनी गोद मे छिपा लिया और बोली- " आँसू नारी के अस्तित्व का अमूल्य रत्न है । व्यर्थ बहाने से कीमत घट जायेगी । समय पर गिराना ही शोभा देता है। ठीक है, मन मे आवेगो, कुठित भावनाओ,सवेदनाओ को धोने के लिये हृदय सागर मे आसुओ की बूदे गिराना उचित है । शरीर स्वस्थ हो जाता है । व्याधियो से दूर रहोगी । आज जितना आसूओ की कीमत को घटाना है घटा लो । कल फिर इनकी माग बढ जायेगी । यही आसू करोडो के होगे । भविष्य का गर्त अन्धकार की मद रोशनी से नहीं ढका है । कल फिर उठोगी और गहन लक्ष्य की सेवा मे जीवन यापन करोगी । इसके लिए पीछे मुडकर चलना जरूरी है । धरातल की दृष्टि क्षितिज पर पहुँचाने का सहारा होती है। जब भावनाओ के बीजो को धरातल मे बोओगी तब कली के महत्व को समझोगी। इसलिए आसुओ को फिलहाल हृदय द्वार के अन्दर बन्द कर दो । सीमू बेटी ।"

सीमा एकटक जहन आपा के अमूल्य वाक्यो को सुनती रही और इस नारी के व्यक्तित्व को समझने की कोशिश करती रही । आखिर इतना साहस, हौसला, मजबूत इरादो की बुनियाद कहा से खडी की । वह सोच सोच कर उलझ जाती कि जहन मे अनुपम सौन्दर्य होने के साथ मस्तिष्क मे सुन्दर विचारो के गजरे की महक भी बधी है । सोच का खुलापन और दुनिया से एकदम आगे चलने की क्षमता देखकर सीमा स्वय को बहुत छोटा महसूस करने लगी और सिर उठाकर बाहर की ओर नजारे देखने मे मग्न हो गयी ।

कार गति पर थी । भीड का जमघट था । जहन आपा चारो ओर दृष्टि घुमा रही थी । अचानक ही भीड देखकर ड्राइवर रामधीन से बोली, "देख भीड कैसी है ।"

रामधीन ने झटके के साथ कार रोकी और उतरकर भीड मे लुप्त गया। कुछ क्षणो के उपरान्त रामधीन आया और बोला- "आपा एक विकलाग बालक बेहोश हो गया है । आप कहे तो उठा लाऊँ ?"

"हाँ, और हॉस्पिटल ले चलो ।" रामधीन ने कुछ व्यक्तियो के सहयोग से बालक को उठाया और कार मे लाकर डाल दिया । कार सीधी विक्टोरिया हॉस्पिटल रुकी । और जहन आपा ने डॉ वर्मा को बुलाया । डॉ वर्मा ने आपा को देखकर सलाम किया और कहने लगे- कैसे तकलीफ की? आपा बोली- "विकलाग युवक बेहोश हो गया है आपके सुपुर्द करके जा रही हूँ अच्छी तरह देख-रेख कर देना ।"

"ठीक है आपा ।"

"स्ट्रेचर पर विकलाग को लेटा कर डॉ वर्मा अन्दर ले गये । रामधीन ने गाडी को मोड बडी कोठी की ओर कर दिया ।

कुछ समय पश्चात जद्दन आपा और सीमा अपने आराम कक्ष मे पहुँच गयी। दोनों थकी सी थी । इसलिए कुछ पल आँखें बन्द करके लेटी रहीं ।

"आपा, आपा ।" फरीदा ने धीरे से पुकारा ।

आपा चौंक सी गयी ।

"खाना नहीं खाना ?"

"खास भूख नहीं है । सीमा तुम खा लो ।"

"आपके साथ ही खायेगे ।"

"ठीक है फरीद । तुम खा लो । फिर आराम कर लेना । थक गयी होगी । आज तुम्हे सारा काम अकेले करना पडा है ।"

फरीदा मुस्करा कर चल दी ।

सीमा गहरी सोच मे डूबी अतीत की छाँव मे घूमने लगी । वह कैसी पीडा-वेदना और बेरहमी का शिकार हुयी । क्या क्या सपने बुने थे । जीवन को चलाने के लिये । मगर सौतेली माँ का कटु व्यवहार रोज-रोज की गालियाँ सुनते सुनते थक चुकी थी । इसलिए मौका देखकर घर छोड दिया । और आज ममता के आँचल से बधी, जद्दन आपा को पाकर नयी अनुभूति का स्वाद लिया। काश ! सब ऐसे ही होते तो दुनिया स्वर्ग नजर आती । अपने पराये का भेद न होता । समाज का नक्शा बदल जाता ।

"सीमू बेटी । किस आशा और आकाक्षाओ मे बध गई हो ?"

"आपा, सोचती हूँ मजबूरी की माग इन्सान को कितना बेबस-अन्यायी बना देती है । आप हर व्यक्ति की सहूलियत का ध्यान रखती हैं । यदि सब ऐसी ही ममतामयी नारी हो जायें तो जिन्दगी सुनहरी वर्क से ढकी होगी ।"

"जद्दन आपा बुझे स्वर से बोली- हाँ बेटे व्यक्ति की सहूलियत की माँग कभी कम नहीं होगी । रोज ही आकाक्षा-आशाए और दिल मे कुछ न कुछ पाने का तकाजा तो रहेगा ही । तभी मजबूरी मे इन्सान अपने को सन्तुष्ट साबित करता है। यही जिदगी का कारोबार और उसका धन्धा है जिसके आगे आज तक कोई भी विद्रोह नहीं टिक सका । मनुष्य कितना ही अपने को मनावे, बुझावे, रोज के दिनचर्या मे जीवन उसे कोरा ही मिलेगा । इसलिए वह पगु और असमर्थ है । क्या करूँ ? दिमाग, झगडा, कभी अकारण नहीं गया उसे अपनाये बिना उत्साह भी बाकी नहीं रहा । तब तक अभिधान, धारणा, सर्वदा चालू रहेगा । व्यक्ति जीवन चक्र मे अटक जाता है उसका आखिर कितना अपनत्व है । जहाँ दुख, पीडा और भावुकता की बातो से जल्दी-जल्दी जीवन को

लाना सीख लेता है । उस जरूरत को अपेक्षित इन्कार कदापि नहीं किया जा सकता । ऐसा व्यक्तित्व उठ जाता है । उसकी छाया के नीचे मनुष्य उपकार का सवाल पेश करेगा । अपनी उलझन मे सबसे सरोकार, अनुभूति छीन लेगा इसी धारणा के प्रति मोह और लाभ उठाना अपने को खोलना है । लेकिन अहम के आगे जीवन मूल्य कसौटी पर नहीं उतरता । प्रदर्शन की प्रवृति इन्सान के बडप्पन को घटा देती हे । जिन्दगी मे समय पर नेकी और अन्याय क खिलाफ आवाज उठाना इन्सान का नैतिक कर्त्तव्य बन जाता है ।

"जद्दन आपा ! जीवन चक्र की यह गहरी पैठ कहा से उगी" । मासूम बच्चे की तरह भोली बनकर सीमा बोली ।

"अनुभवो को खान से । माँ का दिया हुआ निचोड जीवन के अतिम समय तक गाँठ बाँध कर रखा है ।"

"आपकी माँ दुनियादारी की समझ रखने के साथ विदूषी नारी होगी?"

"पुश्तैनी तवायफ थी । लेकिन सही माहौल मिलता तो अच्छी शिक्षिका बनती । उर्दू की तालीम ल रखो थी केवल पाँच जमात तक । उर्दू की शायरी का शौक था । कभी कभी शायरी लिखती थी फिर महफिला म सुनाया करती। मै बचपन से उनके सानिध्य मे बडी हुई । कई कलाकार उच्च घरान के लेखको उद्योगपतियो का आना-जाना रहता था । उन्हीं की बैठका म रहकर सीखती रही । माँ मुझे अच्छी तालीम दिलाना चाहती थी । डॉ बनाने की तमन्ना अधूरी रह गयी । तीन साल डॉक्टरी की तालीम हासिल की । बीच म मस्तिष्क ज्वर हो जाने से छोड दी । लेकिन माँ ने फर्श पर नहीं उतारा । सीख देती रही दुनिया मे जीने की कला सिखाती रही । सदैव अल्लाह पर एतबार और नेकी का रहनुमा दिखाया आत्म सम्मान स्वाभिमान की भावना के सहारे व्यक्तित्व को उभारने का सहारा दिया । पुश्तैनी जायदाद की वारिस होने से आर्थिक पक्ष मजबूत रहा और इकलौती औलाद होने का फायदा मिला । अब्बूजान को गुजरे दस बरस हो गये । विदेश म थे । किसी अरबी लडकी से निकाह कर लिया था । माँ के इन्तकाल के बाद मैं नितान्त अकली रह गयी और मुझे समाज के रक्षक व्यक्तियो ने जद्दन बानो की जगह जद्दन बाई का ताहफा दे दिया । जीवन के अमूल्य क्षणो को व्यर्थ न गँवाना चाहती थी । मैं स्वयसेवी सस्थाआ से जुडकर सेवा दान म लग गयी, दा मदरसे खुलवाय । राजनीतिक पार्टी वालो की सेवा करती रही। फैक्ट्री की देखरेख म व्यस्त रहती । और इस तरह जीवन आगे बढता गया । समाज की नजर म एक तवायफ की बेटी थी । इसलिए कटु व्यग सहने पडे। मैंने हौसला बनाए रखा। दुनियाँ मे कुछ रहम दिल इन्सान भी हैं । उनके सहारे आगे बढी और चलती गयी।"

"आपा व्यक्तिगत बात पूछ लूँ ?"

"हाँ पूछो, पूछो ।"

"निकाह क्यो नहीं किया ? "

"सीमू ! जिन्दगी के दो पहलू है । हर पहलू को एक दूसरे का सहयोग जरूरी है । ऐसा कुदरत का दस्तूर है । उसके बनाये उसूलो पर चलना प्रत्येक इन्सान का फर्ज है । लेकिन विधाता और अल्ला की मेहरबानी होना जरूरी है । माँ को किसी मौलवी ने कहा था- खुदा ने बेटी को जरूरतमन्दो की खिदमत के लिए भेजा है । माँ ने मौलवी की बात को निभाया और मुझे तैयार किया आज के लिए । तभी तो तुम्हे उठा लायी हूँ, अपने साथ रखने के लिए।"

सीमा मुस्करा दी और बोली- जद्दन आपा मैं पढना चाहती हूँ और अफसर बनूँगी ।

"ठीक है, पढो, घर मे ही टयूशन की व्यवस्था हो जायेगी । लेकिन तुमको काम करना पडेगा उस अहसास को पाने के लिए जहाँ जिन्दगी का उलझाव हो ।"

"जरूर करूँगी आपा । पढाई के साथ मुझे पटिंग का शौक है । पटिंग बना-बना कर कुछ पैसो की व्यवस्था करूँगी ।"

"अच्छा । चलो नया जीवन नये उद्देश्य को साथ लेकर बढो ।"

और उस दिन के बाद सीमा ने नये उद्यान मे नये पोधो के साथ जीवन उद्यान को लगाना शुरू किया । और हर पल हर क्षण जद्दन आपा का सहयोग तथा उनकी ममता के बन्धन मे बधी सीमू खिलती गई । उस रूप यौवन की अनुपम घटा को निहारने के लिए कोठी के नीचे भीड लगी रहती । जद्दन आपा की सख्ती-अनुशासन से बधी सीमा हद लाघ कर आगे नहीं बढी ।

इन्सानियत का पाठ सीमा का जीवन अग बना । एक दिन आपा से बोली- समाज मे छल कपट अधिक है। नारी का साथ देने वाले कम हैं। अत्याचार अधिक होते हैं । इसलिए मैं नारी अस्तित्व को ऊँचा करने के लिए पुलिस इन्सपैक्टर बनूँगी । बीस अक्टूबर को इन्टरव्यू है ।

"जिस काम को आत्मा-दिल गवाही दे वही करो । कटींली राहो पर चलना होगा । "

"चलूँगी । "

कुछ समय पश्चात सीमा का चयन पुलिस विभाग मे इन्सपैक्टर के पद पर हो गया । आपा की मेहनत सफल हुई । आपा ने अपनी बेटी से बढकर सीमा का जीवन बनाया । दोंनो के खून अलग-अलग होने के पश्चात भी वे एक दूसरे के लिए पूरक थी । उन्होने सीमा के आधे-अधूरे जीवन को एक अच्छे पद पर कार्यरत गरीब खानदान के होनहार युवक शैलेश राय के साथ जोड कर पूरा कर दिया । आपा को महसूस हुआ कि यह जिम्मेदारी पूरा करना भी मेरा फर्ज था । नहीं तो मेरे बाद कौन देख-रेख करेगा । सीमा भावुक-

भोली-नादानी के घेरा म बधी हुई है । समय जालिम होता है । अकेली औरतजात देखकर आदमी कमजोरी का फायदा उठाता है । सदियो से ऐसा होता चला आ रहा है । मजबूती का रिश्ता जीवन-साथी के लिए अधूरा रह जाता है । ऐसा सोचकर ही जह्न आपा ने सीमा को पुरूष के हवाले कर दिया । जो युग-युगान्तर उसके साथ चल कर सुख-दुख की छाँव मे उसे सहलाता रहे । उस नारी को जिसे मद सी रोशनी से मैंने उठाया था- रोशनी म लाने के लिए । यह सब सोच कर ऐसा किया जह्न आपा ने । और जह्न आपा की आँखें गीली हो गयी । व आज फिर काठी पर अकेली-अकेली रह गयी । दस साल कैसे गुजर गये । कुछ पता नही चला । देखते-देखते आपा के शरीर की सुन्दरता म लालिमा की कमी आने लगी । अचानक ही बदलाव आ गया जीवन म । कुछ बुझी-बुझी सी रहने लगी । दिन-हफ्ते-महिने-साल गुजर गये । सीमा की पास्टिग जगह जगह होती गयी । पत्र आते रहे । जह्न आपा भी जवाब देती रही । एक दिन तार आया । शैलेश राय अमेरिका जा रहा है । सीमा भी चली गयी । अपने शोहर के साथ । जह्न आपा टूट सी गयी । सोचने लगी विदश म जाकर अपने समाज की क्या सेवा करेगी । लेकिन वह बेबस थी। दाना क जीवन मे दखल देना ठीक नहीं और जह्न आपा सीमा से मिलने के लिए मद्रास जान की तैयारी करने लगी । अचानक सीने मे दर्द उठा और डॉ वर्मा ने आराम की सलाह दी । फिर जह्न आपा नहीं जा सकी । फोन से बधाई द दी ।

''बडी मेडम बडी मडम-जल्दी कीजिए ।''

दाडता हुआ एक सिपाही आया ।

सीमा चौंक पडी । यादो क घेरो से बिखर गयी ।

''जह्न आपा का एक्सीडेंट हो गया है । उनको विक्टोरिया हॉस्पिटल ल जाया गया है ।''

सीमा घबरा उठी और जीप मे बैठ कर विक्टोरिया पहुँची । जह्न आपा कराह रही थी । खून से लथपथ पडी हुई बार बार कह रही थी--- पा---नी--पा--नी ।

डॉ रावत उनके समीप खडे थे । खून रोकने की कोशिश कर रहे थे । लकिन कामयाबी नहीं मिली । शरीर स खून बहुत निकल चुका था । ऑपरेशन की तैयारी हा चुकी थी । सीमा काने मे सहमी फूट-फूट कर रोने लगी । उसे याद आ रह थे आपा के शब्द- ''आँसू का मूल्य समय पर ही आँका जाता है ।''

आज फिर वह अकेली हो गयी । त्याग की देवी-ममता के मोती लुटाने वाली उस महान आत्मा का दर्द-पीडा को बाँटने वाला काई नहीं था।

जीवनपर्यन्त सभी के लिए किया । लेकिन अतिम मेले मे नितान्त अकेली चली जा रही है । "नहीं आपा ऐसा नहीं हो सकता ।" सीमा चीख पडी।

डॉ कुमार ने सीमा को सहारा दिया और कहने लगे धैर्य रखो । कोशिश जारी है फिर भी उम्मीद कम है । दिमाग की सभी नसे फट चुकी हैं । खून दिया जा रहा है ।

"डॉ मेरा भी खून ले लीजिए । मेरी आपा को बचालो बचालो।"

"तुम्हारा ब्लड ग्रुप क्या है ? "

"बी ग्रुप है । "

"सॉरी । जद्दन आपा के साथ मैच नहीं करेगा । "

हैड नर्स दौडती हुई आयी और बोली -"सीमा मैडम आपा चली गयी हम सब को छोड कर । "

सीमा सिर पीट कर रह गयी । आँसुओ की धारा बहने लगी । हॉस्पिटल मे मातम छा गया । सभी उदास-मायूस थे, जद्दन आपा के अचानक इन्तकाल से । सदियो मे ही शायद ऐसी नारी दुबारा जन्म ले । निस्वार्थ सेवा-त्याग - प्रेम के साथ-साथ उस कलक को भी मिटा दिया-जिसे लोग तवायफ की सज्ञा देते थे । समाज मे मान-मर्यादा-न्याय के साथ समझौता करने वाली नारी की कमी सदैव खलेगी । सावन बाजार अधकार मे डूब गया । आपा की बडी कोठी शोक म डूबी हुई थी । फरीदा भी दहाडे मार मार-कर रो रही थी । बिलावल आपा के जनाजे के पास अतिम दुआ अदा कर रहा था । सभी दुखी थे । जद्दन आपा के गम मे डूबा सावन बाजार सूखा हो चुका था । आँसू थम चुके थे। मौलवी ने अतिम रस्म पूरी की । कुरान को जद्दन आपा के सिरहाने रख दिया गया । जद्दन आपा के जनाजे म हजारो की भीड थी। सभी सस्थाये-मदरसे-बाजार बद थे । पत्येक आदमी की आँखे गीली थी । मानो जीवन का अमूल्य दीप बुझ गया हो । सभी को प्रकाशमयी बनाने वाली ज्योति दूर नीले खुले क्षितिज मे तारे के समान टिमटिमा रही थी । मानो सावन बाजार मे रोशनी देने के लिए, प्रेरणा देने के लिए, रहनुमाहीन व्यक्तियो को रास्ता दिखाने के लिए, अधियारे जीवन मे रोशनी की लौ टिमाने के लिए महान नारी-जद्दन आपा चली गयी। सीमा यह सब देखते-सोचते आगे बढ गयी ।



खण्डित प्रेम

कमर मेवाड़ी

ईस बार मेल का रूप धासू था ।

रत्ना की आँखो मे खुशी की चमक कौंध गई । कहाँ तो छोटा सा मेला लगता था यहाँ, और कहाँ यह स्त्री -पुरुषो की रेलम- पेल । इस बार मेला अधिकारियो ने प्रचार भी तो खूब किया था ।

यही कारण है कि दो-दो सर्कस, सिनेमा, बाजीगर डोलर वाले, जुआ घर चलाने वाले ऑडियो - वीडियो सेन्टर तथा बडी-बडी कम्पनियो की विज्ञापन पार्टिया की भरमार थी ।

अज्जा को इस बार भी वही प्लाट एलाट हुआ था जो उसे हर बार होता है । पिछले पाँच वर्षो से वह यहीं पर अपनी दूकान सजाता है । रत्ना दूकान के पिछले भाग म पार्टीशन खडा करके अपनी घर-गृहस्थी जमा लेती है ।

रत्ना अज्जा की पत्नी नहीं है ।

अज्जा किसी मेले मे अपनी रग - बिरगी और आकर्षक चूडियो की दूकान सजाये बैठा था कि रत्ना चूडिया पहनने उसकी दूकान पर जा पहुँची । चूडियाँ पहनाते-पहनाते अज्जा की जादुई उँगलियो का स्पर्श रत्ना के शरीर मे विद्युत तरगें प्रवाहित कर गया । तब रत्ना ने अपनी निगाहे अज्जा पर टिका दीं ।

लम्बा-चौडा गोरा-चिट्टा और तीखे नाक-नक्शा वाला अज्जा, रत्ना के मन को भा गया । अज्जा के मन म भी कुछ एसा ही तूफान मचल उठा था । इस प्रकार रत्ना, अज्जा के हृदय की राजकुमारी बन बैठी । और गत पाँच वर्षों से रत्ना का अज्जा के हृदय पर एक छत्र साम्राज्य स्थापित था ।

अज्जा के साथ वह दिन-रात मेले-ठेलो म घूम-घूम कर चूड़िया पहना रही थी । अज्जा रगीन और मस्त मौला तबियत का अदमी था । तरह-तरह की दिलकश चूडिया उसकी दूकान पर उपलब्ध थी । यही कारण था कि हर मेले

में उसकी दूकान पर स्त्रियो का जमघट लगा रहता था । रत्ना के आ जाने के बाद से तो इस भीड मे चार गुना इजाफा हो गया था।

अज्जा की आमदनी काफी बढ गई थी । आमदनी बढने का कारण रत्ना की खूबसूरती थी या अज्जा का बाकपन । यह ठीक से नहीं कहा जा सकता । आमदनी बढने से अज्जा का रगीन मिजाज अन्दर ही अन्दर अगडाइया लेने लगा था । वह अक्सर रात को गायब हो जाता और देर रात शराब के नशे मे धुत्त, डगमगाते कदमो से दूकान मे प्रवेश करता । रत्ना तम्बू मे अकेली बैठी रोया करती ।

रत्ना को बहुत प्यार करता था- अज्जा ।

शराब के नशे मे तो उसका प्यार और हजार गुना बढ जाता था । वह दूसरे शराबियो की तरह गाली-गलौज या मार-पीट नहीं करता था । बल्कि बहुत शालीन हो जाता था । वह रत्ना को इतना सुख देता था कि वह सोचने लगती कि इससे ज्यादा सुख तो क्या मिलता होगा स्वर्ग मे आदमी को ।

देवी-देवताओ जैसा था उन दोना का प्यार ।

फिर भी रत्ना को उसका शराब मे धुत्त होकर आना पसन्द नहीं था । क्योंकि पिछले कुछ दिना से उसके लक्षण ठीक नहीं दिखाई दे रहे थे ।

और आज तो रत्ना के मन मे तूफान मचा हुआ था ।

सुबह से ही अज्जा गायब था । वह दूकान सभालते-सभालते थक कर हलकान हो चुकी थी । सूर्य देवता दिन भर की यात्रा तय करके अस्ताचल पर्वत की गोद मे समा चुके थे । पक्षी कलरव करते अपने-अपने गन्तव्य की ओर जा रहे थे, लेकिन अज्जा का कहीं पता नहीं था ।

रत्ना ने धीरे-धीरे दूकान समेटी । वह लडखडाती हुई उठी और पीछे अपने तम्बू मे जाकर अपने बिस्तर पर पसर गई । भारी थकान के बावजूद आज उसकी आँखो से नींद गायब थी ।

लगभग आधी रात को जब पूरे मेला ग्राउण्ड मे सन्नाटा छाया हुआ था । तम्बू के बाहर खटका हुआ । लगा कोई धम्म से गिर पडा है । रत्ना बिस्तर से उठ बैठी । उसने बाहर जाकर देखा । अज्जा टट की रस्सी से उलझ कर जमीन पर गिरा पडा है । वह होश मे नहीं था। रत्ना ने उसे उठाया और तम्बू मे लाकर लिटा दिया ।

रात भर रत्ना सोचती रही कि पहले तो अज्जा ऐसा नहीं था । पता नहीं आजकल उसे क्या हो गया है । पूरी रात रत्ना ने आँखो मे काट दी । पर अज्जा अपनी सही हालत मे नहीं आया । दूसरे दिन दस बजे अज्जा को होश आया ।

तब तक दूकान पर ग्राहकी शुरू हो गई थी, और रत्ना ग्राहको को निपटा रही थी। अज्जा भी मुह-हाथ धोकर अपनी बैठक पर आ डटा।

दोपहर तक दोनो बिना एक दूसरे से बोले चूडिया बेचते रहे। फिर रत्ना उठी और तम्बू म जाकर भोजन की व्यवस्था मे जुट गई।

अज्जा एक गठीले बदन वाली काली सी लडकी से बतियाता ही चला जा रहा था। लगभग एक घण्टे से वह उसकी इस हरकत को देख रही थी।

अज्जा जब ऐसी लडकिया से बात करता था तब उसके चेहरे के हाव-भाव और बात करने का लहजा बदल जाता था। अज्जा की उगलियो का जादूई स्पर्श लडकियो को उसके मोहपाश मे जकड लेता था। उसकी इस जकड से मुक्ति फिर असभव थी। ऐसे ही मोहपाश मे तो बध गई थी रत्ना, आज से पाच साल पहले और आज तक मुक्त नहीं हो पाई है।

लेकिन रत्ना के सग-साथ के बाद पूरी तरह ईमानदार रहा था अज्जा। पर आज उसकी नीयत मे खोट दिखाई दे रही थी रत्ना को।

रत्ना ने उस लडकी की ओर ध्यान से देखा। लडकी श्यामल होने के बावजूद आकर्षक थी, फिर भी रत्ना की निगाह मे वह अज्जा के योग्य तो कतई नहीं थी।

अज्जा की पसन्द पर उसे उबकाई सी आने लगी।

"यह कौन है ?" लडकी की तरफ इशारा करते हुए रत्ना ने पूछा।

"यह रुक्मा है।" अज्जा ने जवाब दिया।

"कौन रुक्मा ? " रत्ना ने जरा तुर्शी से पूछा।

"रुक्मा मेरी ब्याहता।" अज्जा ने मुस्कुराते हुए कहा।

अज्जा के मुह से यह सुनते ही रत्ना हतप्रभ रह गई। उसके चेहर पर हवाइया उडने लगी। उसे लगा कि वह जहरीले सापो के किसी भयानक जगल मे फस गई है और अब उसकी मृत्यु निश्चित है।

अज्जा उसके अगले प्रश्न से कतराने की कोशिश मे दूकान से उठ खडा हुआ। अज्जा के उठते ही वह लडकी भी खडी हो गई।

वे दोनो दूकान स निकल कर मेले की गर्द मे खो गये।

रत्ना को पहली बार अपनी आँखो मे मेले की उडती हुई महीन धूल के जमने का अहसास हुआ। उसकी आँखे धुधलाने लगी। उसे लगा कि दूकान मे धूल भर गई है और पूरा मेला धूल भरे बादलो के बवण्डर मे फस गया है।

रत्ना ने खुद को सभाला। एक कपडे से वह अपन चहर और हाथा पर जमी धूल को साफ करने लगी। उसने दूकान म भी झाड-पोछ शुरू कर दी। फिर भी मिट्टी थी कि साफ नहीं हो पा रही थी। उसे लगा कि वह किसी जबरदस्त झझावात म फस गई है।

रत्ना की दूकान पर बेतहाशा भीड़ थी, पर रत्ना गमगीन और बदहवास थी । वह दूकान पर बैठी जरूर थी लेकिन वह वहाँ मौजूद नहीं थी । उसका मन तो अतीत के गहरे समुद्र मे डुबकिया लगा रहा था ।

अचानक उसे लगा कि उसके सामने चेहरो का एक विशाल समूह उमड आया है और वह उससे चूडिया खरीदना चाहता है । कुछ देर वह उस जन समूह को अपलक ताकती रही ।

फिर उसने आव देखा न ताव दूकान से चूडियो के बण्डल और पैकेट उठा-उठा कर उस जन समूह की ओर फेकने शुरू कर दिये । जब पूरी दूकान खाली हो गई तब वह लस्त-पस्त हालत मे तम्बू मे जाकर अपने बिस्तर पर गिर पडी ।

जब अधेरे ने अपनी काली चादर फैलानी आरम्भ की तब वह धीरे से अपने बिस्तर से उठी और खाली-खाली दूकान को हसरत भरी निगाहो से ताका । आँसुओ से उसकी दोनो आँखे भीग गई । उसने एक दर्द भरी लम्बी आह भरी फिर माचिस से तीली निकाल कर तम्बू मे आग लगा दी और तम्बू से बाहर निकल आई ।

देखते ही देखते आग चारो ओर फैल गई ।

मेले मे चारो ओर अफरा-तफरी मच गई । लोग दौड-दौड कर आग बुझाने मे जुट गये । चारो ओर आग की लपटे उठ रही थी । और आकाश मे धुए के बादल मडरा रहें थे ।

आग मेले ही नहीं, रत्ना के दिल मे भी लगी थी । और उसमे से ऊँची लपटे उठ रही थी । मेले की आग को बुझाने के लिये सैकडो लोग दौड रहे थे, लेकिन रत्ना के दिल मे लगी आग को बुझाने वाला कोई नहीं था ।

उस रात रत्ना पता नहीं कहाँ चली गई । फिर रत्ना को कभी किसी ने नहीं देखा ।



आखिर क्यों ?

सैयद माकूल अहमद नदीम

"राम बचाओ बचाओ मुझे । मैं बरबाद हो गई---- मेरी तो दुनिया ही लुट गई", मेरे पास वाले मकान से रोने पीटने और चिल्लाने की आवाजे आ रही थीं । मैं अपने मकान के लॉन मे बैठा पौधो को पानी पिला रहा था उसी क्षण मुझे पत्नी ने आकर बताया-- "सुनिये तो वह अपनी नोकरानी है ना "पदमा" उसके पति का निधन हो गया।"

"५ ग यह चीख पुकार "गोपाला" के मकान मे हो रही है ?"

"हाँ - हाँ गोपाला चल बसा ।"

चलो अच्छा ही हुआ गोपाल अपनी पत्नी "पदमा" और आशा के लिये तो निराशा का ही केन्द्र था और मैं न जाने क्या-क्या व्यग करते हुए उसक मकान पर जा पहुँचा था जहाँ माहले वाला की भीड पहले से ही जमा थी। मेरे सामने गोपाल आँख बन्द किये मृत पडा था, मानो वह समाज के व्यक्तिया कि दास्ता सुना रहा हा । कोन से व्यक्तियो की। शायद उनकी दास्ता जो निर्धनता को धन से खरीद सकते है, जो मजबूरियो को प्रभाव से जीत सकते है आर्थिक ओर शारीरिक शोषण जिनकी दिनचर्या हैं ।

गोपाला की जवान पत्नी का गोरा चेहरा आज मन्द पड गया था, सेब जैसे गालो पर काल धब्बे उसकी चिन्ता को प्रकट कर रह थे । सर के काले बाल चेहरे पर बिखरे पडे थे ओर वह उसके चरणो मे बैठी आसू बहा रही थी । कभी "आशा" को सीने से लगाती तो कभी दोना हो सर जोड कर बिलखने लगती ।

मैं यह सब देख सोच रहा था- गोपाला तो जुआरी था, शराबी था । उसका चरित्र भी बदनाम था फिर भी "पदमा" को इतना रोता बिलखता देख मुझे अचरज ही हो रहा था । दर्जनो प्रश्न मरे मस्तिष्क म उठ रहे थे । वह तो नश की हालत म "पदमा" को मार कर अधमरा कर देता था । हर माह

उसे मिली पगार भी छीन लिया करता था। मैं जितना अधिक विचार करता सवालो के जाल मे उलझता ही जाता। गोपाला अधेड आयु का दुबला-पतला बीमार आदमी था। नशे की लत ने उसे सुखा कर छुवारा बना दिया था। नशे मे उसके दिन-रात कहाँ और कैसे पूरे होते, उसे कुछ पता ही नहीं रहता।

पेट भरने के लिये उसने सभी जतन कर लिये थे। कटार छाप बीडिया भी बनाई थी, सीमेन्ट के कारखाने मे चपरासी भी बना और सिनेमा हॉल का चौकीदार भी फिर गाडी चलाना सीख लिया तो ड्राइविग भी की और शहर के प्रसिद्ध धनी, लाला सेठ के यहाँ ड्राईवर हो गया। परन्तु उसकी बुरी आदते ही स्थाई नौकरी मे बाधा बनती रही। बीमार रहने के कारण घर पर रहना ही उसका काम था। बेरोजगारी पापी पेट की आवश्यकता, कर्जदारों की ललकारे, आशा के जवान होने के सकेतो ने ही पदमा को घर-घर जाकर नौकरी करने के लिये बाध्य कर दिया था।

यह भी एक सयोग ही था कि गोपाला सर्वप्रथम मेरे मकान पर ही उसे नौकरी दिलाने आया था।

मैंने कुछ शर्तों के बाद अपनी पत्नी की इच्छानुसार पदमा को घर के काम काज हेतु रख लिया था। मेरे एक प्रश्न के उत्तर म गोपाला ने मुझे बताया था।

"पदमा" उस की दूसरी पत्नी है। पहली पत्नी के सन्तान नहीं होने के कारण छोड दिया था। पदमा से उसका परिचय लाला सेठ के यहाँ हुआ था। गोपाला लाला सेठ का ड्राइवर था। वहीं दोनो की आँखे लड गई ओर एक ही आर्फर म पदमा ने गोपाला से विवाह कर लिया यद्यपि पदमा एक बेटी की माँ थी।

कुछ वर्ष पश्चात् दोना ने लाला के यहाँ से नौकरी छोड दी। परन्तु प्रतिदिन गोपाला से कर्ज चुकाने की माँग करने और उसे प्रताडित करने के कारण पदमा को घर-घर नौकरी करने के लिये मजबूर होना ही पडा। अब क्या था पदमा बेचारी घर-घर जाकर नौकरी करती और कहीं भलाई और कहीं बुराई का शिकार हाती। अपना घर भी चलाती पति के लिये दारू और दवाओ की व्यवस्था व बचा-खुचा बेटी के विवाह हेतु शेष रखती। मगर गोपाला को तनिक भी देर स्वीकार नहीं थी। उसे पत्नी और दवा से अधिक दारू प्रिय थी। दारू के अभाव मे पत्नी से लडना तथा अश्लील शब्दो का प्रयोग करना उसका मुख्य भजन था। दारू पीकर तो वह और भी होश खो बैठता था। पत्नी और आशा को पिटाई से बेहोश देख कर लौट आता। सोच और विचारो ने मझे भी बेकल कर रखा था। मेरे मन म विचार आता पदमा कितनी बदनसीब

हैं। दिन-रात मेहनत करती हैं समय पर दवाएँ लाती है, देती हैं और फिर शराब की व्यवस्था भी।

मैं सोच रहा था "पदमा" अब यह सब किसके लिये करेगी। पति तो कैसा भी हो परमेश्वर होता है। और आज वह भी दूसरो के कन्धो पर सवार *अन्तिम यात्रा के लिये चल दिया था।*

आज पूरे एक सप्ताह बाद पदमा काम पर आई थी। उसे देख कर मेरे दिल म दिल आ गया था अन्यथा पत्नीजी ने तो नाको चने चबवा रखे थ। नौकरानी के रख लेने से तो मेडम बैठ कर खाने की अभ्यस्त हो गई थी। आधे से अधिक काय मुझे ही पूर्ण करन पडते थे। परन्तु आज तो पदमा के आ जाने से मैं प्रसन्न था। यद्यपि पदमा उदास थी, मैं उसको इस विपदा मे कुछ आर्थिक सहायता करना चाहता था, मगर क्या करूँ अपनी तलवार से तेज पत्नी से डर भी था, कहीं मैडम को कुछ भ्रान्ति न हो जाय फिर मुझे याद आया एक बार हमारी मैडम ने पदमा को डाटा था।

"बाईजी आपकी आशा जवान हो गई हैं मेरी अनुपस्थिति मे यहाँ नहीं आया करो। साहब तो अदालत होते हैं, यहाँ मात्र चौकीदार होता है।" *और कभी मुझे भी लेकर दिये जाते।*

"सुनो जी, इसे हटा कर दूसरी नौकरानी रख लीजिये। इसका पति मर गया है, बेटी जवान है फिर उसके लिये पडौसी तरह-तरह की बाते बनाते हैं। कहीं यह अपने को भी बदनाम न कर दे।" मैं पत्नी के इस कटु सत्य पर विचार कर ही रहा था कि मुझे पदमा की पिटाइ याद आ गई जब मैं अपने ऑफिस मे बैठा आगे के मुकदमो की बहस की तैयारी कर रहा था। अचानक पदमा के रोने की आवाज ने मेरी एकाग्रता को भग कर दिया। मैं गुस्से मे लाल-पीला होकर गोपाला के घर जा पहुँचा। गोपाला पदमा को पीट रहा था और पूछता जा रहा था। इतनी रात गये कहाँ से आ रही है? मैं दरवाजे मे खडा पदमा के उत्तर सुन रहा था।

"तू क्या समझता है जूठे बर्तनो की सफाई या दो रोटी पका आने से यह घर चल रहा है? तुझे क्या मालूम, आटे दाल का भाव क्या है ? तेरा किया कर्ज कैसे-कैसे चुका रही हूँ ? मकान किराया कैसे देती हूँ ? तेरे लिये शराब की बोतले कहाँ से लाती हूँ ?" और रुक-रुक कर आशा के रोने की आवाज भी सुनाई दे रही थी।" गोपाला मारता जा रहा था और चिल्लाता जा रहा था- "तू मेरे बुढापे का फायदा उठा रही है। मेरा नाम बदनाम कर रही है अगर यही करना था तो किसी जवान से विवाह रचाया होता, मैं तेरी जान ले लूगा बता कहाँ से आ रही हैं? मारते-मारते जब वह थक गया तो मुझे घड़ाम की आवाज सुनाई दी, शायद वह गिर पडा था। मैं दरवाजे से वापस

लौट आया और अपने ऑफिस आकर पदमा के तर्कों को सत्यता पर परखने लगा। फिर मैंने रात भर विचार करने के बाद पदमा को पवा से पृथक कर दिया था। गोपाला तो लम्बी बीमारी के बाद मर गया था परन्तु पदमा के लिये "आशा" की जवानी, और हाथ पीले करने की जिम्मेदारी चट्टान बनी खडी थी। वह दिन-रात परिश्रम करती, हाँफती-काँपती आती और बिस्तर पर आकर पड जाती। उस समय उसकी स्थिति उस जाम की तरह होती, जिसका खाली करके साकी उसकी ओर मुडकर देखना भी नहीं चाहता। एक रात जब पदमा घर लौटी तो "आशा" जाग रही थी। उसने देखा कुछ व्यक्ति माँ को छोडने आये हैं। उसने सुना एक व्यक्ति ने कहा "पदमाजी कल सेठजी ने जल्दी बुलाया है।"

शारीरिक शोषण और निरन्तर परिश्रम से पदमा भी बीमार-बीमार सी रहने लगी थी। उसके गोरे चेहरे पर झाइया उसके जीवन की चुगलिया खा रही थी। निरन्तर बीमारी का कारण डॉक्टरो ने एड्स घोषित कर दिया। पदमा की जवानी हवा से भरे गुब्बारे की तरह फट कर समाप्त हो चुकी थी। अब वही पदमा उसके अपनों के लिये भी अछूत बन गइ थी। मगर उसकी जवान बेटी उसके लिये वरदान सिद्ध हुई। दिन भर उसके बदले खाने पकाने का काम करती। माँ की देख-भाल करती उपचार के लिये दवाएँ भी जुटाती एक रात पदमा की हालत बहुत अधिक बिगड गई। भगवान भरोसे रात जैसे-तैसे खत्म हुइ। आशा ने पडोसियो से सहायता की गुहार की परन्तु किसी ने भी उसकी सहायता नहीं की हमसायों ने उसका मजाक उडाया तथा उसके माँ और बाप पर व्यग्यो के मिसाइल दागे।

किसी ने रास्ता भी सुझाया तो लाला सेठ के बगले का। मरता क्या न करता, वह रोता-धोती सेठ जी के पास जा पहुँची। सेठजी ने उसका परिचय प्राप्त किया और दूसरे ही क्षण उसके जीवन का मूल्य आक डाला।

ढेर सारी दवाए दिला दी, सर पर हाथ रखा और दूसरे दिन आकर सौ रुपय और ले जाने को कहा।

आशा भी इस सकेत को समझ गई थी। पदमा का उपचार चलता रहा दिन और दवाएँ बीतती जा रही थीं, लेकिन पदमा का स्वास्थ्य तो गिरता जा रहा था। एक शाम पदमा को अचानक खून की उल्टिया हुई। वह अर्ध निद्रा मे हो गइ। कहीं रात को और अधिक हालत न बिगड जाये आशा यह सोचकर माँ को सोता छोड सेठजी के पास गुहार करने पहुँच गई। सेठजी ने रोज ना आने की शिकायत की, घण्टे दो घण्टे आशा को अपने पास रख कर ढेर सारी दवाइया भी दिलवा दी और कुछ नगदी भी। आशा जब दवाइया लेकर घर पहुँची तो पदमा जाग रही थी। वह बेचैन थी, आशा कहाँ गई।

उसे देखते ही पूछा यह इतनी सारी दवाइया और नगदी कहाँ से लाई हैं ? पदमा कुछ क्षण चुप रही । फिर डरते-डरते बोली-

"सठजी ने यह दवाइया दिलवाई हैं। रुपये भी उन्होंने ही दिये हैं तथा राज आन को कहा है ।"

पदमा की जोरदार चीख निकल गई । और दोनो माँ-बेटी एक दूसर क लिये आँसू बहाने लगी ।



दृष्टिकोण

नृसिह राजपुरोहित

"नींद आ गई क्या ?" पत्नी ने पीठ पर हाथ फेरते हुए पूछा ।

"नहीं जी, इतनी जल्दी नींद कैसे आ जायेगी ?" मैं करवट बदल कर जिज्ञासा से उसके मुह की ओर ताकने लगा । कोई भी नई बात सुनाने से पूर्व भूमिका बाधने की उसकी आदत जो है ।

"अजी नींद तो आपके पल्ले बधी हुई है । बस लेटने भर की देर है, खर्राटे भरने लगते हैं । इतनी जल्दी तो छोटे बच्चे को भी नींद नहीं आती ।"

"यह तो सब ऊपर वाले की मेहरबानी है । बाकी ससार मे दुखियारे प्राणिया की भी कौन सी कमी है ? पडे करवटे बदलते रहते हैं और नींद नजदीक भी नहीं फटकती।"

वह हँसने लगी- "क्या करूँ मुझे नींद थोडी देरी से ही आती है ।"

"मैंने कहा न, अपने-अपने भाग्य की, बात है ।"

आज तो एक नई बात सुनने म आई । धीरे-धारे वह अपने मेन टापिक पर आने लगी ।

"वह क्या?" मैंने पूछा ।

"सुना कि सुरेश की पत्नी ने 'एबोरशन' करवा लिया ।"

सुन कर मुझे भी आश्चर्य हुआ । सुरेश मेरे मित्र मनोहर का सबसे बडा लडका है । अच्छी खासी सरकारी नौकरी है । उसकी पत्नी एक शिक्षित महिला है और किसी विद्यालय मे वरिष्ठ अध्यापिका है । मेरे ख्याल से यह उसका पहला बच्चा था । बात कुछ समझ मे नहीं आई । कोई कारण भी नजर नहीं आया ।

"तुम्हे यह बात किसने कही ?"

"उसकी सासू ने ।"

"यह सब कैसे हो गया ?"

"उसने सोनियोग्राफी करवाई थी । उससे पता लगा कि गर्भस्थ शिशु कन्या है। इस पर कुछ दिना पश्चात् पुन जाच करवाई गई और तसल्ली होने पर एबोरशन करवा लिया।"

"तो क्या यह बात घरवालो को सलाह से हुई ?"

"केवल मनोहरजी को इस बात का पता नहीं है, बाकी सबकी रजामदी से ही यह काम हुआ है ।"

"तो कन्या के जन्म लेने पर एसी क्या मुसीबत आने वाली थी ?"

"इसका जवाब ता कोई बेटी का बाप ही दे सकता है । आपको ता इसका अनुभव है नहीं ।"

"यह भी आपकी ही मेहरबानी समझो ।"

"खैर मरी तो क्या पर ऊपर वाले की मेहरबानी समझो । बाकी तीन बेटा की जगह तीन बेटियो ने घर म जन्म लिया होता तो श्रीमान को भी पता लग जाता । ये मजाक की बाते करना भूल जात ।"

"इसम मजाक की क्या बात हुई ?"

"और नहीं तो क्या ? मैंने कहा न कि आपको इन बातो का अनुभव ही नहीं है कि बेटी का बाप बनने पर क्या-क्या मुसीबते उठानी पडती हैं ।"

"खैर! मान लिया कि मुझे अनुभव नहीं है । पर मुझे यह तो समझा दा कि बेटी के जन्म लेन पर ऐसा क्या नुकसान है और बेटे क जन्मने पर एसा क्या लाभ है ?"

"वाह जनाब ! आपने यह सवाल भी खूब पूछा । दुनिया जानती है कि बेटा तो वश का वारू और बुढापे का सहारा होता है जबकि बेटी तो पराया धन है ।"

"ठीक है जहाँ तक वश चलाने की बात है मैं स्वीकार करता हूँ । पर बेट बुढापे का सहारा बनगे ही, यह कोई जरूरी नहीं । वे बात तो सयुक्त परिवार प्रथा के साथ समाप्त हो गई हैं । अब तो परिवार शब्द की परिभाषा ही बदल गइ है ।"

"मानती हूँ मैं भी कि वक्त के साथ कुछ बदलाव आया है, पर बुढापे म चाहे दुनिया की लाज स करा या मन की दाझ स करो बेटो को माँ-बाप का सवा तो करनी ही पडती है ।"

उसकी बात सुनकर मुझ थाडी हँसी आ गई । मैंने कहा- "नाराज मत होना एक सवाल पूछता हूँ । दो-दो बटे होत हुए भी बुढापे म तुम्हारे माँ-बाप का कसी सवा हुइ?"

"हमरे वाले ता दाना कपूत हैं ।"

"तो घर-घर यही घाट समझो श्रीमतीजी, कहीं कम तो कहीं अधिक। इन सपूतो की तुलना मे तो बिचारी बेटिया ही भली कि ससुराल जाने पर भी उन्हे अपने माँ-बाप की चिन्ता बनी रहती है।"

"यह बात तो आपकी सही है।"

"इसके अलावा एक बात और है- यदि बेटिये जन्म नहीं लेती तो यह ससार कैसे चलता? ये सपूत वशधर कहाँ से उत्पन्न होते ?"

"ये सारी बाते अपनी जगह पर सही हो सकती हैं पर आज के युग मे बेटी का बाप है तो बिचारा दुखी। प्रथम तो उनके सगाई सम्बन्ध ही होने कठिन। लोगो की तो आजकल एकदम राक्षसी वृत्ति हो गई है। बेटी के बाप को सुख कहाँ ? कोई बेटियो के साथ मारपीट करके उन्हे जिन्दा ही जला डालते हैं।"

"तो इसमे लडकियो का क्या कसूर है ? बताओ तो भला। अब इस सबके लिये उन्हे हीन दृष्टि से देखना, उनके प्रति ओर अधिक अन्याय करना है और पाप का भागी बनना है। इसका एक मात्र इलाज यह है कि उन्हे हर प्रकार से योग्य बनाया जाय। आज तो कानून भी लडकियो के पक्ष मे है।"

"अजी कानून - कानून की जगह है और असलियत अपनी जगह पर। इतने कानून बनने के उपरान्त भी औरत तो आज भी पैर की जूती मानी जाती है। आप एक, वह कौनसा श्लोक सुनाया करते हैं ? "यत्र नारीयस्तु पूज्यत। " पर ये सारी फालतू बाते केवल नारी समाज को भरमाने के लिये कही गई हैं। असलीयत यह है कि उसका जीवन भर शोषण होता रहता है। मैं तो यही कहूगी कि सात जन्म खोटी कमाई करने पर ही नारी के रूप म जन्म लेना पडता है।"

"देखो वक्त के साथ धीरे-धीरे कुछ फक अवश्य पडेगा।"

"मुझ तो कोई फक पडता नहीं लगता। जब प्रकृति स्वय उसके पक्ष मे नहीं है तो और कौन उसकी मदद करने के लिये आगे आएगा ? प्रकृति ने उसके शरीर की रचना ही ऐसी बनाई है कि सब कुछ उसे ही सहन करना पडता है। यदि नारी के स्थान पर नर को गर्भ धारण करना पडे तो उसकी अक्ल ठिकाने आ सकती है।"

मुझे फिर हँसी आ गई। उसकी कल्पना शक्ति के लिये तो उसे दाद देनी ही पडेगी। मैंने कहा- "विज्ञान का युग है। सभव है भविष्य मे यह बात भी पार पड जाय।"

"असभव ! शत प्रतिशत असभव ! सारे विश्व का मानव समाज पुरुष प्रधान है। वह यह सब कैसे सभव होने देगा ? खैर अब छोडिये इन

बातो को। लगता है अब आपको नींद आ रही है। सो जाइए आराम से, सुबह जल्दी भी उठना है। इस बहस का तो कोई अत नहीं है।"

मैंने करवट बदल ली और नींद लेने की कोशिश करने लगा। परन्तु मेरी यह आदत है कि एक बार नींद उड जाने पर पुन बहुत मुश्किल से आती है। आज भी वही बात हुई। सुरेश की पत्नी के एबोरशन वाली बात मेरे दिमाग मे इस कदर घुस गई थी कि मुझे भाँति-भाँति के विचार आने लगे। मैं इस बात को एक सामाजिक समस्या के रूप म लेकर उसके हल के विषय म सोचने लगा। जीवन मे देखी-सुनी कई घटनाएँ याद आने लगीं। मन समय की सीमा को लाघता कहीं का कहीं पहुँच गया। मुझे चालीस साल पहले की बाते एक-एक कर याद आने लगीं।

सरकारी नौकरी मे रहते हुए मुझे भारतीय प्रजातत्र के कई चुनाव सम्पन्न कराने का अवसर मिला। मेरी नौकरी का अधिकाश समय राजस्थान क पश्चिमी भू-भाग के रेगिस्तानी क्षेत्र मे बीता। इसलिये इस क्षेत्र को ठेट पाकिस्तान की सरहद तक खासकर चुनावो के अवसर पर मुझे देखने का अवसर मिलता रहा। यहाँ के सामाजिक जीवन, रीति-रिवाज और जनता के जीवन मूल्यो स मैं भली प्रकार परिचित हो गया।

काफी बरसा पहले की बात है भारत अभी स्वतत्र हुआ ही था। चुनाव के दिनो म मेरी ड्यूटी गाँवो म लगी। मैं अपने लवाजमे के साथ हडक्वार्टर से रवाना होकर एक ऐसे गाँव मे पहुँचा, जो सडक मार्ग से काफी दूर था। इस मरुस्थलीय क्षेत्र मे यहाँ तक पहुँचना भी बडा कठिन कार्य था। पर जानकारो की मदद से किसी प्रकार पहुँच गये।

उस गाँव का दृश्य आज भी मेरी आँखा के सामने घूम रहा है। डेढ-दो सौ घरो की बस्ती, जिसमे अधिकाश घर एक समाज विशेष के थे। गाँव के पश्चिम मे एक छोटी-सी पहाडी थी और उसके ढलान म यह गाँव बसा हुआ था। गाँव मे पयजल का पूरा अभाव था। गाँव के पास वाले तालाब मे छोटी-छोटी कुइय खोदी हुई थीं, जिनमे रिस-रिस कर थोडा-थोडा पानी इकट्ठा होता और उसस गाँव वाले किसी प्रकार अपना काम चलाते। जमीन की गहराई म पानी खारा था। गाँव स पूर्व दिशा मे यह तालाब स्थित था और उसके किनारे ही प्राइमरी स्कूल का भवन बना हुआ था।

हम लोगा ने इसी स्कूल मे जाकर अपने डेरे जमाये। यही हमारा पोलिग स्टेशन था जहाँ हम बूथ बनाकर मतदान का काय प्रायोजित करना था।

गाँव के पनघट का मार्ग स्कूल के बिल्कुल सामने ही पडता था। अत दिन भर लागा का आना-जाना चालू रहता। पानी की यहाँ इतनी किल्लत था कि लोगो का अधिकाश समय इसी काम म बीत जाता। एसा प्रतीत होता

था कि मानो यहाँ पानी का प्रबन्ध करने के अलावा लोगो के पास अन्य कोई काम ही नहीं है ।

सब जगह पानी लाने का काम औरते करती हैं । पर यहाँ मैंने देखा कि पनघट पर औरते न होकर अधिकाश आदमी ही आ जा रहे थे । औरत तो कोई नजर नहीं आ रही थी । अपने कधो पर मिट्टी के घडे उठाये आदमी ही आदमी नजर आ रहे थे । पूछने पर पता चला कि इस गाँव के अधिकाश घरो म पर्दा प्रथा है । इसलिये पानी लान का काम औरते नहीं करके आदमी ही करते हैं । या घर का दूसरा सारा काम औरत करती ही हैं । वे खेतो-खलिहानो म जाकर काम करती हैं, ईंधन एकत्रित करती हैं और घर से बाहर के सारे छोटे-मोटे कार्य करती हैं । बस केवल पानी नहीं लातीं । इस रिवाज को यहाँ 'इडाणी-प्रथा' कहा जाता है । मुझे यह बात बडी अजीब लगी । औरत जब घर के बाहर का सारा काम काज कर लेती हैं तो फिर पानी लाने म क्या एतराज है ? मुझ कुछ समझ म नहीं आया । मेरे साथ एक चपरासी था- जीवा नाई । वह इसी क्षेत्र का निवासी था । मैंने जब उससे इस अजीब रिवाज के सम्बन्ध म पूछा तो वह हँसकर बोला- "साहब, आपको इस इलाके मे कई प्रकार की अजीब बाते देखने-सुनने को मिलेगी । आप उन्हे सुनकर चकित रह जायगे ।"

मेरी जिज्ञासा बढी । मैं उसके मुह की आर देखने लगा । उसने मुझे बताया कि उसका ननिहाल इसी गाँव मे हाने से उसका बचपन यहीं बीता । उसकी बूढी नानी, जो एक सौ दो बरस की है, आज भी मौजूद बैठी है । इस गाँव मे एक समाज विशेष के डेढ-दो सौ घर हैं, पर इतने घरो मे कन्या एक भी घर म नहीं है । पिछल पचास-साठ बरसो से लगातार यही स्थिति चल रही है । आधी शताब्दी बीत जाने के उपरान्त भी यहाँ किसी घर मे चवरी नहीं मडी आर कन्यादान नहीं हुआ ।

जीवा की बात मुझे समझ म नहीं आई । यह तो एक चमत्कार जैसी बात थी कि पिछली आधी शताब्दी म इन घरो म कोई लडकी नहा जन्मी । 'ता क्या सारी औरते बन्ध्याएँ हैं?' मैंने उससे पूछा ।

"नहीं साहब ! सारी पुत्रवती हैं ।"

"पर यह बात हो कैसे सकती है कि किसी गाँव की सारी औरत केवल बेटो को ही जन्म देती हैं । यह बात तो 'गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रेकार्ड' म दर्ज करवाने योग्य हैं ।"

गिनीज-विनीज की बात ता आप जान साहब पर इस गाँव म बेटिय जन्म लेती ही नहीं यह बात भी गलत है । वे जन्म अवश्य लेती हैं पर उन्हे जन्म लेते ही 'दूध पीती' कर दी जाती है ।"

'दूध पीता' करने वाली बात मेरी समझ में नहीं आई। पूछने पर ज्ञात हुआ कि 'दूध पीता' करने का मतलब उन्हें जन्मते ही मार दिया जाता है।

सुनकर मेरे तो रोंगटे खड़े हो गये। आधी शताब्दी से इस गाँव में यह कुकृत्य चला आ रहा है तो राम जाने यहाँ आज तक कितनी बाल हत्याएँ हुई होंगी? मैं उसके मुँह की ओर ताकता रह गया मैंने फिर पूछा-

"जीवा! क्या यह सच्ची बात है?"

"आपको यदि विश्वास नहीं हो तो यहाँ के लोगों से पूछ लीजिये साहब।"

चपरासी ने बड़ी रोमांचकारी बात सुनाई। मैं गहरे विचार सागर में गोते लगाने लगा। आँखों के सामने अपने नवजात शिशु को मरते देख कर माँ के मन पर क्या बीतती होगी?

उसने मुझे बताया कि यहाँ प्रसव में पुत्र जन्म के समय दाई थाली बजाकर और कन्या जन्म के अवसर पर सूप बजा कर घर वालों को सूचना देती है। सूप बजते ही घर में नवजात शिशु को मारने की तैयारियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं। शुरू-शुरू में सुना है कि शिशु को अफीम चटाकर समाप्त किया जाता था। अफीम का तरल रूप दूध कहलाता है अतः इस क्रिया को 'दूध पीती' करना कहने लगे। पर आगे चल कर तो इस प्रकार की बाल हत्या के कई अन्य तरीके भी प्रचलित हो गये।

मेरी जिज्ञासा बढ़ती जा रही थी। पूछने पर उसने मुझे आगे बताया कि इस रेगिस्तानी इलाके में बाल हत्या का एक सस्ता और आसान तरीका यह प्रचलित हुआ कि प्रसव के समय दाई बालू रेत की पोटली कपड़े में बाँध कर तैयार रखने लगी। कन्या के जन्म लेते ही वह पोटली उसके नाक और मुँह पर रख दी जाती। बस शिशु थोड़ी ही देर में दम घुटकर समाप्त हो जाता। सारा काम चुप-चाप पूरा कर लिया जाता। घर की बड़ी बूढ़ी स्त्रियाँ रो-धो कर नाटक कर लेतीं कि मृत कन्या ने जन्म लिया है।

"तो क्या इन्हें कोई यह नहीं पूछता कि इनके घरों में केवल मृत कन्याएँ ही क्यों जन्म लेती हैं? मृत पुत्र क्या नहीं जन्मते?"

"*मन में सब समझते हैं साहब। पर यहाँ तो अब यह एक आम* बात हो गई है। न कोई इसे बुरा मानता है और न कोई इसकी चर्चा ही जुबान पर लाता है।"

"पर इस घिनौनी प्रथा के पीछे मूल कारण क्या है?" मैंने पूछा।

"मूल कारण तो आर्थिक और सामाजिक हैं।" उसने मुझे उनकी खुलासेवार व्याख्या करके समझाई।

एक अनपढ चपरासी होते हुए भी उसकी जानकारी कितनी विस्तृत और दृष्टिकोण कितना निष्पक्ष था यह देखकर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। मैंने उसस पूछा- "जीवा तेरा ननिहाल इसी गाँव मे है तेरा बचपन भी यहीं बीता। तेरी नानी जमाना दखी हुई जिन्दा बैठी है। क्या प्रारम्भ स ही कन्या वध की यह कुप्रथा अवाध गति से यहाँ प्रचलित है ?"

"नहीं साहब ! मेरी नानी बताती है कि पहिले यह कुप्रथा यहाँ इतनी अधिक प्रचलित नहीं थी। यह तो बदलते सामाजिक मूल्यो और आर्थिक दबावा क कारण अधिक प्रचलन मे आई। मेरी नानी एक कुशल दाई रही हैं। पर जब स यह पाप कर्म प्रारम्भ हुआ, उसने यह धधा ही छोड दिया।"

मेरा सारा स्टॉफ कल होने वाले मतदान आयोजन की तैयारी म लगा था। बूथ बन गए थे और आवश्यक लिखा-पढी का कार्य चल रहा था।

मैंने कहा- "जीवा आज तो तुमने कई नई बाते बता दीं। दफ्तर मे ता तू कभी एसी बात नहीं करता रे।"

"बात तो प्रसग आने पर ही की जाती है साहब ! दफ्तर मे इतनी फुरसत ही कहाँ मिलती हे।" वह बोला।

कमरे म लटकती दीवाल घडी ने बारह के टकारे बजाये और मेरी ध्यान समाधि टूटी। मैं भूतकाल क अधकार स वर्तमान के प्रकाश मे आ गया। फिर भी मन उन्हीं बाता मे घूमता रहा। मैं सोचने लगा- समय बदल गया पर समाज क साच म कोइ बदलाव नहीं आया। कन्या के प्रति समाज की अभी तक वही पुरानी धारणा बनी हुइ है। उसे आज भी भार स्वरूप समझा जाता है। इसलिये उसके प्रति व्यवहार म तनिक भी फर्क नहीं पडा। पहले होती थीं शिशु हत्याएँ आर आज हाती हे भ्रूण हत्याय। केवल समय साधन और पात्र अवश्य बदल गए हें पर कन्या क प्रति दृष्टिकोण मे कोइ बदलाव नहीं आया है। या मानव ने भल ही कितनी तरक्की करली हो पर विचारधारा क हिसाब से तो आज भी वह बर्बर आर जगली ही है।



पेड़ कटारे

रामकुमार ओझा

आदमी पेड का पर्याय है । पेड न रहगे तो आदमी भी नहीं रहेगा । आदमी जानता है, फिर भी पेड काटता है । आदमी सब जानता है, इसलिये कि नेक फरिश्ते जिब्रील का उसे वरदान है, फिर भी आदमी बहुत कुछ ऐसा भी करता है जो उसे मिटाता है, क्योकि बद फरिश्ते इब्लीस का उसे श्राप है, यही आदमी का विरोधाभास है ।

आदमी आदिम-युग म पेड काटता था जलावन के लिये, लकडी को हथियार के रूप मे इस्तेमाल करने के लिये । तामीर के लिये भी उसे काठ की जरूरत थी । पर अब सभी के पर्याप्त विकल्प मिल चुके हैं, फिर भी आदमी पहले से ज्यादा पेड काटता हे । क्यो काटता है आदमी पेड ? इस सवाल से पारस बाबू क्षण भर को अपने को ही छला चाहते थे । पर प्रश्नोत्तर नया प्रश्न पैदा करते थे । प्रश्नोत्तर बडे जहरीले थ ।

आदमी अपनी हिंस्र वृत्ति के कारण पेड काटता है यानी पैसा पीटने के लिये । हिसा आदमी का दामन नहीं छोडती । नाखून और दाँत जब तक हैं हिसा साथ है ।

पर अतुल हिंस्र नहीं है । वह उनका अपना बेटा है, उसकी प्रकृति उनकी अपनी ओरस हे । पेड काट कर पैसा पीटना उसका पेशा नहीं है । फिर भी वह पेड काटता है कटवाता है । उसने वह पेड कटवा डाला जा उसका पुरखा था ।

बरगद उनक घर क पिछवाडे की चहारदीवारी म खडा दुर्देव से उस घर की रखवाली करता था । बरगद के आगोश म उ के पुरखे पल थे । बरगद की कोई जन्म-कुण्डली न थी न उम्र का कोई लेखा-जोखा । उसकी पकी शाखाओ से मोटे रस्सो जैसी जटाएँ फूटकर धरती तक लटकी थीं जिन्हे पकडकर उनके पुरखों और बाद म अतुल ने झूला-झूलते आकाश तक पींग भरीं थीं ।

पेड़ कटारे

उस कुलागार न उसी बूढे दरख्त का कटवा मारा, जिसकी खोखर मे छुप-छुप कर पिता पारस बाबू और माँ पार्वती का प्यार पका था। बरगद क्या कटवाया, उसने तो अपन सर पर पडा वरद-हस्त ही कटवा दिया। आर कल भोर मे कटगा, घर का अगडा जामुन का पेड। उसी जामुन को कटवा रहा था अतुल जिसके बगनी फला के रस से उसकी देह परिपुष्ट हुई थी। तो क्या अतुल की सवेदनशीलता सूख गयी ?

इस ख्याल के साथ ही पारस बाबू सिहर कर पलग पर उठ बैठे। जहरीले प्रश्न ने बडा गहरा दश दिया था। निश्चय ही अतुल अपनी जडो से कट चुका है। वह आधारहीन होकर असहाय सा उस अमर बल से घिर कर खडा है जो अपन आश्रयदाता पेड को रस चूस-चूस कर मार डालती है, और खुद छतराल बन फैल जाती है। बडी हत्यारिन होती है यह पराई सभ्यता रूपी अमर बेल। जो इसकी बन्दिश मे आया, वही आया, दूध पर पलने वाले बच्चे के समान पराया हो गया।

पिछवाडे की धरती का सुहाग इसलिये उजाडा गया कि उस विधवा धरती की छाती पर अतुल फिरगी द्वारा लाये गये सात खारे समुन्दरो मे पखरे गये पुष्प, रज पराग, सुगन्धहीन बेडौल, बदरग पौधे बौना चाहता था। बरगद काट कर यदि गुलमोहर, अमलतास भी लगवाता तो भी चलता, किन्तु नागफनियो जैसे पराये पौधा का चलन इस घर मे न था न होगा। अतुल ने तो पूजा की थाली म पेरिस की शराब परोसने जैसा कुकृत्य किया है। पारस बाबू गहरे तक हिल कर टूट क कगार पर जा खडे हुए किन्तु फिर भी वे डूबने को तयार न थे।

रात का अभी तीसरा पहर था, चाँद तीन-चौथाई आसमान पार कर चुका था। अब उसकी चाँदनी नगी पहाडियो पर फिसल रही थी। जो पहाडिया कभी-कभी देवदार चीड, फर, के सघन वृक्षो से ढकी थी, वे ही आज नगी वारगनाआ सी पसरीं थीं। यह सब आदमी ने किया। क्या किया उसने ऐसा ? कैसे जी पायेगा अब आदमी ? केवल पर्यावरण का ही प्रश्न नहीं है, आदमी की सवेदना का भी सवाल है। प्रकृति से कट कर क्या आदमी हृदयहीन मशीनी रोबॉट बनने जा रहा है ? क्या भावी सभ्यता का सृजक लोहे का आदमी होगा ? इन प्रश्नो ने पारस बाबू को पूर्णतया सिहरा दिया।

अब वे सो न पाये। उठ कर बाहर आ गये। अगहन की गुलाबी सरदी थी, उन्ह सु न रही थी। जामुन की पत्तियो से छन-छन कर चादनी ओस के रूप म टपक रही थी। पारस बाबू न आहिस्ता कदमो से जामुन की परिक्रमा की। उन्होंने आँखो ही आँखा से एक -एक शाख को टटोला और अन्त म

सबसे मोटी शाख को पहचान कर वे घर की उस कोठरी मे जा घुसे जहाँ पुराना सामान रखा था ।

उनके मन म एक सकल्प पक चुका था– "जामुन को बचाना है ।" बरगद की कटाई के समय वे साधारण सा मौखिक प्रतिरोध कर तटस्थ हो रहे थे । तब वे नीलकण्ठ महादेव क समान गरल पी गये थे, किन्तु अब उनकी रुद्र की मुद्रा थी ।

इतने दृढमन तो वे जूली को भगाते समय भी न रहे थे । जूली एक विलायती कुतिया थी । विवाहित अतुल विलायत स गोरी पत्नी तो न ला पाया किन्तु एक कुतिया वहा से लिवा लाया । कुतिया उसी के बिस्तर पर सोती । सस्कारी बहू दीप्ति ने श्वान की सहसायिनी होने से इन्कार कर दिया । पारस बाबू को भनक पडी तो उन्होने कुतिया को भगाने का आयोजन किया । वे एक देशी कुतिया, भूरी को लिवा लाये और उस स्वदेशी नश्ल ने अगले दिन ही विलायती पिद्दी को खदेड भगाया ।

भूरी की सतानें जगी और जवान अभी इसी घर मे थे । पारस बाबू ने सुसकार की तो जानवर पास आ गये । पारस बाबू एक मोटा रस्सा और अतुल के बचपन का पलना लेकर चले तो कुत्ते पीछे लगे पेड तक उनके साथ आये ।

पारस बाबू ने महसूस किया, जामुन मे सनसनाहट न थी । हवा जैसे बिना छूये ही उसकी पत्तियो के पास से गुजर रही थी । जामुन को जैसे निकट भविष्य मे ही आगत मौत का आभास मिल चुका था । इसी से वह दम बाधे खुद मौन था । पेड अवसन्न हो चुका था किन्तु पारस बाबू की चेतना सक्रिय थी ।

पारस बाबू ने धोती का कछ्छा बनाया और बुढापे के बावजूद उस मोटी शाखा को जो लिया उन्होने उसके तने से कस कर रस्से को बाधा और उसके दोनो छोर जमीन तक झुला दिये, फिर नीचे उतरे झोरो से पलने को बाधा और फिर पेड पर चढ कर रस्से को ताना पलना ऊपर आ गया पारस बाबू आसन जमा कर उसमे बैठे और रस्से को ढीला छोड दिया । पलना धरती से लगभग पन्द्रह फीट ऊपर अधर मे झूल गया । इतनी ऊँचाई से कूद कर आदमी अवश्य मर जाता ।

पारस बाबू ने झुक कर देखा जगी और जवान सावधान की मुद्रा म बैठे थे । बस उन्ह 'सू' के इशारे भर की देर थी । चौथे पहर दूर से आती पावो की धमक सुनाई देने लगी । निश्चय ही पेड कटारे आ रहे थे । कुत्ते कनौतिया तान कर, अगले पजो के बल आक्रामक मुद्रा मे बैठ गुरघुराने लगे । कुत्ता की गम्भीर घुर-घुर सुन कर कटारे दूर ही रुक गये । पर उनक कुल्हाडी क फाल हवा मे उठ गये । वे किसी समय कुत्तो को कत्ल कर सकते थे।

अब कुत्ते भाकने लगे थे । पारस बाबू ऊपर से हाथ झुला-झुला कर उन्ह निर्देश दे रहे थे । कुत्तो की बेवक्त की भूस ने अतुल की नींद उचाट कर दी । वह गाउन सरसराते, क्रोध मे भुनभुनाते बाहर आ गया था । दीप्ति भी उसके पीछे लगी आई । बदजात कुत्ते पेड कटारो को फाड खाने को तैयार थ । अतुल ने चीख कर आदेश दिया । "चलाओ कुल्हाडे चलाओ । पेड से पहले इन कुत्तो के टुकडे कर डालो । ये हरामी मेरे पुराने दुश्मन हैं ।" कटारे आक्रमण किया ही चाहते थे कि तभी बाज के डैने के समान कोई चीज उनके सर पर सनसनाने लगी । वे न जान पाये कि अचानक क्या हुआ । किन्तु दीप्ति जान गयी । पारस बाबू पलने पर खडे होकर पूरे वग स पींग भर रह थे । व किसी भी क्षण कूद कर जान दे सकते थे । वह चिल्लाई । "रुको, कुत्ते नहीं मारे जायगे । पेड नहीं कटेग । कटारे लौट गय ।" अतुल को दीप्ति धकल कर भीतर ल गयी ।

कुत्ते अब शान्त थे । पारस बाबू नीचे उतर चुक थे । वे घर क पिछवाड़े पहुँचे और बरगद का एक नया पौधा ठीक उसी जगह बो दिया, जिस जगह से बूढा बरगद कटा था ।

किन्तु अतुल जैसे जड ठूठ की समझ मे आना मुश्किल था कि यह मात्र वृक्षारोपण ही नहीं, उसके किसी पुरखे का इस घर मे पुनर्जन्म है ।



जसोदा

करणीदान बारहठ

उसका नाम तो जसोदा था किन्तु वह नाम तो उसी समय लुप्त हो गया था जब वह इस गाँव में बहू बन कर आई थी। तब उसका नाम हो गया था दयासुख की बीनणी। यह नाम भी अधिक दिनों तक नहीं टिक सका क्योंकि उसने एक पुत्र को जन्म दे दिया था- नाम था सुभाष। और उसे अड़ौस-पड़ौस के सभी सुभाष की माँ कहने लगे। उसके और बच्चे हुए- कुन्ता, रूम्मा प्रमोद अमर और उनके साथ ही नाम बदलते गए- कुंता की माँ, रूम्मा की माँ प्रमोद की माँ अमर की माँ। किन्तु यह नाम- बदलाव और आगे बढ़ा। उसके पोते-पोती हो गए और वह कहलाने लगी- चपला की दादी कृष्ण की दादी।

वह अपने ही घर में नीम के पेड़ की छाया में बैठी है। नीम इन दिनों पूरा हरा भरा हो गया है। कुछ दिन पहले इसमें पतझड़ आया था। सारे पत्ते एक-एक कर झड़ गए थे किन्तु यह तो पुनः फूट गया पल्लवित हो गया पुष्पित हो गया, अपनी मीठी सौरभ बिखेरने लगा- चारों ओर दूर-दूर तक।

जसोदा अपने शरीर को ध्यान से देखने लगी बहुत गौर से देखने लगी। उसके दोनों हाथों की सलवटों ने आ घेरा पैरों की भी [illegible] हो गई। वह वास्तव में बूढ़ी हो गई अब तो, सलवटें तो आयेंगी [illegible] पर मैं पतझड़ आ गया यह नाम की तरह पुनः हरा नहीं [illegible]

चख लिया, अब कोई स्वाद शेष नहीं रहा । कितनी दुनिया फैली है उसके माध्यम से, बेटे-बेटिया, पोते-पोतिया, दोहिते-दोहितिया और वह बेल और आगे फैल गई- पडपोते, पडपोतिया, पडदोहिते, पडदोहितिया । सभी अपने-अपने धन्धे मे अलमस्त । कौन याद करता है उसे और किसे फुरसत है याद करने को । और फिर किसको आवश्यकता है उसको । हा हा हा हा की हँसी पूरे सन्नाटे को तोड जाती है । फिर वह चारो ओर आँखे फाड कर देखती है, उसे पूरा दिखता भी नहीं है, क्या करना है उसे देखकर । फिर वह सुनने का प्रयास करती है, उसे सुनता भी नहीं है, फिर मन ही मन हँसती है-

जसोदा ने अपने घर म, अपने चूल्हे पर अपने आटे से दो बाजरे की रोटियाँ सेक ली थी । छाछ माग कर ले आई थी, अन्दर मिर्च और प्याज डाल लिये थे और खा-पीकर सो गई थी, और एक मीठी नींद ले ली थी । खाने क बाद तो एक बडी मोठी नींद आती है उसे । वह प्राय इसी नीम के नीचे सोती हे । उसी ने तो इसे लगाया था । इसने उसका तो बूढी कर दिया किन्तु स्वय जवान खडा था । अच्छा ही तो है, वरना वह कहाँ सोती ऐसा उसने सोचा ।

सबस बडा लडका ले गया था उसे अपने घर पर । वह तो डाक्टर है । कितनी मुश्किल से पढाया था उसने । उसका सोच और आगे सरका- डाक्टर की माँ, वह डाक्टर की बीनणो बडे अफसर की बेटी थी न बडी तेज तर्रार उसके मुह मे तो हरदम सूजन ही रहती थी । नोकर चाकर काम करन वाले मिल गए थे । वह अपनी सास के पास तो बेठती ही नहीं थी । और उसने उसे तो एक कोठरी म कैद कर दिया था । डाक्टर तो उसका बटा था पाला-पोसा, पढाया-लिखाया । वह तो कल आई थी । उसने उसके बट को मुट्ठी मे ले लिया । उसने कहा- बेटा कभी तो 'माँ' - 'माँ' किया कर, हरदम 'शीला' - 'शीला' करता थूकता है । मैं तेर लिए घी भेजती थी, पैसे भेजती थी । खूब कर्ज चढा लिया था मैने तेरे लिये । मैं यहाँ नही रहूँगी क्या नहीं है मरे पास ? मैं तेरी दासी तो नहीं, तरी माँ हूँ।

और वह वहाँ से चली आई । उससे छोटा बेटा मास्टर है इसी स्कूल म ।

- माँ, तू मरे पास आ जा । मैं तेरी सेवा करूँगा । और वह उस छोटे बेटे के पास आ गई ।

- माँ कुछ दिनो के बाद कहा उसने ।

- हाँ, बेटा ।

- तेरे पास धन है ?

- मे, पास धन है किसने कहा तझे ?

- मुझे सब मालूम है ।
- है तो है तूने दिया है रे ।
- माँ मुझ चाहिये ।
- क्या ?
- मैं अपना मकान पक्का बनाऊँगा
- अबे, परमादिया मैंने तुझ पढ़ाया-लिखाया शादी की । अब तू कमा रहा है मैं माग सकती हू तू नहीं माग सकता ।
- मैं तुझे खाना नहीं खिला रहा, माँ ?
- चल ब, खाना खिलाने वाले, खाना मैं खुद खा सकती हू, जब मैं सब कुछ दे दूगी तब तू मेरी काया बेचेगा रे, हरामजाद । यह लो औलाद ।

और जसोदा वहाँ स उठकर अपने इसी नीम क घर म आ गई । वह यहाँ आकर हँसन लगी- उस तीसरे छाकरे अमरिये क पास क्या रखा है व तो खसम-लुगाई पहले से ही भूख से माथा लगा रह ह ' यहीं ठीक हूँ ।

अब लोग कहने लग- दादी तू तो बहुत खोडली हो गई ।

- खाडली कैस हूँ र दादी के पोते ।
- तेरी किसी के साथ नहीं बनती । क्या कमी है तरे पास ?
- अरे मैं तो खुद कहती हूँ मेरे पास कोई कमी नही, मैं क्या किसी के तलवे चाटूँ । ये मर बटे हैं मैं उनकी दासी नहा । य तो सेवा कराना चाहते हैं सवा करना नहीं चाहते ।
- कैसे दादी ?
- अरे बट खुद ता अफसरनी बन कर खाट पर बेठी रहती है, नाकर-चाकरा से काम कराती ह । वे नोकर मरा कहना मान या न मान, मर हाथ-गोडे काम करते हैं मैं अपनी रोटी खुद बना लेता हूँ । मरी मनमर्जी का खाना बना लेती हूँ आर खा लेती हू अरे उन्ह तो सब्जी बनानी तक नहा आती । न उसम नमक होता ह न मिर्च । समझ ।
- तू इकलखोरडी हे तू खाट पकड लेगी तब ?
- अर मैं खाट पकडूगी नहीं, मरे लिय विमान आएगा सीधा भगवान से मैंने बुरा क्या किया है मरी जिन्दगानी का एक-एक आक भगवान की पोथी म लिखा है ।
- दादी यह तो छोड तर पास धन है ।
- हाँ ह तभी सब मरी गरज करत हैं ।
- लकिन तू सयाना नहीं है ।
- फालतू की बात ता तू कर मत मैं अब चाय बनाती हूँ चाय पीनी है बाल मुझ अक्ल देने वाले । चाय नहीं पीना ह ता भाग यहाँ स ।

इस तरह दादी से बात करना इन छोकरो के लिये मनोरजन का एक स्रोत था। वह पूर्ण रूप से बन्धन रहित और मुक्त थी। हाथ मे लाठी लेकर कहीं चल पडती, गप्प-शप्प करके अपने घरादे मे आती निर्लेप और निर्विकार।

एक दिन छोकरो ने फिर मजाक की- दादी, अपने गाँव मे पचायत के चुनाव हो रहे हैं और अपना वार्ड महिला वार्ड है। उसम महिला ही खडी हो सकती है। इसलिये हमने सोचा कि दादी को खडा कर दे।

– ओ हो, बहुत बढिया बात कही रे, पोते। मैं बिल्कुल तैयार हूँ। मेरा नाम लिखा जायेगा।

– सचमुच, क्या नाम है तेरा दादी ?

– जसोदा, जो आज तक किसी ने नहीं जाना। मैंने जब इस घर म प्रवेश किया, मेरा नाम लोप हो गया। मैं बहू कहलाई या फिर मेरे देवर ने मुझे भाभी कहा।

– ठीक कहा, दादी।

– फिर मैं माँ बनी, दादी बनी, नानी बनी किन्तु मैं जसोदा नहीं बनी।

– तू पडदादी तक बन गई दादी, अब तो तेरे पडपोते हो गये।

– अरे, मैं इन सब नामो से तग आ गई हूँ, परेशान हो गई हूँ मुझे इन नामा से नफरत हो रही है।

– यानी इन नामो से 'बोर' हो गई इनमे 'अलर्जी' हो गई, किसी पढे-लिखे लडके ने समर्थन किया।

– हाँ, कुछ भी समझो, मैं जसोदा बनना चाहती हूँ और इसका तरीका है चुनाव मे खडे होना।

छोकरो ने तो मजाक की थी, किन्तु दादी सचमुच खडी हो गई। उसकी जसोदा बनने की हविश ने उसे ऐसा करने के लिये प्रेरित किया।

वह वोट मागन लगी 'जसोदा को वोट दो।' 'जसोदा को वोट दो।'

बेटा, पोतो ने समझाया- माँ, दादी तू कर क्या कर रही है। तेरी अकल खराब हो गई।

उसका एक ही उत्तर था- 'तुम मुझे अकल नहीं दे सकते' अकल दने का काम मेरा है, तुम्हारा नहीं। मैं आदेश देने वाली हूँ, आदेश – मैं बडी हूँ।

जसोदा ने चार बैनर मगा लिये और उन पर अपना नाम लिखवा कर पूरे गाँव मे लटका दिये। उनम लिखा था- जसोदा को वोट दो। उसे लगा- अब वह जसोदा बन रही थी। वह बाकी सभी रिश्ता से मुक्त होना चाहती थी। मात्र जसोदा रहना चाहती थी।

वह अपनी लाठी लिये सभी मतदाताओ के पास घूम आती थी, वोट मागती थी- जसोदा को वोट दो ।

सभी मतदाता उसकी हाँ मे हाँ भरते थे । वोट दो या ना दो, किन्तु उसके सामने व ना नहीं करते थे । उसे विश्वास हो गया था कि वह जसोदा बन गई ।

उसे लगा- वह जसोदा बन रही थी, उसके हाथ की सलवटे अब दूर हो रही थी उसके चेहरे की झुर्रिया भी गायब होती जा रही थी ।

जसोदा नीम के पेड के नीचे बैठी नीम से कहने लगी- अब ओ नाम, तू क्यो इतराता है, तेरे नये पत्ते आए हैं और मेरे भी आ रहे हैं तू पुष्पित हुआ है तो मैं भी होने जा रही हूँ ।

उसने बहुत वर्षों स अपना चेहरा दर्पण मे नहीं देखा था । वह अपने घर मे गई ओर बहुत पुराना काच लेकर आई । वह अपनी जवानी उसी काच म देखकर गुजारी थी । उसा आज पुन वही काच दखा और उसे आश्चर्य हुआ कि इस जसोदा के सारे दाँत झड गए थे । आँखे भीतर से हँसी, उस हँसा म उस अकेला खडा दाँत हिलता नजर आया उसन काच को फेंक कर नाचे दे मारा, काच के टुकडे-टुकडे हो गए और वह जोर-जोर स हँसती-हँसती रोन लगी । उसने मन ही मन मे कहा- अब वह जसोदा नहीं बन सकती ।

वोट भी पड निणय भी हुआ किन्तु वह निर्णय सुनन को उत्सुक नहीं थी ।



एक और अहिल्या

कृष्णा कुमारी

अरे ! प्रीति तुम दिल्ली मे कब आई ? कुछ दिन पहले तो पता लगा था कि तुम मेरठ मे ब्याही गई हो, वहीं गृहस्थी को चला रही हो। तुमसे शिकवा ता है ही कि तुमने हमे शादी मे भी नहीं बुलाया। सच, इतने वर्षों बाद तुमसे मिलकर आँखो को विश्वास नहीं हो रहा है कि तुम वही प्रीति हो, कितनी बदल गई हो तुम। बहुत याद आते हैं। होस्टल के वे दिन, वह मौज मस्ती का आलम। कितने सुनहरे थे वो दिन भी।ओफ हो,मैं ही बोले जा रही हूँ, तुम हो कि कुछ नहीं कह रही हो। शिल्पी ने एक ही सास मे सब कह डाला।

"सच प्रीति, आज तुम्हे देखकर मुझे भी कॉलेज की लाइफ याद आ गई। तुम्हारी चचलता, अल्हडता आज भी कॉलेज जैसी ही बरकरार है। वन्दना और अर्पिता कभी मिली तुम्हे ? उनकी भी बहुत याद आती है। हम चारो की जोडी का वह आलम। उन दिनो कितनी खूब जमती थी हमारी जोडी।" शिल्पी ने उसकी आँखो मे आँखे डालते हुए कहा-

"देखो मेरा घर यहीं चाँदनी चौक मे है। पास ही, चलो ना, थोडी देर वहीं गप-शप करेगे।" प्रीति प्यार से आग्रह करने लगी। शिल्पी को भी तो ढरो बाते करनी थी अपनी चहेती सहेली से। दोनो रिक्शा करके प्रीति के घर पहुँच गई। प्रीति उसे तीसरी मजिल पर अपने बैड रूम मे ले गई।

"तुमसे बहुत कुछ कहना है, सुनना है, कुछ सुनाना है, कैसे हैं तेरे वो बता न तुझसे निभ तो रही है न?" चाय नमकीन मेज पर रखते हुए प्रीति ने अनुरोध किया।

"नहीं पहले तुम सुनाओ" शिल्पी ने चाय सिप करते हुए प्रीति को कुरेदा।

"पहले तुम, पहले तुम" मे कही गाडी न निकल जाए।" प्रीति खिलखिलाई। नहीं शिल्पी, प्लीज तुम्हीं शुरू करो, अपने उनके बारे मे जल्दी बताओ न? मेरे धैर्य की परीक्षा मत लो।

"समझ मे नहीं आता मैं कहाँ स प्रारम्भ करूँ। मैं तो अन्तहीन दुखान्त कहानी हूँ। एक ऐसी रोती-सिसकती शिला हूँ, जिस पर क्रूर काल के निर्मम थपेडे घाव पर घाव करते आए हैं। विसगतियों से टकराते-टकराते उदासी क साए मे जीते-जीते मैं जड एव निष्प्राण बन चुकी हू।" प्रीति की जिज्ञासा बढी वह बोली- पहेलिया मत बुझाओ शिल्पी। प्रीति उसके चेहरे पर समय के हस्ताक्षर पढने का प्रयास करने लगी। शिल्पी अतीत के घावो को कुरेदने लगी। सुनो प्रीति बी ए करने के उपरान्त होस्टल से तुम तो अपने घर चली गई और मैं अपने गाँव। दो महीने पश्चात् ही मेरा ब्याह कर दिया गया। मेरे पति प्रमोद बैंक मे प्रोबेशनरी अधिकारी थे। मुझ पर न्यौछावर थे। एक वर्ष बाद ही मेरी गोद मे एक नन्ही कली खिली। मैं फूली नहीं समाई। मेरी छोटी सी बगिया मधुऋतु सी महक रही थी। तभी एक दिन ऐसी बिजली गिरी कि सारा आशियाना पल भर म जल कर राख हो गया। अचानक ही एक दिन प्रमोद आग बबूला हो रहे थे।

"निकल जाओ इस घर से इस घर मे तुम्हारे लिये अब कोई जगह नहीं। तुम कुलटा हो, दुश्चरित्र हो। तुमने मुझे कहीं का नहीं छोडा। जिस पत्तल मे खाया उसी म छेद किया। मैं तो तुम्हे सती-सावित्री समझ रहा था और तुम मेरे ही मित्र के साथ रगरेलिया मनाती रही।"

"लेकिन प्रमोद! मेरा दोष क्या है? मैंने तो हमेशा की तरह सुधीर को औपचारिकतावश पानी पीन व बैठने को कहा था आपका अजीज मित्र है इसीलिय मुझे क्या मालूम था कि ? इतने दिनो से उसका हमारे घर आना-जाना है। बडा नक इन्सान है आप ही कहा करते थे। यह किसे ज्ञात था कि वह आस्तान का साँप निकलेगा। और मैंने अपने को बचाने का पूरा प्रयास किया चीखी चिल्लाइ, हाथ-पैर मारे परन्तु उसके सर पर शैतान सवार था। सच है वासना सुषुप्त इच्छाओ के प्रकटीकरण का परिणाम होती है, तब मनुष्य पशु से भी गिर जाता है। सारी नैतिकता रिश्ते, प्यार दोस्ती सब कुछ दाँव पर लगा देता है। मैं उस भेडिए से छली गई। यही नारी जाति की विडम्बना है। इस छल से अहिल्या भी नहीं बच पाई थी।" मैं गिडगिडाई दया की भीख माँगने लगी।

"मैं कुछ सुनना नहीं चाहता इसी वक्त मेरे घर से निकल जाओ।" प्रमोद का सारा विवेक क्रोध से नष्ट हो गया था।

"प्रमोद मैं तुम्हारे पाँव पडती हूँ" मैं पत्ते की तरह कापती-गिडगिडाती रही। "इतनी बडी दुनियाँ मे मैं कहाँ जाऊँगी, मैं नारी होकर कहाँ-कहाँ भटकती रहूँगी" मैं उनके हाथ जोडने लगी।

"जाओ चुल्लू भर पानी मे डूब मरो, यदि थोडी भी हया शेष रही हो तो।" प्रमोद आपे से बाहर होने लगे ।

"लेकिन इस समय तो मैं तुम्हारे बच्चे की माँ बनने वाली हूँ, कुछ तो भगवान के लिये रहम करो ।"

"क्या कहा मेरे बच्चे की माँ, झूठ बोलती है बेहया ।" कहते हुए उन्होंने हाथ उठाया ।

"खबरदार जो मेरी बेटी 'शैला' को हाथ लगाया तो, यह मेरे पास ही रहेगी ।" प्रमोद पर पाशविकता पूरी तरह हावी थी ।

"लेकिन मैं अपनी बच्ची के बिना नहीं जी सकूँगी । दे दो मेरी बच्ची मुझे ।"

इस तरह रोते, चीखते, चिल्लाते, दया की भीख माँगते मुझे घर छोडना पडा क्योकि और कोई चारा मेरे पास था ही क्या । मेरी शादी के बाद मेरे माता-पिता लम्बी यात्रा पर निकल चुके थे । मैंने अपने ममेरे भाई के पास शरण ली । लेकिन विपत्ति मे अपने भी बेगाने हो जाते हैं । ठोकरे खाते-खाते मेरी किस्मत ने मुझे नारी आश्रम मे ला डाला । कुछ ही दिनो बाद मैंने पुन एक कन्या-रत्न को जन्म दिया । सच पूछो तो मैं इसीलिये जीवित रही थी वरना मैं अपनी प्रताडित जिन्दगी कभी की खत्म कर चुकी होती । इस समाज से व अपने आप से मुझे बेहद नफरत हो चुकी थी । हाँ, आश्रम की अधीक्षिका बडी ही उदार थी, उसने मुझे बेटी की तरह प्यार दिया, वही मेरा आत्मबल एव सम्बल बना । कुछ दिनो बाद मुझे इनकम टैक्स के ऑफिस मे अधीक्षिका ने कार्य दिलवाया । अपने आप को व्यस्त रखने के बाद भी अतीत नश्तर की तरह दिल मे चुभा करता था । सच है जिसे भुलाना होता है वह ज्यादा ही याद आता है । शैला की याद मन को विदीर्ण करती । रात-रात भर मैं उसकी याद मे रोती रहती । ईश्वर किसी माँ को उसके कलेजे के टुकडे से जुदा न करे । बस, जिन्दगी के दिन कट रहे थे ।

एक दिन मैं ऑफिस मे फाइले देख रही थी, घडी चार बजा रही थी। मेरी जिन्दगी भी तो घडी के पैंडुलम की तरह ही बन चुकी थी । बॉस ने मुझे अपने केबिन मे बुलाया। बैठने को कहा । फिर बोले- "आज कार्य ज्यादा है थोडी देर ठहर जाना ।" मैं सहम रही थी अन्दर ही अन्दर, परन्तु इन्कार कैसे करती । मैं रुकी, सात बजे कार्य पूरा हुआ, सब लोग जा चुके थे । उन्होंने मुझे गाडी मे लिफ्ट देने का आग्रह किया, मैं पता नहीं क्यो इन्कार नहीं कर सकी । गाडी सीधी एक बगले के लॉन मे रुकी । मैं भय से काँपने लगी। मैंने कहा, आप मुझे कहाँ ले आए ? यह सब क्या है, प्लीज मुझे घर छोड आइए । वे मुस्कराते हुए बोले, चलते हैं भई, देखो कितनी सर्दी है, मेरा ही

घर है, कॉफी पीकर, बस चलते हैं । मैं ड्राइंग रूम म बैठी, वे अन्दर चले गए । घर मे किसी प्रकार की किसी के न होने की खबर वहाँ की खामोशी दे रही थी, मेरी आशका बलवती हान लगी । तभी बॉस (निर्मल) एक हाथ मे बोतल दूसर मे गिलास थाम आए । मैं एकदम खडी हो गई ।

-यह सब क्या है निर्मल बाबू, यह शराब की बोतल, गिलास ! मैं चीख कर बोली ।

"अरे डर गई, इसम पानी है भई अकेला हूँ, मटका कौन भर, कुछ बातले भर कर रख देता हूँ ।" पानी का गिलास मज पर रखत हुए उन्हाने कहा । मैं बैठ गई कुछ देर बाद कॉफी एव नमकीन लेकर आए । भय एव विश्वास के तानो-बानो मे उलझा मेरा मन न जाने क्या कहे जा रहा था ।

कॉफी पीते हुए उन्हाने पुन खामोशी तोडी- "डरो मत, मैं तुम्हारी परिस्थितियो से साक्षात्कार करना चाहता हूँ, इसलिये नहीं कि मैं तुम्हारी खूबसुरती का नाजायज फायदा उठाऊँ । मैं वासना का कीडा नहीं हूँ न मैं देवता बनने का दम भरता हूँ । तुम्हारा चेहरा अतीत की दर्दनाक कहानी कहता है । मुझसे डरो मत, अपना ही समझ कर कहो मैं तुम्हारी कुछ मदद कर सकूँ बस यही सोचकर मैं तुम्हे यहाँ लाया हूँ ।"

मरी साँस मे साँस आई । मैं अपना विकृत अतीत किसी को बताना नहीं चाहती थी, अत विनम्रता से देर होने का बहाना करके टाल गई । उन्हे गलत समझने की गलती से शर्मिन्दा होकर मैंने उनसे क्षमा याचना की । सच, वे एक उदार पुरुष थे, ऐसा मुझे कुछ-कुछ आभास होने लगा था । वे मुझे पुन गाडी म घर छोडने गए, मैंने गली मे ही गाडी रोकने को कहा, "मेरा घर बस करीब ही है" कहकर आभार प्रकटते हुए मैंने उनसे विदा ली । मैंने चैन की साँस ली मैं सत्य के प्रकट होने से डर रही थी ।

लोकल बस की तरह धक्के खाकर जिन्दगी चल रही थी कि एक दिन फिर निर्मल बाबू ने मुझे बुलाया ।

"शिल्पी, आज शाम को थोडी दर मेरे साथ चलोगी अपनी बहिन के लिये रक्षा बन्धन हेतु साडी खरीदनी है । तुम साथ चलोगी तो तुम नारी हो नारी की पसन्द नारी को आएगी ।" बैठने का इशारा करते हुए वे आग्रह करने लग ।

मैं चाह कर भी न जाने क्या इन्कार नहीं कर सकी । मैंने स्वीकृति मे सिर हिला दिया । शाम को कुछ शॉपिंग करक मुझे निर्मल बाबू एक पार्क म ले गये ।

थोडी देर यहीं बैठो बस अभी चलते हैं वे हरी-हरी दूब पर लेट गए ।

थोडी देर बाद उठकर मुझे कहने लगे-

"शिल्पी, तुम उस दिन टाल गई, लेकिन आज तो तुम्हे अपन अतीत की बखिया उधडनी ही होगी।" मैं इतना तो जान चुका हूँ कि तुम नारी आश्रम म रह रही हो। उस दिन तुम्हारा पीछा करके मैंने जान लिया था।
मैं अपराधी की भाँति चुपचाप सुनती रही। निर्मल बाबू पुन हृदय खोलने लगे। शिल्पी, तुम चुप रहो, तुम्हारी मरजी, लेकिन मैं कुछ कहना चाहता हूँ।"

मैं चौंक कर बोली- "क्या----?" सुनने के पहले ही मेरा तन-मन-भय स विदीर्ण होन लगा।

"सुनन से पहले ही डर गई।" वे गम्भीर स्वर म बाले।

"शिल्पी, मैं तुमसे प्यार करता हूँ, तुमसे शादी करना चाहता हूँ, तुम्हारे प्रति प्यार क अकुर कब मेरे मन म अकुरित हुए, यह तो मैं भी नहीं जानता, पर अब दिल नहीं मानता। तुम्हारे प्रति चाहत प्रतिपल लता की तरह बढती जा रही है। क्या बनोगी मेरी जीवन सगिनी?" बिना प्रस्तावना के निर्मल बाबू ने प्यार का इजहार कर दिया।

"शादी और मुझसे?----यह आप क्या कह रहे हैं, जबकि आप मेरे अतीत क बारे म कुछ भी नहीं जानते" रूथे स्वर मे बडी मुश्किल से शब्द बाहर निकल पाए। मेरा हृदय धक्-धक् धौंकनी की तरह चलने लगा।

"अब मैं जानना भी नहीं चाहता, केवल तुम्हारी स्वीकृति की प्रतीक्षा है" प्रश्न भरी दृष्टि से वे मुझे निहारने से लगे।

"नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता, निर्मल बाबू। यह भार का सपना है आँख खोलिय आप क्या कह रहे हैं? सुनिए- मेरा जीवन ऐसा प्रश्न चिह्न है जिसका उत्तर होगा केवल 'शून्य'। मैं तुम्हे कुछ नही दे सकूँगी। मैं ता विवशताओ, कुण्ठाओ के घात-प्रतिघात सहती हुई एक जड चट्टान बन गई हूँ जिस पर किसी भी बाहर का अनुकूल प्रभाव नहीं पडता। कवल जीवन का बोझ ढो रही हूँ।" और मैंने अपने अतीत की सारी परते खोल कर रख दी।

"क्या अब भी आप------?"

मेरी बात अधूरी सुनकर ही वे बोल पडे- "मैं अपने निश्चय पर अटल हूँ" अब तो पहले से ज्यादा प्यार करने लगा हूँ। कितना सौभाग्यशाली हूँ मैं, जीवन मे ऐसा ही अजूबा कुछ करना चाहता था, ईश्वर ने मेरी प्रार्थना सुन ली शिल्पी" वे प्यार भरी दृष्टि से मनुहार करने लगे।

"लोग क्या कहगे, आपकी इतनी प्रतिष्ठा, आदर-सम्मान सब---?"

"मुझे किसी की परवाह नहीं, मैं कोई पाप नहीं कर रहा हूँ। फिर एक नन्ही कली को पुन आहिल्या बनने से बचा पाया तो क्या यह पुण्य नहीं

है? अपनी पुत्री के बारे में तो सोचो, पिता के नाम के बिना उसका भविष्य , तुम्हारी पहाड सी जिन्दगी । मैं तुम पर न तो उपकार ही कर रहा हूँ, न ही सहानुभूति दर्शा रहा हूँ । मैं तहे दिल से तुम्हें प्यार करता हूँ, लेकिन तुम्हारी मरजी के बिना कुछ नहीं करूँगा। हाँ, रीति-रिवाज पालन हेतु सम्बन्धो का लेबल टाकना तो होगा । फिर भी तुम मेरे घर में जल मे कमलवत रह सकोगी, मैं तुम्हे वचन देता हूँ । मैं तुम्हारे मन के सौन्दर्य का पान करके ही सन्तुष्ट हो लूगा । पगली मन के रिश्ते तो आत्मा के होते हैं । कहते-कहते उनकी पलके नम हो आई ।''

''कहते है न दूध का जला छाछ को फूक-फूक कर पीता है, लेकिन इस फरिश्ते के आगे मेरी पुरुषो के प्रति सारी कडुवाहट क्षण भर मे हवा हो गइ । निर्मल बाबू की उदारता, उदात्त विचारधारा सहजता, त्याग, सहृदयता, बेपनाह प्यार के आगे मुझे हथियार डालने पडे। मेरे पाषाण हृदय से पुन सरसता की सुरसरि प्रवाहित हो उठी । आँचल से अश्रु पोछते हुए मैंने अपना हृदय निर्मल को समर्पित कर दिया । आश्रम की सारी औपचारिकताएँ पूरी करके ये मुझे अपने घर ले आए । ओर मंदिर मे मुझसे विवाह कर लिया । लेकिन इस फरिश्ते ने मुझे कभी शारीरिक आकर्षण की दृष्टि से नहीं चाहा । दिन पछी की तरह उडने लगे ओर इनकी उदारता, असीम त्याग, उदात्त भावनाओ ने मुझे अनायास ही सर्वस्व समर्पण को विवश कर दिया । लेकिन प्रीति आज मैं देवता स्वरूप पति पाकर बहुत खुश तो हूँ लेकिन फिर भी अतीत को भुलाना इतना सरल नहीं है । शैला की याद आज भी हृदय को विदीर्ण कर देती है । उसे देखने को मन मचल उठता है, काश ! मैं उसे जीवन मे पा सकूँ ! उसे देखने के लिये उस घर मे कदम रखना मेरे लिए । शायद यह पीडा तो मुझे जीवन भर भोगनी ही पडेगी । कुछ खोना, कुछ पाना ही जिन्दगी का दूसरा नाम है । खेर, मेरा यह भ्रम तो अब मिट गया कि सभी पुरुष निर्मम कठोर व अहकारी होते हैं, कुछ गौतम जैसे तो कुछ राम जैसे उदार पुरुष भी विद्यमान हैं । शिल्पी ने देखा कि प्रीति रुमाल से भीगी पलके पोछ रही है ।



सीरनी

जगदीश प्रसाद सैनी

फूला आज तडके ही उठ गया था। नींद तो उसकी और भी पहले खुल गई थी। तभी, जब आकाश म अभी तारे टिमटिमा ही रहे थे। पर तब तो उसकी माँ ही नहीं जगी थी, सा वापस लेट गया था। नींद फिर दुबारा नहीं आइ थी। करवटे बदलता हुआ वह सोच रहा था कि आज सवेरा क्यो नहीं हो रहा। आखिर जब माँ उठी, तो उसी के साथ वह भी उठ गया।

आज उसकी स्कूल का रिजल्ट निकलेगा।

फूला कुल ढाई बरस का था। और फत्तू पट मे ही था तभी उनका बाप भूरा मर गया था। बन्नेसिह के खेत मे कुआ खोदा जा रहा था। भूरा वहीं मजूरी करता था। एक दिन अचानक कुआ धँस गया और वह मिट्टी के नीचे दब कर अलोप हो गया था। रामली इस-उस के खेत पर काम करके फूला और फत्तू को पालती आ रही थी। फूला को उकार सेठ ले जा रहा था अपने ढाबे पर कप-प्लेट धोने। पचास रुपये महीना और रोटी कपडा दे रहा था। रामली तैयार नहीं हुई थी। वह उसे पढाना चाहती थी, दुख सुख पाकर जैसे भी बन पडे। पढ लिख जायेगा तो मिनख बन जायेगा। राज का नौकर हो जायगा। सीली छाया मे बैठा कुर्सी तोडेगा। मेह मे भीजना, न तावडे मे बलना। मजूरी करेगा तो बाप की तरह मर जायेगा कहीं दब-दबा कर। कहते-कहते रामली का गला भर आया था। और वह लूगडी के पल्ले से आसू पौंछने लगी थी।

इस तरह फूला स्कूल जाने लगा था और आज रिजल्ट निकलने के साथ ही वह तीसरी किलास से चौथी मे पहुँच जायेगा। फिर वह गत्ते मे सभाल कर आले मे रखी तीसरी की किताबे झाबर को बेच कर सावरा से चौथी की किताबे आधे मोल मे ले आयेगा। उसने इन दोनो को पहले से ही पाबन्द कर रखा था। पावला-धेलो फालतू लगेगा तो और दे देगे, माँ ने कह दिया था।

उसके साथ चलने की जिद कर रहा था। ले जाये तो छोरे मजाक उडायेगे-

"उघाडा रे उघाडा!"

"कौन है रे यह ? "

"फूला का भाई। "

सब हँसेगे। बोलो किसकी आबरू जायेगी। उसी की ना। अब वह कोई ऐसा-वैसा थोडे ही रह गया है? चौथी किलास मे जाने वाला है।

उसने फत्तू को समझाया कि वहा जाने से कोई फायदा नहीं है। सीरनी तो यहीं बाँटी जायेगी। वहाँ से तो सिर्फ लानी है। बालाजी के भोग लगाये बगैर कैसे बँटेगी भला?

पर फत्तू तो कहाँ मानने वाला था ? आखिर फूला स्कूल क छोरो के समक्ष अपनी इज्जत का ख्याल करते हुये फत्तू को अपने वे कपडे देने को तैयार हो गया जा वह परसाल नानेरा से बनवा कर लाया था। और जिन्हे उसने शादी-ब्याह, मेले-खेले और बार-तिवार के मौकों पर पहनने के लिए सुरक्षित रख छोडा था। शर्त यह थी कि फत्तू नहायेगा। वह स्कूल मे कोई "कुचमाद" नहीं करेगा, और बालाजी के भोग लगने से पहले सीरनी के पतासे खाने के लिए "रामाण " नहीं करेगा। फत्तू को सारी शर्ते मजूर थीं। माँ को विश्वास नहीं था कि वह पतासे लेने के लिए तग नहीं करेगा सो दस पैसे का सिक्का देकर फूला को समझा दिया कि इसकी मीठी गोलियाँ दिला देने पर फत्तू ज्यादा हठ नहीं करेगा। पर वह खुद मुँह जूठा न करे, नहीं तो बालाजी परसाद आया नहीं करेगा।

फूला ने अपना खाकी थैला उठाया। उसमे आज किताब-कापियाँ कुछ भी नहीं थीं। वापस लौटते समय राधेश्याम की दुकान से सवा पाँच रुपये के पतासे इसी में रख कर लायेगा। कल इसे भी साबुन लगाकर अच्छी तरह धो लिया था। सूगले थैले मे परसाद रख कर ले आया तो बालाजी परसाद आया नहीं करेगा।

रामली ने फत्तू के लिए रात की बासी रोटी और एक कान्दा बान्ध दिया। खबर है। भूख लग आयेगी। जाने कब लौटना हो। फूला ने पोटली थैले मे नहीं रखने दी। रोटी का कोई भोरा सीरनी मे मिल गया तो? बालाजी परसाद आया नहीं करेगा।

फत्तू के साथ फूला स्कूल पहुँचा। स्कूल का मुख्य दरवाजा बद था। बाहर खेलते लडकों ने बताया कि अन्दर "रैजल्ट " अभी तैयार हो रहा है। अधिकाश लडके स्कूल के सामने वाले बड के नीचे बने गट्टे पर गिद्धो की तरह बैठे थे। कुछ बड की जटाओ से झूल रहे थे, तो कुछ यो ही एक-दूसरे पर मिट्टी उछालते हुये हुडदग मचा रहे थे। फूला फत्तू को लेकर सब

पास होने की चिन्ता नहीं थी फूला को । पढाई म तेज था वह, सो पास तो हो ही जायेगा । फस्ट डिवीजन भी आ जायेगा । किलास मे कौन सा स्थान रहता है बस यही जानने को आतुर था । पिछले साल दूसरा स्थान रह गया था । पहला स्थान लाने के लिए अब की बार परीक्षा के दिनो मे चिमनी के चानणे मे रात को भी पढाई की थी उसने । पहले स्थान पर आ जायेगा तो वह अपनी किलास का फस्ट मनीटर बन जायेगा । बालाजी महाराज उसकी साध पूरी करेगा इसका पक्का भरोसा था उसे ।

इसीलिए रैजल्ट देखने क बाद सबसे पहले वह बालाजी की सारनी बाँटेगा-पूरे सवा पाँच रूपये की । माँ से तीन दिन पहले ही बात पक्की कर ली थी। किसी मे मजूरी के पैसे बकाया हो तो ले आना । बाद म ऐन मौके पर कहगी की कहा नहीं । सवा रूपये से काम नहीं चलेगा । मामला चौथी किलास म जाने का है । आगा-पीछा भी नहीं होगा । हाथ की हाथ बाँटनी पडेगी सीरनी ।

वह फटाफट नहा धा कर टच हो गया । लोटे को मिट्टी से रगड-रगड कर तीन बार माजा । फिर उसने जल ले जाकर बालाजी को असनान कराया । अपने माथे पर सिन्दूर की टीकी लगाई । हाथ जोडकर अरदास की "बजरग बाबा, मुझे पहले अस्थान पर कर देना । आते ही सवा पाँच रूपये का परसाद चढाऊगा ।"

घर आकर उसने गुदडी के नीचे तह करक दबाई हुई "डरेस" निकाली । कल इसे खूब मल-मल कर धाया था । सूखने पर लोटे म अगार डाल कर "परेस" की थी । परेस खराब न हो जाये और अच्छी तरह जम जाये इसक लिए रात को ही सात समय उसे अपनी गुदडी के नीचे दबा कर रखा था । डरेस पहन कर तैयार हुआ तो रामली ने लूगडी क पल्ले से तुडा-मुडा पाँच का नोट और एक चव्वनी खोलकर उसे थमा दिये ।

तब तक फतू भी जाग गया था । सीरनी की चर्चा सुन कर वह फूला के साथ चलने के लिए मचलने लगा । माँ कह रही थी, -छुट्टिया क बाद उसे भी भरती कराना है । वह उसे स्कूल के कानून-कायदे समझाता हुआ अपने साथ ले जायेगा । नाम मराने के लिए दस रुपये वाला फारम लेकर गुरूजी क पास जमा करायेगा। गुरूजी पूछगे की "गारजन" कहा है? -तो वह खुद को सगर्व प्रस्तुत करेगा-यह मेरा छोटा भाई है । मैं ही इसका गारजन हूँ । आखिर चौथी किलास मे पढता हूँ । गारजन के कौन से हाथी-घोडे लटका करते हैं? मुझसे करा लो जो कुछ भी कराना है ।

पर इस वक्त वह फतू को साथ नहीं ले जाना चाहता था क्योकि उसक पास पहनने का कपडे नहीं थे । जिस नग-धडग स्थिति मे वह था उसी म

उसके साथ चलने की जिद कर रहा था । ले जाये तो छोरे मजाक उडायेगे-

"उघाडा रे उघाडा!"

"कौन है रे यह ? "

"फूला का भाई । "

सब हँसेगे । बोलो किसकी आबरू जायेगी । उसी की ना । अब वह कोई ऐसा-वैसा थोडे ही रह गया है? चौथी किलास मे जाने वाला है ।

उसने फत्तू को समझाया कि वहा जाने से कोई फायदा नहीं है । सीरनी तो यहीं बाँटी जायेगी । वहाँ से तो सिर्फ लानी है । बालाजी के भोग लगाये बगैर कैसे बँटेगी भला?

पर फत्तू तो कहाँ मानने वाला था ? आखिर फूला स्कूल के छोरो के समक्ष अपनी इज्जत का ख्याल करते हुये फत्तू को अपने वे कपडे देने को तैयार हो गया जो वह परसाल नानेरा से बनवा कर लाया था । और जिन्हे उसने शादी-ब्याह, मेले-खेले और बार-तिवार के मौकों पर पहनने के लिए सुरक्षित रख छोडा था। शर्त यह थी कि फत्तू नहायेगा । वह स्कूल मे कोई "कुचमाद" नहीं करेगा, और बालाजी के भोग लगने से पहले सीरनी के पतासे खाने के लिए "रामाण " नहीं करेगा । फत्तू को सारी शर्तें मजूर थीं । माँ को विश्वास नहीं था कि वह पतासे लेने के लिए तग नहीं करेगा सो दस पैसे का सिक्का देकर फूला को समझा दिया कि इसको मीठी गोलियाँ दिला देने पर फत्तू ज्यादा हठ नहीं करेगा । पर वह खुद मुँह जूठा न करे, नहीं तो बालाजी परसाद आया नहीं करेगा ।

फूला ने अपना खाकी थैला उठाया । उसमे आज किताब-कापियाँ कुछ भी नहीं थीं । वापस लौटते समय राधेश्याम की दुकान से सवा पाँच रुपये के पतासे इसी में रख कर लायेगा । कल इसे भी साबुन लगाकर अच्छी तरह धो लिया था । सूगले थैले मे परसाद रख कर ले आया तो बालाजी परसाद आया नहीं करेगा ।

रामली ने फत्तू के लिए रात की बासी रोटी और एक कान्दा बान्ध दिया । टाबर है । भूख लग आयेगी । जाने कब लौटना हो । फूला ने पोटली थैले मे नहीं रखने दी । रोटी का कोई भोरा सीरनी मे मिल गया तो? बालाजी परसाद आया नहीं करेगा ।

फत्तू के साथ फूला स्कूल पहुँचा । स्कूल का मुख्य दरवाजा बद था । बाहर खेलते लडकों ने बताया कि अन्दर "रैजल्ट " अभी तैयार हो रहा है । अधिकाश लडके स्कूल के सामने वाले बड के नीचे बने गट्टे पर गिद्धों की तरह बैठे थे । कुछ बड की जटाओ से झूल रहे थे, तो कुछ यो ही एक-दूसरे पर मिट्टी उछालते हुये हुडदग मचा रहे थे । फूला फत्तू को लेकर सब

से अलग एक चौरस पत्थर पर चुपचाप बैठ गया । खेल-कूद मे शामिल होकर वह अपने आपको सुगला नहीं करेगा । उसे बालाजी को परसाद जो चढाना है ।

स्कूल के मुख्य दरवाजे को थोडा सा खोलकर भैरूरामजो मास्टरजी ने गर्दन बाहर निकाली । लडके इधर टूट पडे । फतू को वहीं बैठा रहने को कहकर फूला भी भागा । क्षण भर मे स्कूल का दरवाजा मक्खियो का छत्ता हो गया ।

" ऐ ऽऽ । भागो यहा से । अभी रिजल्ट तैयार नहीं हुआ है । " भैरूरामजी जोर से चिल्लाये । लडके निराश हाकर वापस लौटने लगे । मास्टरजी ने अपेक्षाकृत नजदीक वाले एक लडक को सम्बोधित करके कहा " जा रे राधेश्याम की दुकान से टेलीफान बीडी का एक बण्डल ले आ मेरे नाम स । "

" मैं लाऊ गुरूजी । "

"गुरूजी मैं । "

आठ-दस लडके एक साथ गुरू-सेवा के लिए तैयार, आतुर हो उठे । ,

"कोई एक ले आओ । "

मास्टरजी का कहना था कि दस-बारह लडके तीर की तरह उड चले । वे सोच रहे थे कि जो लायेगा उसका पास होना तो निश्चित है । नहीं तो इस कर्म मे अपनी भागीदारी तो दर्ज करा ही दग ।

फूला इस असमजस मे था कि जाये या नहीं तभी मास्टरजी ने पुकारा- "फूलाराम, तुम इधर आओ । "

वापस लौटते हुये कुछ लडक भी रुक गये । मास्टरजी ने उन्हे डपटा- " तुम क्यो खडे हा? जाओ यहा से जूत मारूँगा --- भागो ऽऽ।"

लडके एसे भागे कि गट्टे से पहले नहीं रुके ।

फूला मास्टरजी के नजदीक पहुँचा । मास्टरजी ने इधर-उधर अपेक्षाकृत धीमी आवाज मे पूछा- "बीरबल मीणा का घर जानते हो ? "

"जानता हूँ ।" फूला ने सोत्साह हामी भरी ।

" उससे मेरा नाम लेकर कहना कि मास्टरजो ने हाथ वाली सीरनी मगाई है । "

हाथ वाली, सीरनी? फूला कुछ समझा नहीं । उसके असमजस को ताडते हुए मास्टरजी ने कहा, "वह अपने आप दे देगा । तू तो जैसा मैने कहा, कह देना बस । काहे म लायेगा ? "

फूला निरुत्तर ।

"अपने इस थैले मे ले आना । "

फूला चलने लगा ।

"सुनो ।"

वह रुका ।

"पीछे ऑफिस वाली खिडकी से दे जाना, चुपचाप होकर ।"

बीरबल अपने घर के बाहर वाले छपरे मे खाट पर बैठा जेवडी मेल रहा था । फूला ने मास्टरजी का सदेश सुनाया । वह चुपचाप उठकर अन्दर चला गया । लौटा तो उसके हाथ मे एक बोतल थी । उसे फूला की ओर बढाते हुए बोला- "ले ।"

फूला ने बोतल नहीं पकडी ।

"बोतल नहीं सीरनी मगाई है, हाथ वाली सीरनी ।"

बीरबल ने अपनी लाल-लाल आँखो से क्षण भर फूला को घूरा । फिर किचित ऊँची आवाज मे बोला "ज्यादा कानून मत छाट। मुझे पता है हथकढ दारू मगाई है । यही सीरनी चढती है भैरूजी को ।

दारू? फूला उछल कर दो कदम पीछे सरका जैसे बोतल मे कोई जहरीला साँप हो । दारू मे तो मूत होता है । पडोस का पिरबू काका पीकर आता है । रात भर गालिया बकता रहता है । एक दिन खेजडी के नीचे काँटो मे पडा था । "मूत पीकर आया है, बापकणा" माँ ने बुरा सा मुँह बनाकर कहा था । थू-थू---- वह मूत को हाथ कैसे लगाये । नहा-धोकर बालाजी को स्नान करा कर आया है । कैसे रखे उस थैले मे जिसमे बालाजी के भोग लगाने के लिए परसाद लेकर जायेगा । बालाजी नाराज होकर ऐर का कैर नहीं कर देगे । नहीं वह नहीं लेकर जायेगा दारू । चाहे कुछ भी हो ।

" नहीं, मैं दारू नहीं ले जाऊँगा । मास्टरजी ने सीरनी मगाई है ।" कहता हुआ वह वहा से भाग लिया । लौटते हुए उसके दिमाग मे उथल-पुथल मची हुयी थी । मास्टरजी नाराज होगे तो ? नाराज क्यो होगे ? कह दूँगा बीरबल सीरनी नहीं दारू दे रहा था मैं नहीं लाया । पर वे दुबारा भेज देगे । जा वही ले आ । तब ? ऐसा करू, मास्टरजी से मिलू ही नहीं । रैजल्ट तो बाहर बोर्ड पर चिपकेगा । देख कर पार हो जाऊँगा । कल से डेढ महीने की छुट्टिया हैं । बात आई-गई हो जायगी । बाद मे पूछेगे तो कह दूँगा कि बीरबल घर पर मिला ही नहीं था । पर मास्टरजी ने दारू क्यो मगाई है । क्या वे भी पीते हैं दारू? थू-थू--।

मीणो के मोहल्ले स निकल कर फूला बावडी के पास मुख्य रास्ते पर आया तो राधेश्याम की दुकान से बीडी लेकर आने वाले लडकों का दल उसे मिल गया । एक बडा लडका मुट्ठी म बण्डल दबाये थोडा आगे दौड रहा था, और शेष पसीना-पसीना हुये उसका पीछा कर रहे थे मानो वह किसी की जेब

काट कर भाग रहा हो । सबसे पीछे दौड रहे एक लडके को फूला ने आवाज दी- ''गोबिन्दा ओ गोबिन्दा । डट, मैं भी चलूं ।''

गोबिन्दा ठहर गया । फूला नजदीक आया ।

''एक बात कहूँ, किसी स न कह तो ।''

''नहीं कहूँगा । कह ।''

''भैरूरामजी दारू पीते हैं ।''

''खा विद्या की ।'' गोबिन्दा की आँखे फैल गयीं ।

''विद्या की । मेरे से मगवा '' गोबिन्दा को जैसे कोई टॉनिक मिल गया हो । वह दुगने जाश म भर कर दौडा और जल्दी ही बीडी-बण्डल वाले दल म जा मिला ।

काफा देर से अकला बैठा फत्तू रुआसा हो आया था । फूला दिखा तो उसके जी मे जी आया ।

'' ल आया सीरनी ? मेरी गाली कहाँ है ? ''

'' सबर रख । अभी तो रैजल्ट तैयार हो रहा है । ''

धूप बढती जा रही थी । बड की छाया धीरे-धीरे सिमट रही थी । लडके हु दग मचा कर थक हार लिए थे । अब वे गट्टे पर चुपचाप बैठे थे । जिनके र आस-पास थे व खाना खाने चले गये थे । रैजल्ट अभी तैयार नहीं हुआ था फूला साच रहा था कि कोन सा सीरा-पूडी बन रहा है जो तैयार नहीं हुआ है । कागद का एक पानडा लाकर बाहर वाले बोरड पर चिपकाना ही तो है ।

फत्तू को प्यास लग आई थी । पानी की टकी स्कूल के अन्दर थी जहाँ किसी को घुसने नहीं दिया जा रहा था । फूला खुद ही वहा जाना नहीं चाहता था । वह फत्तू को कुछ दूरी पर नीमडी क नीचे चावली माई की प्याऊ पर ले गया था । पानी पीकर फत्तू ने नातणे मे बधी रोटी खाने की इच्छा जाहिर की । भूख तो फूला का भी लग आई थी । पर वह बालाजी को भोग लगाए बगैर कैसे कुछ खा सकता था ?

''तू यहीं छाया म बैठा-बैठा रोटी खा ले । खा ले तो पानी पीकर आ जाना । मैं गट्टे पर मिलूगा । हाक् ? ''

फत्तू ने गर्दन हिलाकर हामी भरी ।

रोटी खाकर फत्तू लौटा तो गट्टे पर कोई नहीं था तमाम लडके जा चुके थे । स्कूल सुनसान हो गया था । फत्तू घबराया । फूला को ढूढने के लिए वह गट्टे क चक्कर लगाने लगा । गट्टे पर चढने के लिए रखे हुये पत्थर पर बैठा फूला उसे दिख गया । वह अपना सिर दोनों घुटना के बीच दबाये हुये था । फत्तू नजदीक गया ।

"भाया उठ सीरनी लेने चल ।"

सुन कर फूला ने गर्दन उठाई । उसका चेहरा आँसुओ से तरबतर था । माथे पर लगाई हुई सिन्दूर की टीकी आँसुओ से भीगकर व घुटनो पर रगडी जाकर उसके नाक, गाल और होठा के पास फैल गई थी । फतू को देखकर वह फफक-फफक कर रोने लगा ।

वह फेल हो गया था ।

उसे रोता देखकर फतू भी रो पडा ।



मैं नहीं गई बापू

भगवती लाल शर्मा

आज वह रोई !-केवल आँसू ही नहीं बहाये केवल हिचकिया ही नहीं खाई बल्कि शक्ल भी बिगाड ली । वह घर रोई । घर से बस स्टेण्ड आ गइ बस मे सवार होने के लिए उसक फाटक तक आ गई फिर भी उसकी रुलाई रुकी नहीं । फर्क इतना पडा कि आँखे उसकी भरी हुई टकी की टोटिया बनी पानी बहा रही थीं । अब टकी का पानी पेदे पर आ जाने से केवल रिस रही थी । इतना तो वह शादी के मण्डप से निकल कर विदा होते समय भी पिता से लिपटकर नहीं रोई थी । और उसके बाद तो पचासो बार वह उनसे विदा हुई थी । उसका कभी केवल मन भर आता था कभी केवल आँख भर आती थीं । लेकिन चेहरे या मन पर विदाई की रेखा का एक भी बिन्दु नहीं उभरता था । हसते-हसते आओ, हसते-हसते जाओ, यही पिता का आदर्श वाक्य था । चाहे इस लोक स परलोक म चाहे उस घर से पर घर मे ।

बाद म तो वह जान गई कि यह पिता का आदर्श नहीं था बल्कि उसके प्रति अपने कोरे हृदय और फीके व्यवहार को छिपाने का षडयन्त्र था ।

उस दिन पिता उसका सम्बन्ध तय कर आये थे । माँ की तसल्ली नहीं हुई थी सो वह उनसे चुपके-चुपके लडका देखने चली गई थी और लौटकर बोली थी-मैं सुखी का लेकर कुए म डूब मरूगी, वहा किसी हालत म परणाने नहीं दूगी । तुम बाप हो कि दुश्मण । तुमने देखा क्या-लडके का बाप है, माँ नहीं, ढग का रहणा खाणा-पीणा नहीं । रूप रग नहीं । केवल शरीर के उस ढाचे को जिसे लडका कहते हैं, उसे तुम मेरी फूलवा को दे रहे हो ।

लेकिन पिता अड गया बिगडा घाडा बन गये-" बात जाती है आदमी की । तू कैसी लुगाई है लोग की सगी नहीं । तू पागडी बाधले, मे घाघरा पहन लू । "

और उसको शादी वहीं हो गई । शादी को बाद शुरू-शुरू तो वह वार-त्यौहार पीहर जाती । उनके सामने जा खडी होती । वे उखडी मुस्कान चेहरे पर पोतते -आई भाया । वाह ! अच्छा किया । पाँच-दस दिन तो रहेगी न ?

'नहीं', वह यथास्थिति बयान कर देती । 'कल या परसो ।'

और उसके बाद वह जब तक वहा रहती कोई खास बात न हो पाती । मुँह उनका फूला हुआ रहता, कहता कि तू अनावश्यक है यहा । हालाकि वह सप्ताह दस दिन के लिये आती पर पाँच दिन के बाद ही यह सब देख कर लौटने को इच्छा होन लगती । विदाई के समय चरण छूती । वे कहते- अच्छा । बस । जाना हो रहा है जा । तेरे तो बस तेरा घर ही सब हुआ । अब इतना जल्दी मैं तर लिये कपड वगैरह भी नहीं ला सकता । खैर, अब के जरूर लाऊँगा । इस बार का भी ओर उस बार का भी । अच्छी रेशमी धोती लाऊँगा । बार बार के रद्दी कपडा से एक बार का बढिया कपडा अच्छा । अब कब आयेगी तू ? और तेरे कमी भी क्या है ? पटवारी साब की बीवी है तू । गाँव का ताजा घी, ताजा दूध, सब्जिया तुझे खाने को मिलती है । इस पर पैसा भी जैसे बरसात की तरह ऊपर से बरसता है । और इसीलिये मैं तुझे कुछ दे नहीं पाता हूँ । मेरा देना तेरी समझ म तो आयेगा नहीं । अच्छा जा, बस आने वाली है ।

बस एसे ही शब्द उसे सुनने को मिलते । ससुराल मे पूछते- "यह अपनी सुधा रानी क्या लाई पीयर से?" मौका लगने पर तो वह अपनी पेटी से निकालकर बता देती कि यह मिला पर जब नहीं मिलता तो कह देती- "खडे-खडे जाकर आई हूँ, ऐसे मे वे कहा से लाते ?"

"अर जहाँ स भी लाते, कुछ तो लाते । नगद ही दे-देते, यहाँ से खरीद लते ।" ननद कहती- "लखपति-करोडपति ससुराल भी, गरीब से गरीब पीहर हो चाहे, आशा तो करता ही है वहाँ के फटे कपडे भी सोने के तार होते हैं ।"

बाद मे उसन पिता को मुँह खोलकर कहा भी- "इस बार नहीं मानूगी कुछ लेकर जाऊँगी ही । आपके हाथ से देना पडेगा ।"

निकलते समय वे उसे पचास रुपये दते- "मन पसन्द कपडा ले लेना ।"

उन रुपयो म सौ उसने रखे तब तारीफ योग्य धोती आई । तब ननद ने और उन्होने भी तारीफ की थी पर पटवारी पति की आखे ताड गई थीं कि इसम थाडा कमाल उसका भी है ।

वह जैसे समझाती -फालतू रीत है । लेन-देन मे रखा क्या है ? असली चीज तो प्रेम है । और प्रेम शब्द पर ऐसी जबान अटकती कि खुलती ही नहीं । वह समझाती खुद का- न, प्रेम तो है । वह महसूस नहीं कर पा रही है । उसने उनक प्रम का हिसाब उनके देने की कीमत से लगा रखा है । आखिर पिता हैं व ।

उनकी विवशता भी है । नौकरी थी, छोड दी । गुलामी कौन करे। खेती करेंगे । आजादी ही आजादी और अपने पेट पालने के साथ औरो का भी पालने का पुण्य का पुण्य भी । तीन साल मे जोश ठण्डा । हलवाई का शागिर्द बन कर हलवाई बन गये पर यह धन्धा भी कभी तेज कभी मन्दा । और उसम भी दो-चार लोग जेब मे खिसकाते हुए पकडे गये और बन गय चोर । साख खत्म, धन्धा खत्म । ऐसे मे उनकी शादी हुई और ऐसे म ही जिन्दगी यहाँ तक आई ।

भाई बडे हुए कमाने लगे । पर कितना ? रोटी मिलन लगी, बस । और खर्चा ता रहता ही है । बीस हजार का हिसाब तो उसक विवाह का ही बन गया । आदमी काम नहीं करता पर पेट यह थोडे ही देखता है । उसे चलाने के लिये बन्दूक की गोली कर्तव्यबोध का नुस्खा या दया की गगा का आश्रय लेना पडता है । आश्रय ही तो सबसे बडी गुलामी है और उस पर तुरा यह कि हम गुलामी नहीं करेगे ।

हर बार की तरह इस बार भी वह राखी पर जा न सकी । उलाहना आया भारी-"तू तो भई बडे घर की बहू हो गई है । हमे भूल गई है ।" उन्ह शायद मालूम नहीं बेटी कितनी ही धनी हो जाए माता-पिता और पीहर के बिना वह निर्धन हो रहती है ।

दशहरे की छुट्टियो मे वह आई । साथ मे महान उधमी उसकी अंतिम बाला और प्रथम पुत्र कृष्णानन्द था । और चार बच्चे यहा मिल गये । घर म कभी कबड्डी कभी पकडा-पकडी, कभी रस्सा-कस्सी, मुक्का बाजी और कभी फ्री-स्टाइल होने लगती । ऊपर का सामान आगन मे, आगन का सामान बाहर, बाहर का सामान भीतर आने लगा । यह सब उसे भी अच्छा नहीं लगता । पिताजी तो कुट कुट करते ही रहते । गुस्से मे वह उनकी असली नकली पिटाई भी कर देती । पिताजी थोडे खुश होते-हाँ यह ठीक है देखो घर उसका भी है फिर भी । वह बच्चा को हथकडी और साथ मे बेडिया और उन्ह कमरे म बन्द करने से तो रही । बच्चो को लाकर ठीक नहीं किया उसने । मूड बनाकर आई थी कि पन्द्रह दिन रहेगी पर अब इनके कारण चलना पडेगा । खाने क पहले उसने कल चले जाने की सूचना दे दी । इस बार भैया का थोडा रज हुआ- अब के सचमुच जीजी मन नहीं भरा । असुविधाए तो बहुत सी हैं मगर एक दूजे का मुँह देखने का सुख भी कम नहीं है ।

भैया मन की भाषा बोल रहा था । उसे अच्छा लगा । बोली- "फिर आऊँगी कह रही हूँ ।"

अच्छा कल जीमन है जीमकर परसो चली जाना । कल बाजार चलग तेरे लिए अच्छा सा वेश लायेगे ।

ये सारी बाते पिताजी कान लगाकर सुन रहे थे । बीच म ही तुनक पडे -जाने दो । समझते नहीं हो । रोक रहे हो । जीमन के पीछे । जीमन तो रोज होते हैं ।

शब्दो की सूई उसके सीने मे गढ गई । पिताजी के लिये इतनी पराई हो गई । जिगर का टुकडा कहते थे और कागज का रद्दी टुकडा भी नहीं समझा ।

चीख निकली-निकली जा रही थी पर चेहरे को हसाते रहना पडा । वह आज ही नहीं बल्कि दस वाली बस से चली जायेगी । और उसने तैयार कर लिये बच्चे । भाई रखो खाना । खाना इसलिये मागना पडा कि कोई यह न समझे, इसे तीर लगा है । खाना उससे खाया नहीं गया । खाना खा रही है साथ वह टेप भी चल रही है । मन रो रहा है , कुछ उतर रहा है कुछ मुँह का मुँह म फिर रहा है । बच्चो ने जब हाथ खींच लिया वह भी हाथ खींच कर उठ गई । बस मे बैठी और घर आ गई । नहीं कहा पति से कि पिता ने ऐसा कहा है । नहीं कहा किसी से भी । पीहर के बारे मे कुछ कहने का मतलब है खुद की जाँघ उगाडो और खुद ही लाजे मरो ।

फिर नहीं गई वो । हिसाब लगाकर देखा छह साल हो गय । बार बार वहा से बुलावा भी आया और उसने बार बार बहाना बनाया भैंस मेरे बिना दूध नहीं देती, बच्चे मेरे बिना नहीं पढते चोर बहुत आ रहे हैं वगैरह । पर मन खट्टा न हो किसी का, पता न चले किसी को, मन फट गया है उसका इसलिये पत्र का सिलसिला उसने जारी रखा ।

पहले तो पत्र आया- पिताजी बीमार हैं सुधा । एक बार आकर मुँह देख जा । दो दिन बाद आदमी भी आ गया, ज्यादा बीमार हैं । कितने ही विचार आये, कितने ही पछतावे हुये , कुछ हो गया उनको दर्शन भी न हुए उनक बैठकर रोयेगी पूरे जीवन । कह भी नहीं पायेगी क्यो रो रही है और आसू भी नहीं पाछ पायेगा कोई । उनका कसूर नहीं है ।

वह गई । जाने पर मालूम हुआ-जिस दिन कवर साहब आये थे, हलुआ बना था । पिताजी ने पीयूष को बुलाया, फुसलाया और चुपके से हलुआ मगाकर खा लिया । बहुत दिनो म मिला था शायद । बना तो बहुत बार होगा पर चौके से इनकी थाली तक आया न होगा सो मगाते रहे, खाते रहे । सुबह इन्होने कपडे और पूरा बिस्तर खराब कर दिया । फर्श और दीवार भी । सफाई कर सुलाया और फिर कपडे खराब कर दिये । तत्काल ऑटो बुलवाया । शहर के बडे अस्पताल ले गये । डॉक्टरो को रुपया चराया, दवाइयाँ, बोतले लगी तब कहीं स्थिति नियन्त्रित हुई । आज ही अस्पताल से छुट्टी हुई । अब उनको थोडा सन्तोष है । हमने तो आशा छोड ही दी थी और आगे की तैयारी भी कर ली ी इसीलिये तो तुमको बुलाया था । तुम्हारे भाग्य स बच गये ।

घर भी इलाज चल रहा था । हालत सुधरने लगी । पाँच दिन वह वहा रही । इन पाँच दिनो म एक पल के लिय भी वह पिता से अलग नहीं हुई । पिता का इशारा हो उसक पहले ही वह उनकी सेवा मे तैयार ।

इच्छा तो नहीं थी जाने की पर दिन-दिन सुधरती हालत देखकर उसने कहा-आज मैं जाऊँ ? वहा भी कौन है अभी सब सम्भालने वाला । उनके हाथ पावो म भी इन दिना दर्द रहने लगा है । उनको भी मेथी खिलानी है ।

सबने सुना पर किसी ने नहीं कहा-अच्छा जा । एक दिन और रही और आज जाने को तैयार हुई । रोटी खाई मगर भायी नहीं, शरीर को दण्ड देने के लिये कुछ निगला । भीतर न जान क्या गोले के गोले बन उमडकर गल म फसे जा रह थे । आशीर्वाद कहो या पाव छूना कहो, के लिये पिता के पास आइ-मैं जा रही हूँ बापू । और आगे ऐसा बाध टूटा और वह ऐसी बही कि पता नहीं लगा । पिता ने हाथ ऊपर उठाया । वह पावो पर झुकी । दोना पावो पर बैठी मक्खियाँ भुर्र से उडी । कुछ दिन पहले मच्छर काट गये थे और उन्हाने खुजा लिया था । फोडे हो गये थे, पक गये थे और मवाद रिस रहा था । उसने सुबह गरम पानी से धोकर ट्यूब लगायी थी । फिर भी हालत यह थी । उसने उनके चरणो पर माथा रखा । आसुओ का सैलाब तेज से तेज हा रहा था, बाध जो टूट गया था ।

"बस का समय हो रहा है बाईजी" आवाज उसके कानो म आ रही है पर भीतर उमड रहे पानी की आवाज मे मन तक नहीं पहुँच पा रही है ।

आसू कुछ थमे । आँखो मे कुछ रोशनी आई । वह उठी । पिता की गर्दन हिली और मुँह से एक-एक कर शब्द निकला- "जा रही है । जा वापस, जल्दी ही बुलवाऊँगा ।"

और बाँध की मरम्मत करके पीछे मुडी ही थी कि बाध फिर टूट गया और ऐसा टूटा कि मरम्मत मे हाथ बटाने वाली भोजाइयाँ भी बह गई ।

जैसे तैसे वह बस स्टेण्ड आई । बस आकर रुक गई । उसे पहुँचाने आई भोजाइयो को उसने कोई सौ बार कहे गये शब्द फिर कहे- "सेवा करना । सवा करना हो । सवा करने का ओर आशीर्वाद लेने का टाइम है यह । "

बस घर्राई । भोजाइयो ने बारी बारी उसके पाव छुए । उसने उनक माथे पर हाथ रखा । बस म चढते समय फिर वही शब्द- "आशीर्वाद लेना हो ।" बस चल पडी । पहल होले और फिर तेजी से । सडक के मोड से जब बस घूम गई, भोजाइयाँ घर की ओर मुड गईं ।

लकिन वह जा न सकी । बस रुकवाई उतरी और पिता के सामने आ खडी हुई । पायतान बैठकर उनके पाव सहलाने लगी । "मैं नहीं गई बापू ।

क्या करूँगी वहा जाकर ? सब तो हैं वहा । " वह कह जा रही थी-"औ
नहीं हैं तो सारा ठेका मैंने तो नहीं ले रखा है । मैं बहुत खुश हूँ आज । '
और उसने हल्के से अपना सिर पिता के सीने पर रख दिया ।

उसने देखा नहीं वरना देखती-पिता के मुर्झाये चेहरे पर चटक-चटक
फूल चटके है और उन पर टपक-टपक मोती टपके हैं ।



अहसास

ओमदत्त जोशी

देखोजी, सोच समझ करके खरचा किया करो अब वह जमाना नहीं रहा जो महीने के महीने नोटा की गड्डियाँ आती थीं। थोडी सी पशन की रपल्ली से महीने भर का खरचा चलाती हूँ जो मेरा जी जानता है। आप तो पैसे फेक कर काम स निपट जात हो जैस।

माँ एक ही सास मे मुँह बिगाड, बाऊजी को लताडते हुए कह गयी। आँखो के लाल डोरे स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। माँ ओसारे के पास बैठी चीनी के प्याले मे आलू कतरने लगी। चौक मे लगे नीम के पेड पर इसी समय कव्वे की काँव-काँव करने की आवाज पूरे चौक मे गूज उठती है। मुझे अनुभव हुआ मानो वह भी अपने पति को बेरोजगार होने पर डाँट रही है। बाऊजी, सुनी-अनसुनी कर बीडी का अन्तिम कश गुस्से म जोर से खींचते हैं जिससे उन्हे खाँसी आयी और खाँसते-खाँसते लाल-पीले हो मुड्डे से उठे और बाहर गली मे मन्दिर की चबूतरी पर आ बैठे, जहाँ मोहल्ले के पाँच-दस व्यक्तियो का विश्राम स्थल है।

मुझे बैठे-बैठे बाऊजी के बारे मे विचार आने लगे-बाऊजी सरकारी नौकरी मे अनेक कठिनाइयो से घुसे, बचपन मे ही अनाथ हो गये थे अनिश्चित जीवन, दर-दर की ठोकरे। असहाय, साधनहीन जीवन ही मिला विरासत मे। लेकिन कठिन परिश्रम, अध्यव्यवसायी, शिक्षा के प्रति रुझान, कडे सघर्ष ने उन्हे जीवनयापन योग्य बना दिया। सोम और प्रकाश दो ही पुत्र हैं। खाने-पीने मे सभी साधन उपलब्ध कराते थे। कपडा भी सलीके का पहनाते थ आखिर सरकारी नौकरी जो करते थे। अच्छा खाने-पीने के बाद जो बचता सो बचाते नहीं तो नहीं। घर गृहस्थी के कार्य कभी रुके नहीं। बाऊजी को चाय की दिन मे दो तीन बार तलब हो जाती, चाय के बाद "बाज" छाप बीडी के धुए से कमरे को भर देते थे, बीडी के बाद कलकत्ती तम्बाकू मे चूना मिला हथेली

मे मसल कर नीचे के होंठ एव दाँतो के बीच रख लेते और थोडी-थोडी देर मे पिचर-पिचर थूका करते पीकदान मे । फिर केवेण्डर सिगरट का कश खींचते तबीयत से । यदि दिल ने गवाह नहीं दी तो आधी ही फेक दो । अब अन्तिम नशा शेष रहा वह है पान । पान मगाते समय यह कहते नहीं भूलते कि- "देख जरा किमाम डलवाना और पीपरमेन्ट तेज, समझे । मेरा नाम ले लेना ।"

बाऊजी का हाथ प्राराम्भ से ही खुला रहा है । पैसो को बहा देगे पानी की तरह । आवश्यक हो या अनावश्यक । भावुक व्यक्ति जो ठहरे । कभी स्वय के तो कभी माँ के तो कभी पोते-पोतियो की वस्तुओ को उधार ही खरीद लेते । अपने दोनों पुत्रो की इच्छाओ का दमन कभी नहीं किया । उन्होने अपने पडौसियो से वे अपना खान-पान, रहन-सहन का स्तर सदा ऊँचा ही रखते ।

अब बाऊजी की पेन्शन हो गई, दैनिक जीवन के व्यय मे कमी कैसे हो ? प्रात काल उठ कर वे स्वय चूल्हे के पास बैठ कर पूरे परिवार की चाय बनायगे तभी उन्हे सन्तुष्टि प्राप्त होगी । यद्यपि चाय बनाने वाली घर मे दो-दो बहुये हैं, माँ है पर वे किसी को बाध्य नहीं करते । चाय, स्टोव होते हुए भी चूल्ह पर बनानी पडती है क्योकि माँ, जबसे मिट्टी के तेल का राशन हुआ है कम खच करने दती है ।

प्रकाश को बाऊजी का चाय बनाना अखरता है वह कभी-कभी व्यग्य भरी मुस्कान म कह भी देता है- "बाऊजी तो बस सुबह होते ही चूल्हे के पास बैठ जात हैं । पता नहीं इनको चाय की इतनी फिकर क्यो है ?"

बाऊजी उसे टाल देते हैं मैं भी मन ही मन मुस्करा जाता हूँ । बाऊजी की चाय का स्वाद अपना अलग सा ही है । दूध कम चाय और शक्कर तेज । मैं तो उस भगवान का प्रसाद मान कर पी लेता हूँ इससे बाऊजी की आत्मा को सन्तोष मिलता है । लेकिन प्रकाश कम सवेदनशील है वह उसमे नुक्ता-चीनी निकाल ही देता है, बाऊजी के मन मस्तिष्क म इसका प्रभाव पडता है लेकिन उसे प्रदर्शित साधारण ढग से मात्र यह कहकर करते हैं- "लो भाई ! तुम्हारे जँचे तो और बना लो, यह दूध और शक्कर और चाय पडी है । " कहते हुए चूल्हे के पास से उठ जाते हैं ।

बाऊजी के शरीर के शौक पर व्यय अब पुत्रो को अखरने लगा । वे मोके-बेमौके इसके लिए बाऊजी को शिकायत करते हैं । पत्नी व पुत्रो के निरन्तर मितव्ययता के प्रवचनो से तग आकर पान खाना छोड दिया । बाऊजी अब अपने आप म सिमटने लगे । बाऊजी मोदक प्रिय रहे हैं प्रारम्भ से ही लेकिन अब उन्हे इसके लिए तरसना पडता है । उनके इस प्रस्ताव पर माँ का भवानी रूप सामने आता है- "इनके खाने से तग आ गई मे तो ? बुढापे मे भी खाना नहीं छूटा इनका । जब ही बेटे बहुओ के ताने सुना करते हैं । ऐसा क्या खाने

का शौक है ? मुझे तो नहीं आती कभी खाने की ? सारी उमर ही हो गयी खाते-खाते तो भी शौक पूरे नहीं हुए इनके ? जब देखा तब खाऊँ-खाऊँ क सिवा और कोई बात ही नहीं ?''

बाऊजी निराश हो हार मान, बात तिल का ताड न बन जाए इससे टलते हुए कहते हैं- ''अच्छा भाई । तेरी इच्छा नहीं है तो रहने दे, मैं क्या अकेला थोडे ही खाऊँगा ? घर मे बनेगा तो सब ही खायगे । बस नाम मेरा होता है ।''

लेकिन एक बार मुझे याद है बाऊजी ने प्रकाश और मुझ पर भरोसा रखते हुए साहस पूर्वक अपनी बात मे वजन देत हुए इसी प्रकार के व्यवहार का प्रतिकार किया था-''क्यो नहीं बनेगा मोदक? दो-दो बेट कमा रहे हैं किस बात की कमी है मेरे ? अब नहीं खायेगे तो फिर कब खायेगे ? भगवान ने इच्छाओ की तृप्ति के लिए ही तो ऐसा सौभाग्य दिया है । दोनों बेट आज्ञाकारी हैं । है क्या गाव मे कोई ऐसा घर ? तू तो सारी उमर यो ही करती रहेगी ।'' कहते कहते अपनी बात को पुष्ट करने के लिए बाऊजी ने मेरे को और प्रकाश की ओर आशाभरी दृष्टि से निहारा लेकिन हमने किसी प्रकार का कोई भाव प्रदर्शित नहीं किया ।

बाऊजी बोल तो जाते हैं एक ही सास मे सब कुछ, अपने आज्ञाकारी पुत्रो की ओट मे, लेकिन पुत्रो की ओर से किसी प्रकार की सहमति नहीं मिलने पर उनके मन मे अर्न्तद्वद्व मच जाता है जैसे उनके शरीर मे विद्युत का सा झटका लगा हो । बाऊजी अपने पलग पर लेटे शून्य की ओर देखते हैं । अतीत एव वर्तमान की मिली-जुली एक चलचित्र की सी रील मन्द गति से जलने लगती है उनकी बूढी आँखो के सामने । उन्ह अहसास होता है कि ये सब नाते रिश्ते केवल मात्र औपचारिकता है, दुनिया स्वार्थी है । बेटो को देख लो जिन्ह अच्छा खिलाया-पिलाया, पढाया-लिखाया । कमा खाने याग्य बनाया । उनकी जबान से यह भी नहीं निकल सका कि- मोदक खाये तो खाये हमारे पिताजी, रोज खाये । क्या कमी है हमारे इस खाते-पीते घर म ? मैंने खूब कमाया उम्र भर लेकिन ये क्यो कहेगे ? इनको इतनी तनख्वाह मिलती है । क्या ये सब मुझे देते हैं ? मैं तो नहीं पूछता इन्हे एक-एक पैसे का हिसाब ? ये तो बस कमाने क्या लगे हैं मेरे एक-एक पैसे का हिसाब रखते हैं । मैं महीने के महीन रुपयो की गड्डिया लाता था । तब कैसा था इनका व्यवहार । और अब जब मेरी पेन्शन हो गई है तो कितना परिवर्तन हो गया है इनम ? यह तो भगवान की कृपा और मेरे परिश्रम से सरकारी नौकरी मुझे मिल गई थी । इससे ही पेन्शन मिलती है और यदि पेन्शन नहीं मिलती तो आज मुझे दाने-दाने के लिए मोहताज होना पडता । मैं वही इनका परमादरणीय पिता हूँ और ये मेरे वही आज्ञाकारी पुत्र

हैं, क्यों हुआ इतना बदलाव ? क्या हो गया है इनको ? क्या देखते हैं मेरे कार्य को शका की दृष्टि से ? कितना रखते हैं अब ये मेरा मान-सम्मान ? मर म तो कोइ परिवर्तन नहीं हुआ ? मेरा इनके प्रति वात्सल्य- जब ये बालक थ तब भी यही था जो आज है। उत्तरोत्तर मेरे मन मे तो इनके प्रति श्रद्धा, वात्सल्य एव सहानुभूति की जड और गहरी होती जा रही हैं, जबकि मेरे प्रति इनकी ठीक विपरीत स्थिति हो गई है ? ऐसा क्यो हुआ ? क्या म भार बना हुआ हूँ इन पर ? क्या मेरी समस्त इच्छाओ का दमन कर लूँ क्योकि मैं अब केवल एक पन्शनर हूँ ? सोचते-सोचते बाऊजी को गहरी नींद आ गई ।



जीने की राह

उषा किरण जैन

शिशुपाल पिछले पाँच रोज से काम पर नहीं आ रहा था। दूसरे मजदूरा से जानकारी मिली कि उसकी औरत को फिर दौरा आ गया था। इस प्रकार महीने मे कम से कम दस दिन निकल जाते थे। शिशुपाल को काम पर न आने स मजदूरी भी कम मिल पाती ' इसी से उसके घर की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। मन मे कई प्रकार के भाव उठ रहे थे। निर्णय लिया कि मुझे शिशुपाल के घर जाकर स्वय देखना चाहिए आखिर वास्तविक स्थिति क्या है ?

उसके घर पहुँची तो पता चला शिशुपाल कहीं गया हुआ है, अभी लौट आएगा। मैं लौटने का थी कि उसकी पत्नी ने जबरदस्ती बैठा लिया। टूटी झोंपडी मे खाट बिछी हुई थी। उस पर एक फटा हुआ गुदडा बिछा था। एक ओर चूल्हा जल रहा था। उसकी माँ रोटी बना रही थी। धुआ पूरी झापडी मे अपना अधिकार जमाए हुए थे। दूसरी ओर पानी की खुली मटकी रखी हुई थी तथा लोहे का टूटा हुआ बक्सा था। जिस पर बिस्तर नाम की चीज म दा तीन गूदडे बतरतीब से रखे हुये थे। एक-एक सकेण्ड भारी हो रहा था फिर भी जिस उद्दश्य को लेकर गइ थी उसकी क्रियान्विति तो नहीं हो पाई थी। मुझे चक्कर से आने लग थे। फिर भी वहा अपने मनोभावो को दबाकर बैठी थी। बाहर से चार-पाँच बच्चे-बच्ची उत्सुकतावश घूर-घूर कर दखे जा रहे थे। बाहर एक काने म गाय अपने बछडे सहित रभा रही थी। उनके गोबर का ढेर भी वहीं एक ओर लगा हुआ था। ये लोग कैसे जी पाते हैं ? हे राम।

मेर सामने शिशुपाल के चित्र उभरने लग। वो दस बारह वर्ष का रहा होगा। मरे मकान का काम चल रहा था। कन्हैया कारीगर के साथ आया था। मैंने कन्हैया से कहा था-"यह इतना छोटा सा क्या काम करेगा ? कन्हैया तुम भी तुम ही हो कहाँ से पकड लाते हो ? तुम्हे और कोई मजदूर नहीं मिला

क्या ?" कन्हैया ने प्रत्युत्तर मे कहा था-"सेठानीजी, आप इसका काम देख लेना । छोरा बहुत काम का है, गरीब है, मेहनती है और ईमानदार भी है ।'

मैंने कहा था-"भई वो तो ठीक है । पर फिर भी बडे आदमी की बराबरी थोड ही कर सकता है । इतने पर भी कारीगर ने कहा था- "सेठानीजी अभी अपने चिप्स का काम चल रहा है जो कि भारी काम नहीं है । यह काम ये अच्छी तरह से कर लेगा । " मैंने कहा था-"तुम्हारी जैसी मरजी । "

पर मैं देख रही थी छोटा सा लडका फुर्ती से मसाला मिलाकर कारीगर को देता था तथा कारीगर के काम करने को बारीक नजर से देखता था । मेरा अविश्वास विश्वास मे बदलने लगा था । अब तो मैं घर का छोटा मोटा काम उसको बताती तो वो बिना किसी झुंझलाहट के कर देता था । उसकी मेहनत और लगन ने मेरे मन को जीत लिया था ।

एक दिन मैंने उससे पूछा था-"शिशुपाल तुम इतने छोटे से ही मजदूरी क्यो करने लग गये ? अभी तो तुम्हारी उमर पढने की है । उसने निगाह नीचे किए ही उत्तर दिया था-"सेठानीजी, मेरा बाप बीमार रहता है और मेरा भाई लुगाई लेकर अलग हो गया । खेती की थोडी सी जमीन है उस पर माँ वो और उसकी लुगाई काम करते हैं । थोडा बहुत फसल पर अनाज हमको दे देते हैं । पर बाकी जरूरतें भी तो हैं । मेरे पीछे दो भाई और दो बहिन और हैं । एक बहिन सासरे चली गई । वो कभी-कभी साल मे आती है तो उसे भी कपडा-लत्ता देना पडता है। बाप के इलाज के लिए पैसे नहीं हैं । हम अपनी रोटी का जुगाड भी पूरी तरह नहीं कर पाते तो उसका इलाज कहाँ से कराएगे । कभी-कभी मा गुस्सा आने पर बकती है और कहती है-"तेरे बाप ने मुझे सुख ही क्या दिया है ? सिवाय ये औलादे देने के । इनका पेट और भरो । मेरा जापे मे भी दस दिन चैन से नहीं रहने देता था । मारता-पीटता भी बहुत था । अब हाथ पैर मे ही दम नहीं तो मेरा क्या करेगा ? एक ठोर पडा है, पडा रहने दो ।" मा फिर भी दोनों टेम बाप को रोटी प्याज देती है । और मेरा बाप चुपचाप पडा खा लेता है । अब तो वो मा की तरफ कभी-कभी देखता है तो उसकी आँखे छलछला जाती हैं । सेठानीजी मेरा तो वहा दम घुटता है । इसलिए मैं क्या करूँ ? पढने के लिए पैसे और टेम दोनों चाहिए और दोनों मेरे पास है नहीं । हमारे तो पेट के ही लाले पड रहे हैं । मैं जो कुछ कमाता हूँ अपनी मा को ले जाकर दे देता हूँ ताकि उसे ऊपर का छोटा-मोटा हाथ खर्च चलाने के लिए किसी के आगे हाथ न पसारने पडे ।" कहते-कहते बालक का गला भर आया था । वो अपने आपको आगे बोलने मे असमर्थ महसूस कर रहा था ।

उसकी करुण कहानी सुनकर मेरा मन दया से भर आया । मैंने मन ही मन प्रभु से प्रार्थना की प्रभु तेरी यह कैसी विडम्बना है? इतने छोटे से बालक मे इतनी प्रखर बुद्धि और उसकी तू भी कैसी परीक्षा ले रहा है ? मैंने अपने को सम्भाल कर संयत किया । कुछ सोचकर मैंने कहा- "शिशुपाल बेटा, तेरी पढने मे इच्छा हो तो मैं तुम्हे पढा दिया करूँ । तुम मजदूरी करने के बाद कुछ देर तक रुक कर चले जाया करो ।"

इतना सुनते ही मैंने महसूस किया कि उसकी आँखो मे आशा की किरण जाग रही है । उसने पलक झपकते मुझे कहा था- "सेठानीजी आपका मेरे ऊपर ये अहसान मैं जन्म भर नहीं भूलूगा । इतना कहकर वो मेरे पाव पकड कर रोने लगा था ।

मैंने पाव छुडाते हुए कहा था- "बेटा मैं भी तो एक माँ ही हूँ । ये कोई मैं तेरे ऊपर अहसान थोडे ही कर रही हूँ । तू भी तो मेरे कई काम करता है । समाज मे एक दूसरे से काम चलता है । कोई भी व्यक्ति अकेला अपनी पूर्ति नहीं कर सकता ।"

फिर तो दिन, महीने, वर्ष बीतने लगे थे । शिशुपाल की कडी मेहनत रंग लाने लगी थी । मैं अपनी तरफ से उसे किताबे फीस के पैसे तथा पुराने उतरे हुए कपडे दे देती थी । शिशुपाल मेरे घर का सदस्य हो गया था । उसका एक दिन भी न आना मुझे खलता था । मैं सोचने लगती वो आज किस कारण से रुक गया है । देखते-देखते ही उसने स्वयपाठी रहकर आठवीं कक्षा पास कर ली थी ।

शिशुपाल के मा बाप को थोडी-थोडी तो भनक थी पर इतना नहीं था कि उनका बेटा पढ कर परीक्षा भी पास कर रहा है । क्योकि मजदूरी के जो पैसे मिलते उनको वो जाकर अपनी मा को ही देता था । फिर काम से देर से लौटने पर गाव मे कोई ज्यादा पूछताछ भी नहीं करता ।

एक दिन बातों ही बातो मे मैंने पूछा था-"तुम्हारी शादी हो गई क्या?" तो उसने सिर नीचा कर लिया था । शिशुपाल अब पूरा जवान लगने लगा था । उसका रहन-सहन थोडा बदलने लगा था । छोटी उम्र मे ही बात बडे सलीके से करता जैसे कोई बडा आदमी कर रहा है । और फिर मजदूर से कारीगर जो हो गया था । सब ओर उसकी माग थी । पर वो एक काम पूरा हो जाता तो ही दूसरा काम हाथ मे लेता था । विश्वास, मेहनत और लगन से दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि हो रही थी पर साथ ही खर्चों की भी कोई कमी नहीं थी । जैसे ही सिर उठाने की थोडी सी कोशिश करता आगे से आगे गृहस्थी के कई खर्चे रहते । अपने आप पर तो वो कुछ भी खर्च नहीं करता था ।

बहू का गौना हुआ तो मेरे घर उसे पाव छुआने को लेकर आया था । बहू भी क्या थी ? गाँव की अल्हड जवान चाँद सी चकली । पर थी अनपढ । अनपढ होते हुए भी घर के काम मे निपुण थी ।

शिशुपाल का बाप चल बसा था । बाप के चले जाने के बाद घर की सारी जिम्मेदारियाँ ही उस पर पड गइ थी । उसी दौरान मे उसकी बहू को भी लाना पडा था ताकि मा के काम मे हाथ बटा सके ।

शिशुपाल का मेरे यहाँ आना धीरे-धीरे कम होने लगा था । अब प्रतिदिन नहीं आ पाता था । कई बार तो हफ्ते महीने बीत जाते थे । फिर भी मैं उसके लिए इधर-उधर से पूछकर समाचार जान लेती थी । उसका न आना मुझे खलता था ।

जब भी आता मै उसे समझाती ''देख बेटा पढाई मत छोड । इतनी महनत की है तो थोडी सी महनत और कर । दो वर्ष की बात है । सैकेण्डरी पास करने पर कोई सरकारी नौकरी मिल जाएगी । तेरा भविष्य सवर जाएगा ।'' पर वो कुछ न कुछ पारिवारिक परिस्थितियाँ बताकर छुटकारा पाने की कोशिश करता ।

एक दिन मैने उसे विवश कर दिया था- ''आखिर तू पढना क्यो नहीं चाहता ?'' तो वो बिलख-बिलख कर रोने लगा था । रोते रोते ही कहा था- ''सेठानीजी मैं बाप बनने वाला हूँ ।'' कहकर चुप हो गया था ।

मैं सोच भी नहीं सकती थी कि इतनी छोटी उम्र मे शिशुपाल बाप बन जाएगा । इसी तरह वो एक के बाद एक करके चार बेटियो का बाप बन गया था । उसकी मा हर बार कहती- ''बहू अब की बार तो बेटा देना ।'' पर आशा निराशा मे बदल जाती ।

शिशुपाल पर चार-चार बेटियो का बोझ सिर पर था वो रात दिन मजदूरी करके भी घर का खर्च पूरा नहीं कर पाता था । ''लडकियाँ पराया धन होती हैं ।'' मा यदा-कदा कहती रहती । ''ये तो अपनी ससुराल चली जाएगी । हमे इन पर पैसा खर्च करने की क्या जरूरत है जो इनको पढाए-लिखाए । शिशुपाल तो इनका पेट भरता-भरता आधा रह गया है । भगवान अब की बार तो मेरे शिशुपाल को घर का चिराग दे देना ।''

और उस चिराग की आशा मे घर मे सताने बढती जा रही थीं । साथ ही साथ घर मे अभावो का अधेरा बढता ही जा रहा था । मैंने देखा अभावो की काली छाया से पीडित उसकी पत्नी का बुझा-बुझा सा चेहरा जिसमे जीने की तो चाह ही मौजूद नहीं थी । पता चला शिशुपाल उसी की दवा के लिए कहीं से पैसे का जुगाड करने गया है ।

मुझे लगा इसे दवा की नहीं बल्कि इसमें जान की चाह पैदा करने की जरूरत है । जरूरत है जीने का सही रास्ता बताने की । मुझे लगा इसकी जिन्दगी की नाव डूबने को हो है । मैंने समझाया-"देख पानी की नाव तभी तक डूबने से बची रहती है जब उसमें बोझ अधिक न हो । एक भी सवारी अधिक होने से नाव ही डूब जाती है साथ ही उसमें बैठी सवारियों का भी जीवन समाप्त हो जाता है । इसी तरह तुम्हारी गृहस्थी की नाव भी पूरी भर चुकी है । अब इसमें यदि और अधिक बोझ बढ़ा और संतान हुई तो यह भी डूबने लगेगी और तब " मुझे कुछ कहने की अधिक जरूरत नहीं पड़ी । मेरी बात शिशुपाल की पत्नी की समझ में अच्छी तरह आ चुकी थी ।

उसने मुझसे वादा किया- "अब गृहस्थी की नाव में और अधिक बोझ नहीं बढ़ने देगी ।"

शिशुपाल अभी तक लौटा नहीं था । मैं चलने को उठ खड़ी हुई । मुझे लगा भले ही मैं शिशुपाल से मिल नहीं सकी थी पर मेरा यहाँ आना सार्थक हो गया था ।



उजाले और भी

शकुन्तला सोनी

कनिका ने जब मन की बात अपने पति कौशल को बताई तो वह अवाक रह गया। कनी तुम क्या कर रही हो ? तुम्हे क्या हो गया है ? तुम पागल तो नहीं हो गई हो, लोग क्या कहेंगे ? समाज मे हमारी क्या इज्जत रह जाएगी, कौशल ने प्रश्नो की झड़ी लगा दी लेकिन कनी भी चुप नहीं रही, बोलती रही हाँ कौशल मैं जो कुछ कह रही हूँ पूरे होशोहवास मे कह रही हूँ। पागल तो अब तक थी, और हाँ तुम्हे मेरी बात का समर्थन करना होगा कौशल तुम किस समाज व कौन से लोगो की बात कर रहे हो उसी की जिसने हम यह त्रासदी दी कौशल के पास इन प्रश्नो का कोई जवाब नहीं था। वह सोचने पर मजबूर हो गया, कनी ठीक ही तो कह रही है। फिर कुछ सोचते हुए बोला- पर कनी रुचि क्या चाहती है उससे भी तो पूछ लो। इसकी आप चिन्ता न कर मेरी उससे बात हो चुकी है। केवल तुम हाँ कह दो प्लीज। कौशल मना मत करना इसी म हमारी व हमारी बेटी की भलाई है। कुछ देर चुप रहने के बाद कौशल बोला- कनी मुझे तुम्हारे निर्णय पर पूरा भरोसा है तुम जो भी करोगी सोच समझकर ही करोगी, गलती तो अभी तक मैंने की थी।

कौशल की स्वीकृति ने उसम नया उत्साह भर दिया खुशी से आख छलक आयी मानो तपती रेत पर ठण्डी फुहारें गिरने लगी हो, आज वह अपने को काफी हल्का महसूस कर रही थी। वरना उसे तो हँसे भी महीनो बीत गये थे। उसे ही क्या सभी तो एक-दूसरे से कतराते रहते और अन्दर ही अन्दर घुटते जैसे-तैसे दिन निकाल रहे थे। पुरानी यादो ने कनि को अपने घेरे म समेट लिया और वह उन्हीं मे डूबने लगी।

वे कितने खुश थे जब रूचि का प्री मेडीकल टेस्ट म चयन हो गया था उनका एक सपना साकार होने जा रहा था। अपनी लाडली को डाक्टर के

रूप मे देखने का घर मे कुछ कमी नहीं थी कनि स्वय भी नौकरी करती थी । दोनो की कमाई से अच्छा काम चल रहा था ता उन्होने सोचा कोई अच्छा सा लडका देखकर रिश्ता तय कर दिया जाये ताकि कोर्स पूरा होने पर विवाह कर देगे ।

अपनी लाडली बेटी की शादी को लेकर दोना पति-पत्नी म अतिरिक्त उत्साह था उसके रिश्ते की चर्चा के दौरान उन्हे कुछ व्यग बाण भी सुनने का मिल' अरे ! तुम्हारी लडकी तो डाक्टरनी है तुम क्यो उसके रिश्ते की चिन्ता करत हो वह तो अपने लिये स्वय ही लडका तलाश लेगी तुम्हारी पसद को थोड ही महत्व देगी दिन-रात इतन लडका के बीच रहती है क्या पता कोई प्रेम का चक्कर ही चल रहा हा ऐसी बातो ने उन्ह आहत कर दिया शका ने सिर उठाया हा सकता है एसा कुछ घट जाए वैस पारिवारिक सुसस्कारा म पली सादगी की प्रतिमूर्ति उसन कभा कुछ नहीं किया जिसकी वजह स उस पर शका की जाये । माता-पिता उसकी ओर से पूर्ण आश्वस्त थे कि उनकी बटी काई भी गलत कदम नहीं उठाएगी । फिर भी कनि ने एक बार मौका दख कर अपनी बटी रूचि से थाह लेन क लिये पूछ लिया तुम्हारी नजर म कोई लडका तो नहीं है हो तो बता दे हम कोई एतराज नहीं होगा उसक पूछते ही रूचि मुस्करा दी वाह ! मम्मी क्या अब ये काम भी मुझ ही करना हागा । फिर आप और डेडी किस लिय हैं । ना बाबा मैं इन सब म पडने 'वाली नही इसे तो आप ही सम्भाले । मुझस ज्यादा तो आप मरा भला साचगे ।

रूचि के उत्तर ने दोना को कितना सुखद अहसास करवाया दाना को अपनी लाडली बेटी पर गर्व होने लगा । कुछ लडक देखन के बाद एक सुन्दर स्मार्ट लडके का रिश्ता आया जो कि डॉक्टर था । कनि और कौशल को जैसे मनचाही मुराद मिल गयी था लेकिन वज्रपात उस समय हुआ जब लडक वालों ने पूछा आप अपनी लडकी का क्या दग ? आखिर हमारा लडका डॉक्टर हैं हमने उस पर कितना खर्च किया है? अच्छा ऐसा करे आप एक क्लानिक बनवा दीजिये उसमे दाना साथ ही प्रक्टिस करग ।

कनि हतप्रभ रह गयी । क्या उन्हाने अपना लडकी पर खर्च नहीं किया । व किसस खचा मागे और फिर बटा कमा कर भी ता उनको ही देगा उसका सिर चकरा गया । जान खम हो गयी । कनि निराश हो गइ लकिन कौशल ने उस हिम्मत बधाई अरे कनि सभी तो एसे नहीं हाते हैं तुम ता एक ही बार म निराश हो गयी । अरे हमारी बेटी म कोई कमी है क्या ? दखना एक स एक बढकर आएगे । इसक बाद तीन-चार रिश्ते और आए लेकिन सभी की कुछ न कुछ माग थी जैसे बिना माग के रिश्ता हो ही नहीं सकता । काई पच्चास

हजार की माग करते तो कोई पच्चीस तोले सोने की, कोई कार, फ्रिज, स्कूटर, रगीन टीवी, वी सी आर की । कौशल और कनि सोचते क्या लडकी को डॉक्टर बना कर उन्होने कोई भूल नहीं की कितनी मेहनत से लडकी को इस लायक बनाया उसका ऐसा प्रतिफल मिलेगा । उनका विश्वास हो गया कि विवाह के बाजार मे लडकी केवल लडकी है उसका डॉक्टर, वकील या उच्च शिक्षित होना कोई मायने नहीं रखता है । अब तो कौशल भी हिम्मत हार गया । आखिर कब तक हौसला रखता । अब तो कनि को हिम्मत बधाने के लिये भी उसके पास कोई शब्द नहीं थे ।

तभी एक प्रकाश की किरण दिखाई दी एक अच्छे परिवार का रिश्ता आया । लडका इन्जीनियर था उसके परिवार के लोग भी अच्छे ही लगे । रिश्ता तय हो गया । कनि और कौशल ने राहत की सास ली । पर मन मे सदा भय बना रहता कि वो लोग कब कुछ माग कर बैठे इसी डर से जान बूझकर लेने-देने की बात नहीं उठाई सब कुछ भाग्य के भरोसे छोड दिया सगाई रस्म होने तक उनकी ओर से कोई माग नहीं आई तब वे इस ओर से सन्तुष्ट हुए और राहत की सास ली ।

कुछ ही समय के बाद उन्हे अपने लडके का विवाह करना पडा। पहला विवाह था, बहुत धूम-धाम से हुआ, विवाह कर बहू को घर ले आये और उसी रोज रात को दुर्भाग्य से एक हादसा हो गया । कनि कौशल व अन्य लोग थकान से चूर गहरी निद्रा मे सो रहे थे कि घर मे चोर घुस आये गर्मी के दिन थे सभी छत पर सो रहे थे वो भी गहरी नींद । किसी को पता भी नहीं चला और बरसो की मेहनत से कमाया धन कुछ क्षणो मे ले गये कनि के सभी जेवर रह गये जो वे पहने थी इस घटना ने तो कनि और कौशल को तोड कर रख दिया एक-दो दिन मे एक-एक कर सभी मेहमान विदा हो गये सभी ने ढाढस बन्धाया कहते हैं समय हर घाव को भर दता है धीरे-धीरे वे भी सामान्य होने लगे की एक पत्र ने उन्हे झिझोड कर रख दिया लडकी के ससुराल से पत्र आया था जिसका सार था "आपका सभी कुछ तो चोरी हो गया, अब लडकी को क्या दोगे ? हमने तो यह सोचकर रिश्ता किया था कि दोनो कमा रहे हैं अच्छा-खासा दहेज देगे हमे आपसे बहुत अपेक्षाये थी लेकिन अब आप शायद उतना नहीं कर पायेगे हमने अपने लडके का रिश्ता दूसरी जगह कर दिया है ।" पत्र पढकर तो दोनो सकते मे आ गये, दुनिया घूमती नजर आने लगी, कनि ने तो रो-रो कर अपना बुरा हाल बना लिया । खाना पीना छोड दिया ऑफिस जाना भी बन्द कर दिया कुछ ही दिनो मे कमजोर सी दिखने लगी । बेटी का मन न दुखे इसलिये उसके सामने बनावटी फीकी हँसी हँसने का प्रयास करती लेकिन पीडा के भाव लाख चाहने पर भी

छिपा नहीं पाती । दुखी तो रुचि भी बहुत थी उसको भी बहुत बडा धक्का लगा फिर भी इस बात का सुकून था कि उन लोगो की नियत का तो पता चल गया । वह अपनी माँ का हौसला बनाये रखती और कहती माँ आपको तो खुश होना चाहिये कि आपकी बेटी ऐसे लालचियो के चुगल मे तो नहीं जी पाती पता नहीं लोगो को पढी-लिखी कमाऊ लडकी के सामने भी दहेज जैसी चीज की इतनी अहमियत लगती है । माँ दु ख तो मुझे भी है लेकिन इनका पढ लिख कर काबिल बनने के बाद भी मुझे दहेज के समकक्ष तोला गया? क्या मेरी शिक्षा का यही मूल्य है ? बडे आये बेटे की पढाई का खर्च मागने आप अपनी बेटी की पढाई का खर्च किससे मागोगी मुझे ऐसे सौदेबाजो के यहाँ शादी नहीं करनी माँ मैं आप पर बोझ हूँ बोलो ना माँ मैं कहीं नहीं जाऊँगी नहीं करनी मुझे शादी नहीं चाहिये मुझे ऐसा समाज ऐसी मान्यताएँ जहाँ बेटी और बेटी वालो को तिलतिल कर जलना पडता है कनि विस्मित होकर रुचि को ताक रही थी सदा चुप रहने वाली फूल सी कोमल बेटी के जज्बात सुनकर कनि दुखी हो गई । वह कुछ बालती कि बेल बज उठी रुचि ने दरवाजा खोला तो आश्चर्य चकित रह गई आठ-दस कॉलेज के सहपाठी सामने खडे थे सभी उसकी सहेली रोमा आगे आई रुचि तुम ठीक तो हो तुम्हे क्या हुआ रुचि इतने दिन कॉलेज क्यूँ नहीं आई तुम्हे मालूम हैं इन दिनो क्लास छोडने का कितना नुकसान होगा ? रुचि इन सवालो का जवाब नहीं दे सकी सभी को अपनी माँ के पास ले आयी । माँ की हालत देख कर सभी जने चौंके आन्टी अपनी क्या हालत बना ली । हम तो पता ही नहीं आप कब से बीमार है? कनि, जो बेटी के दु ख से भरी हुई थी ही उसके सब्र का बाध टूट गया । सहनशीलता जाती रही मन मे दबा ज्वालामुखी लावा बनकर निकलने लगा वह और कितना सह सकेगी न जाने किस प्रवाह म वह सभी के सामने अपनी व्यथा की परत दर परत खोलती गई सब कह चुकी तो उसकी आँखो से गगा जमुना बह रही थी उसे जब ख्याल आया तो वह चौंकी- अर मैंने तो तुम्हे पानी का भी नहीं पूछा वह आँखे पोछती हुई रुचि की ओर देखने लगी जो पहले से ही चाय, नाश्ते की ट्रे लिये हुए खडी थी कनि ने देखा सभी लडकियो की आँखे गीली थी और लडके भी गमगीन थे । लेकिन एक लडका सबसे नजर बचा कर आँखो को पोंछ रहा था । उस पर जब कनि की नजर पडी तो उसने हँसने का असफल प्रयास किया लेकिन हँस न सका केवल इतना बोला आन्टी रुचि जैसी लडकी के साथ ऐसा हो सकता है विश्वास नहीं होता है वे पछताएगे जिन्होने ऐसे हीरे को ठुकरा दिया ।

कुछ दिनो बाद वही लडका कनि को इतना कुछ कह गया जो इतने दिनो तक शायद कहने का साहस जुटा रहा था। उसकी स्पष्टवादिता और सहृदयता कनि को भा गई उसे वह अपना भावी दामाद नजर आने लगा उसक शब्द बार-बार कानो म गूजते-मम्मी रुचि को छोडने वाला दुर्भाग्यशाली है। इसका पति जो भी होगा खुशनसीब होगा आपकी रुचि गुणो की खान है। हमारे सभी साथी इसकी बहुत कद्र करते हैं। इसकी कार्य कुशलता एव व्यवहार के सभी कायल हैं मम्मी छोटे मुह बडी बात होगी आप और सभी लोग चाहे तो मैं आपसे आपका यह बहुमूल्य हीरा मागता हूँ मैं आपकी जाति का नहीं हूँ फिर भी अगर आप उचित समझे तो रुचि से भी पूछ लीजियेगा। अगले सप्ताह मेरे माता-पिता आ रहे हैं मैंने उन्ह सब कुछ लिख दिया था आप उनसे भी मिल लेना ये बाते सुयश ने बडे ही विनम्र होकर सकोच से कही। उसके चेहरे पर दृढता के भाव थे।

और कई दिन के बाद कनि अपने पति को यह सब बताने का साहस कर सकी। जिसकी स्वीकृति पाकर आज वह बहुत खुश थी।



मौन

हनुमान दीक्षित

यूं तो अखिल पूरे सत्र ही पढता रहा है। मगर पिछले दो माह से तो वह रात-दिन एक किये हें। अब तो एक दिन की बात और है, तीस मइ को तो परीक्षा समाप्त हा ही जाएगी। यह उसका अन्तिम वप है। उसन विज्ञान म प्रथम वर्ष व द्वितीय वर्ष मे कुल सडसठ प्रतिशत अक प्राप्त किये है। इस वर्ष उसको आशा है कि वह बहत्तर पतिशत अक प्राप्त कर लेगा। सो उसने खेल कूद मित्रो से हास-परिहास आदि से मुह मोड लिया है। हालाकि उसकी अन्तरग मित्र मण्डली समय-बेसमय उसे छेडने आ ही जाती है। वह इन सब पर कोई प्रतिक्रिया नहीं करता या मन ही मन कुढता है। वैसे वह बडा ही मनमौजी किस्म का छात्र है। पढाई के साथ-साथ कॉलेज की हर गतिविधि मे भाग लेता हं। इस बार उसे ऐसा अहसास हा रहा है कि परिवार मे कुछ नया दायित्व उस पर आनेवाला है। दादा के मौन मे उसे अपेक्षा परिलक्षित होती है। उसे दादा की सामाजिक प्रतिष्ठा व पारिवारिक स्थिति का भान है। इसीलिये वह पूरे वर्ष अधिक सावधान रहा है। सदा की तरह आज भी वह प्रात चार बजे स लगातार पढता आ रहा है। चाय भी एक बार ही ली है। उसने सामने मेज पर रखी अलार्म घडी की ओर देखा- प्रात के साढे आठ बज रहे है। उसने किताब को परे रख अगडाई ली। अगुलियो के कटके निकाले। फिर उठा और कमरे से बाहर आ गया। उसने दखा छात्रो की धमा चौकडी से गुजार रहने वाला पटेल हॉस्टल आजकल गहरी खामोशी ओढे हुए हैं। इस खामोशी को भग कर रही है तेज चलती पश्चिमी हवा जो पेडो को झकझोर रही है। पेड है कि उस गर्म हवा क थपेडा का सहत हुए साय-साय का स्वर बिखेर रहे हैं। उसे सामने से उपकार व किरण आते दिखाई दिए। एक बार उसे ताजगी का झोका महसूस हुआ। यह जोडा अपने प्रेम के लिये खास चर्चित रहा है कॉलेज परिसर म पूरे साल भर। दोना स अखिल की दुआ-सलाम

हुई । एक खिलखिलाहट हवा मे बिखरी । जो थिरकन पैदा करती आगे बढ गई । अखिल को विचार आया कि लोग प्रेम कैसे करने लग जाते हैं । उसे आदर-स्नेह तो मिलता है । मगर प्यार तो कोई नहीं करता है । इस मामले मे तो वह मरुस्थल का सूखा ठूठ है । उसने अनुभव किया जो बडप्पन का भान अपने म पाल लेते हैं उन्हे सम्मान तो मिल सकता है, मगर प्रेम नहीं । ईश्वर को भी प्रेम पाने के लिये 'तू' के धरातल पर उतरना पडता है । इसीलिए तो वह आज कॉलेज का अध्यक्ष है । किसी का प्रेमी नहीं । उसे अजीब किस्म की रिक्तता ने घेर लिया ।

जब अखिल परीक्षा हाल मे पेपर देकर निकला तो उसका चेहरा सन्तोष व खुशी से दीप्त था । उसने तय कर लिया कि वह दो दिन रुक कर सभी से मिल-भेट कर अपने गाँव लौटेगा । शायद वह एम एस सी नहीं कर सकेगा अगले साल । अगर करेगा भी तो कुछ पुराने साथी उसे छोड चुके होगे । वह कुछ कदम आगे बढा ही था कि चपरासी ने आकर कहा "आपको प्राचार्यजी ने अपने कमरे म बुलाया है ।" वह बिना प्रत्युत्तर दिये तेज गति से उधर ही बढ गया । अन्दर कक्ष मे जाकर प्राचार्य से प्रणाम करता हुआ बोला, "सर आपसे मिलना ही था । आपने बुलाकर और भी ठीक किया । कहिए क्या आज्ञा है ?"

"बैठो अखिल, तुम्हारे पेपर तो ठीक हो ही गए होगे । तुम जैसे परिश्रमी व मेधावी छात्र से विपरीत निर्णय की अपेक्षा कर ही नहीं सकते हम लोग ।" प्राचार्य भटनागर बोले, "सर आपकी कृपा व गुरुजनो के आशीर्वाद से बहुत अच्छे हो गए ।" अखिल ने विनम्रता से उत्तर दिया ।

मेज की दराज से तार निकाल कर अखिल को देते हुए प्राचार्य बोले, "यह आज प्रात ही मिल गया था । मगर तुम्हारा पेपर होना था सो मैंने अपने पास रख लिया । इसे अन्यथा मत लेना । और फिर तुम तो समझदार युवक हो, तथा तुम्हारे दादा भी हिन्दी जगत के सशक्त हस्ताक्षर थे । उन्ह वर्षों तक याद करेगे । माँ भारती के उपासक । कॉलेज की पुस्तके फिर आकर जमा करा देना । साय वाली ट्रेन से गाँव रवाना हो जाओ । मेरी गहरी सवेदना परिवार तक पहुँचा देना ।" कहकर प्राचार्य अखिल की तरफ देखने लगे ।

अखिल ने तार हाथ मे लिया । तत्काल उठा । प्राचार्य से प्रणाम किया और बाहर आ गया । वह कुछ कहना चाहता था मगर शोक मे इस कदर डूब गया कि चाहने पर भी कुछ न कह सका । वह तेज गति से हॉस्टल की तरफ बढ गया । रास्ते म अनमने भाव से मिलने जुलने वालो से नमस्कार का आदान-प्रदान करता रहा । कमरे मे पहुँच कर जेब से निकाल तार को पढा, फिर घडी की तरफ देखा- पौने तीन बज रहे हैं । ट्रेन साय सात बजे जाती है । बस

पाँच बजे। उसने बस मे जाने का मन बना लिया। वह सामान समेटना प्रारम्भ कर दिया। मित्रो को समाचार मिला तो वे भी आए। गहरी संवेदना व्यक्त करने लगे। अखिल भी आभार व्यक्त करता हुआ अपन काम मे लगा रहा।

उसे आशा नहीं थी कि बस मिल जाएगी। मगर डिपो से देर से ही आई। सो बस ही नहीं, सीट भी मिल गइ। उसने चलती बस से शहर का नजारा देखा। वही चिर-परिचित दृश्य। भागते लोग, दौडती गाडियाँ। कीडे-मकोडो से बदतर जीवन जीते मिनख। अलकापुरी से भी अधिक सुख भोगते धरा क देव पुरुष मिनख-मिनख म भयकर अन्तर। यही अन्तर दादा को अन्दर तक सालता था। दादा को युवावस्था कैसे गुजरी होगी। वह नहीं जानता। जब वह दस-बारह साल का हो गया तथा कुछ-कुछ समझने लगा अन्दर खान की बात। तब दादा अट्ठावन पार कर चुके थे। यह उम्र किसी भी सरकारी कर्मचारी को खारिज करने के लिये बहुत है। चगा भला आदमी रिटायर कर दिया जाता है। जबकि सत्ता के उच्च शिखरो पर कब्रो मे दफनाये जा सकने वाली बदशक्लें बैठी लोकतत्र की कब्र खोदती हुई मिलती है। सो दादा भी खारिज होकर घर आ गए थे। अध्यापकगिरी से मुक्ति पा ली थी।

जहाँ तक दादा की शक्ल-सूरत का सवाल है जो पत्र-पत्रिकाएँ पढते है, उन्ह बखूबी जानते हैं। प्राय रचना के साथ उनका चित्र छपता है। जो बाजारू किताबे पढते हैं। उनके लिये वे लिखते भी न थे। उनका लेखन धार-गभीर था। उसी के अनुरूप उनका चेहरा व स्वभाव था। कथनी-करनी मे अन्तर नहीं। सो वे सुखी जीवन नहीं जी सके। दोगले लोगो के बीच युगधर्म को न मानने वाला सुख की कामना कैसे कर सकता है। दरअसल उन्ह सुख-दु ख की परवाह थी भी नहीं। वे बडे स्वाभिमानी आदमी थे। अम्मा बता रही थी कि वे तो नौकरी के पक्षधर भी नहीं थे। मगर एक दिन की घटना ने उन्ह बुरी तरह से झकझोर दिया- दादी माँ तेज आवाज मे बिफरती हुई कह जा रही थी कि "तुम्हारे साथ लोगा के लिय हर प्रकार की सुख-सुविधा जुटा रखो है। एक तुम हो कि कभी लाकर दी है अपने हाथो एक साडी भी? लाग नोटा स घर भर रह हैं। तुम इन मुइ किताबो स। इस पुराने दूढे म तिल रखने को भी जगह नहीं।" कहती सारी किताब निकाल-निकाल दालान म बिखर दी।

दादा मौन देखते रहे। दादी माँ का गुस्सा शान्त हुआ ता उन्होंने किताबों को सहज कर वापस यथा स्थान रख दिया। इस घटना के बाद दादा मे दो परिवतन एक साथ परिलक्षित हुए। पहला यह कि दादा किसी निजी विद्यालय में अध्यापक नियुक्त हो गए। लेखन-अध्ययन तो जारी रहा। मगर स्वतत्र लेखन का विचार सदा के लिय त्याग दिया। दूसरा मौन हो गए। फिर कभी हँसी

के ठहाके हवा म नहीं गूजे । क्योकि वे माँ सरस्वती का अपमान सह नहीं सके । पुस्तके उन्हे प्राणो से भी प्यारी थी । जब कभी इनके-उनके पाव भी लग जाता था वे तुरन्त उसे माथे से छुआ कर क्षमा मागते थे । उसे याद आया । दादा जब पहली तारीख को वेतन लेकर घर आते । एक सूची बनाते । उसी अनुसार दुकान दर दुकान जाकर उधार चुका देते । उनका प्रयास रहता कि उधार बिन मागी चुकाई जाए । वे शोषण के खिलाफ थे । मगर सूदखोर के प्रति उनका दृष्टिकोण अलग था । एक बार उन्होने कहा था कि सूदखोरी बुरी है । सूदखोर भी बुरे हैं । मगर उनसे अच्छे है जो अपने पास धन होते हुए भी पराये तो दूर अपनो की भी मदद नहीं करते । जबकि सूदखोर सूद के लिये ही सही किसी के हमदर्द बनते है । अगर उचित दर से सूद लिया जाए तो यह बुरा भी नहीं है । आज तो सारी विश्व व्यवस्था लेन-देन से जुडी है । जहाँ पूजी है वहाँ सूद भी होगा ही ।

दादा जो भी कमाते । परिवार के भरण-पोषण पर खर्च कर देते । अपने लिये कुछ भी नहीं खरीदते । वर्षों पुराना सूट । वही पुरानी चप्पलें । न जाने कब का खरीदा पुराना कारी-कुटको से भरा जूता । इन्हीं मामूली कपडो मे स्कूल-दफ्तर तो क्या बडे-बडे सम्मेलनो मे चले जाते थे । कई बार वह भी दादा के साथ गया है । उसने देखा कि जहाँ भी दादा जाते थे । बीसियो लोग उनका आदर-सत्कार करते हुए मिल जाते थे ।

दादा के पास दश के बडे-बडे लोग यथा शिक्षाविद्, साहित्यकार राजनेता, आते थे । वे भी उनसे मिलने जाते होगे । मगर किसी के सामने उन्होंने हाथ नहीं फैलाया । वे साधारण ही नहीं, साधारण से कम रहे होगे । मगर वे अपने समय के सम्मानित व्यक्ति थे ।

वह दादा के स्वभाव से परिचित हो गया था । दादा जब भी समस्या से घिरे होते तो मित्रो से मिलने बाहर चले जाते । ऐसी गप्प गोष्ठी जमाते कि समय का भी ध्यान रखते । बाहर नहीं जाते तो दालान मे चक्कर लगान लगते या फिर किताबो की दुनिया मे खो जाते । दादा रोज-रोज नहीं लिखत थे । जब भी मूड होता लिखने बैठ जाते । जब मूड उखड जाता तो परिवार के बीच आकर बैठ जाते । पोते-नाती के साथ इस कदर खेलते कि हम बच्चो को भ्रम हो जाता कि दादा भी निरे बच्चे ही हैं ।

दादा ने इतना लिखा । बीसियो किताबे प्रकाशित हुई । इतनी ही अप्रकाशित पडी है । लेखको म केकडा पद्धति चलती है । कोई लेखक आगे बढता है तो दूसरे टाग पकड कर नीचे खींचने लग जाता है । यह दादा के साथ भी हुआ । हर समय आलोचना से दो-चार होते रहे । किसी का भी बुरा नहीं मनाया न आरोपो का खण्डन किया । यह नहीं कि उन्हे आलोचना ही मिली प्रशसा

भी मिली । मगर यहाँ भी कोई प्रतिक्रिया नहीं की । दरअसल वे आलोचना प्रशंसा को बेबाक स्वीकार तो करते । मगर उनको पचा जाते । उनका हाजमा जबर्दस्त था । उनका मौन रह जाना उसे अच्छा नहीं लगता था । कारण वह चाहता था कि अपने विरोधियो पर पूरी शक्ति से प्रहार करे । एक दिन उसने कहा तो दादा ने प्रत्युत्तर दिया था- मेरा मौन ही ब्रह्मास्त्र है, अखिल ।

रास्ते मे बस खराब हो गई । चालक किसी तरह धक्का देकर डिपो तक लाया मरम्मत आदि करवाकर पुन रवाना हुई तो तीन घण्टा का विलम्ब हो गया था ।

जब अखिल घर पहुँचा तो प्रात के सात बज रहे थ । घर के आगे तख्त पडा था । उस पर पडौसी हरखू ताऊ बैठे चिलम का सुट्टा लगा रहे थे । उसे देखते ही वे बोले, "अरे, अखिल बेटा आ गया क्या ?"

"प्रणाम ताऊजी, कहकर उसने कहा- अभी-अभी आ रहा हूँ । बस तीन घण्टा लेट आई ।"

"बस क्या है बेटे, खटारा है । अरे अखिल, तुम्हारे दादा ने अन्तिम समय या तो रामजी का नाम लिया या फिर तुम्हारा स्मरण किया " उसके पीछे आते हुए हरखू ताऊ बोले ।

अखिल दादा के कमरे के सामने आकर फफक पडा । जिस धैर्य से अब तक अपनी व्यथा को छुपा रखा था । वही पीडा आँखो से वह निकली थी । तब तक परिवार के सभी लोग आ चुके थे । सभी ने उसे चुप कराने का प्रयास किया । आखिर मे हरखू ताऊ के शब्द भर भरांयी आवाज म अखिल के मन मे उतर गए । "एक दिन सभी को जाना ही होता है । तुम्हारे दादा भी सत्तर साल की शानदार जिन्दगी जी कर गये है । सात्विक पुरुषो का जीवन ज्यादा लम्बा नहीं होता । जैसे जीवन उन्होंने जिया वह वर्षों तक हर टूटे मिनख को जीने की नई प्रेरणा देता रहेगा । जब तेरे दादा की आँखे आँसू के लिये तरसती रह गई । और एक तू है कि रोता है । वे सारी जिन्दगी हँसते रहे । लोग खुशी मे हँसते हैं । जबकि मेरा दोस्त तो गम की गहरी घाटिया म भी हँसता था । रोकर उसका अपमान मत कर बेटे । वह जब हँसता था तब पता भी नहीं चलता था कि इस आदमी को कोई कष्ट है । वह मजबूत चट्टान था । किसी ने नहीं देखा उसके अन्दर उबलते बहते लावे को । तुम उस गर्म लावे म आँसू के छीटे डाल रहे हो । इस गर्म लावे को ठण्डा मत करो । बहने दो इस लावे को ताकि जुल्म करने वालो की बस्तिया तबाह हो जाए । दूर-दूर तक फैले झापडे चाहे मिट जाएँ । एक दिन ये तो फिर बन जाएँगे । मगर ककरीट क जगल तो तबाह हो । तुम्हारे लिये वे विरासत छोड गए हैं । उसे सम्भालो ही नहीं आगे भी बढाओ ।" कहकर ताऊ खाँसी मे उलझ गए ।

अखिल अब आश्वत था । उसे याद आया । दादा को उससे कुछ अपेक्षायें हो थीं । जितना उनसे उसे स्नेह मिला । उतना किसी से भी नहीं । अब वह उस विरासत का उत्तराधिकारी है ।

हॉकर अखबार दे गया था । अखिल ने मुख पृष्ठ पर दृष्टि डाली तो नजर आया- इस साल का साहित्य का सबसे बड़ा पुरस्कार उसके दादा के कथा संकलन "पहाड़ के उस पार" पर मिला है ।

उसने कमरे में लगे दादा के चित्र की तरफ देखा । उसे लगा कि प्रशंसा व आलोचना के समय मौन रहने वाले दादा का मौन आज और भी गहरा है



उत्तर की तलाश

भरतसिह ओला

आज क परिवश म बी एड हाना बडा सुकून देता है खास कर लडकिया क मामल म । दहेज की बढती कटीली झाडी पर बस यही वह कुल्हाडी है जिससे उस धराशाही किया जा सकता हे । वरना इस जहरीली झाडी को काट पाना बेमानी है ।

सरला का ही दख लीजिए । कहाँ-कहाँ चक्कर नहीं लगाये उसके बूढे होते बाप न । मगर सब बकार । सबकी एक ही रा एक ही भाषा । सरला स्वय भी तो बहुत निराश हो गई थी । मगर जब से बी एड किया है सबके राग छू-मन्तर हो गये हैं । तभी ता पापा ने बेतकल्लुफी से कह डाला "दुल्हन ही दहेज हे ।"

-क्यो नही है दुल्हन ही दहेज, साने का अण्डा देने वाली मुर्गी जा ठहरी ।

"लडकी बी एड कर रही है ।" सुनत ही पापा ने मीठी मुस्कान बिखेरी ओर बोले- "अर्थ का युग ह दोनो कमायगे ता गृहस्थी की गाडी को आराम स खीच ल जाएगे । इस महगाई के जमाने मे आखिर एक वतन से होता भी क्या है ।"

"बिल्कुल बिल्कुल ठीक कहा आपने ।" मोसाजी ने हाँ म हाँ मिलाई ।

सरला मासाजी के बहनाई के भाई की लडकी थी । सुशील, सुन्दर गृहकार्य मे दक्ष । आखिर पापा को क्या एतराज होता ।

बडी खुशी-खुशी शादी हुई । मैं भी बेहद खुश हुआ सरला सी बीबी को पाकर । पापा भी बेहद खुश थे उनकी नाक जो ऊँची हो गई थी । हालाकि सरला कूलर, फ्रिज आलमारी चाँदी के बर्तन और - जाने क्या-क्या सामान लाई थी मगर नकदी नहीं लाई थी । पापा की इज्जत के लिये । पापा अब गाँव की चोपाल म शेखी बघारते दहेज विरोधी होने का दम भरत ।

"अरे दहेज तो पाप है भैया, पाप । अब हमे ही देख लो भगवती की शादी मे हमने क्या लिया ? फकत एक रुपया । पैसे की भूख किसे नहीं, मगर मुझे पैसे नहीं बहू चाहिये । मैंने आप लोगो के सामने उस जहरीले नाग का फन कुचला डाला ।" पापा लम्बा-चौडा भाषण देते । बेचारे ग्रामीण उनकी बातो पर किसी प्राइमरी स्कूल के बच्चे की तरह विश्वास करते ।

"दीनदयालजी आप तो समाज सुधारक हैं ।" रामू काका कह उठे ।

सरला शादी के बाद घर आई तो गाँव मे एक नई चर्चा छिड गई । बिना पर्दे की बहू और वो भी राजस्थान के ठेठ गाँव मे ।

"सुना है भगवती की बहू पण्डितजी से भी पर्दा नहीं करती ।"

"अरे सुना नहीं मैंने तो अपनी आँखो से देखा हे ओर हाँ, बात भी करती है बूढी दादी सी ।"

"हाय राम कलजुग आ गया, घोर कलजुग ।"

"और नहीं तो क्या दो आखर क्या पढ लिये छोटे-बडे का कायदा ही भूल गई । जब मैं नई-नई आई थी तो मुँह तो दूर अगूठा भी नहीं दीखता था ।" पनिहारिन अक्सर चर्चा करती ।

कजरी काकी को भी ये सब अच्छा नहीं लगता वो कहतीं- दीनदयालजी क्या करे, बेचारे के भीतर घाव हो रहे हैं । कोई मरहम लगाने वाला भी नहीं । दीनदयालजी तो यह शादी भी नहीं करना चाहते थे । फिर थोडा रुककर इधर-उधर देखकर धीरे से बोली- "अपनी इज्जत रखने के लिए ये सब कुछ करना पडा । छोकरा भी शहर पढता था, छोकरी भी वहीं ।"

"सुना तो मैंने भी था छोकरी की जान-पहचान भगवती से पहले ही थी ।" ताई रामो बोल पडी ।

"और नहीं तो क्या ?" कजरी काकी ने हाथ नचाकर कहा ।

चर्चा चलती रहती न जाने कैसी-कैसी । बूढे बुजुर्ग इससे अछूते न रहते ।

" आखिर मान-मर्यादा का कुछ तो ख्याल होना ही चाहिये । बहू और बेटी मे फर्क दिखना ही चाहिये ।" हरगोपाल बुदबुदाते ।

मैं सोचता कितनी बेहूदा सोच है मेरे यातिम बुजुर्ग की । बहू और बेटी मे फर्क समझते हैं तभी तो आये दिन हादसे होते हैं ।

"कौन मानता है इस कलजुग मे । कहते हैं शहर मे तो और भी बुरा हाल है । खाना तक खाते हैं साथ-साथ " बदरी बोल पडे ।

भाड मे जाये शहर । हमे उससे क्या ? ये जो तेरे गाँव म हो रहा है, ये क्या शहर स कम है ? हरगोपाल फिर उबल पडे ।

"अरे ये सब उस डिब्बे की करामात है ।" बदरी का इशारा टी वी की तरफ होता ।

"ये छतरियाँ बेडा गर्क करगी गाँव का । इन दो साला म बरसात भी ता कम होने लगी हे । हरगोपाल फिर बोल पड ।

चौपाल जमती तो उठने का नाम न लती । सारा गाँव इस चौपाल म सिमटकर रह जाता । किस-किस की चर्चा नहीं होती, कौन से विषय एसे थे जिनकी समीक्षा यहाँ नहीं होती ।

और वह दिन भी आ गया जिसका मुझ, सग्ला और पापा को इन्तजार था । शहर के कन्या विद्यालय म सरला हिन्दी की व्याख्याता लग गई थी ।

"मुझे इतना विश्वास नहीं था ।" सरला ने खुशी छुपाते हुए कहा ।

"इसम विश्वास नहीं हान की क्या बात है । प्रश्नपत्र अच्छे हुए सो तुम्हारा चयन हा गया ।" मैंने प्रशसा करते हुए कहा ।

"प्रश्नपत्र तो आपने भी अच्छ किये थे " सरला बीच म ही रुक गइ ।

"नहीं, अगर अच्छे होते तो चयन निश्चित होता और फिर मैं तो बेराजगार नहीं हूँ, अध्यापक हूँ ।"

"सो तो है ही ।"

"चुपडी और दो-दो ।" मुझे मजाक सूझी ।

बोली "कैसे ?"

"ला इसम न समझने की कौन सी बात है । व्याख्याता आर वा भी शहर म ।"

"अच्छा होता मुझ गाँव मिलता । कुछ मौका तो मिलता असली माटी की सुगन्ध को पहचानने का ।"

"क्या शहर की मिट्टा अपनी नहीं ?" मैंन उसी लहज मे कहा ।

"है तो सही लेकिन मिलावटी । हर चीज मे मिलावट । " सरला कह उठी ।

"लकिन अब ता मिलावट शहर म भी दौड आई है । " कौन सी चीज अछूता बची है गाँव म का जिसम मिलावट नहीं ।

पापा गुड ले आये आर बोल-"लो इसे खाओ बिना मिलावट का । हमारे जमाने म इससे बडी मिठाई नहीं हुआ करती थी । "

पापा हरगोपाल और बदरी को गुड खिलाना न भूले थे ।

मैं प्राइमरी स्कूल का अध्यापक और सरला सी॰ न॰ से॰ स्कूल की व्याख्याता । भला इस पुरुष प्रधान समाज का क्या कर अच्छी लगती।

साधिया ने मीठे चाण छोड-"भाभी प्रोफसर हा गई और भैया " कह कर हिमाशु रुक गये ।

"हाँ-हाँ कहिए हिमाशुजी रुक क्यो गये और नैया बेचारे अध्यापक यही ना । और मैं अन्तर्द्वन्द्व म फस कर रह जाता । बस मुझे यहाँ आकर अपने अध्यापक समाज पर तरस आता । वो अपने आप को छाटा समझने की हीन ग्रन्थि को क्या पाल बैठता है । अध्यापक तो राष्ट्र निर्माता हे । दश को भावी नागरिक प्रदान करने वाला मसीहा । फिर ये खाई मे उबासी तोडते विचार क्या? उसे गर्व होना चाहिए कि व्याख्याताओ, प्रोफेसरो के सामने बैठा जिज्ञासु बालक उसकी सीढिया से होकर आया है । अधेरे की कोठरी म पडे-पडे रोशनी को मुट्ठी मे भरना चाहते हैं । असम्भव है । राशनी के लिए तो बाहर आना ही पडेगा । सूर्य को स्वीकार करना ही पडेगा । मगर सब बेकार ।

"भला कोई इज्जत हुई भगवती की । पत्नी बडे स्कूल मे और आप प्राइमरी मे । " सरफू चाचा मुँह बिचका कर कहते ।

"भगवती का ओरत से नौकरी नहीं करवानी चाहिए । " पूर्ण बाले ।

"अरे आज की इस पीढी को तो पैसा चाहिए, मगर दीनदयालजी को तो सोचना चाहिए था । बहू की कमाई खाकर तेर जायेगा ।" हरगोपाल ने राग मे राग मिलाई ।

"भई कलजुग मे तो कमी रही नहीं । गाँव की बहू नोकरी करेगी और वह भी अकेली शहर म । " बदरी ने भी टेर मे टेर मिलाना अपना फर्ज समझा ।

"अरे अभी क्या हुआ है आगे-आगे देखना क्या होता है ।" सरफू काका ने भी अपनी धुन छेडी ।

यही हाल विद्या मन्दिरो का था । उनके शब्द हरगोपाल की तरह सपाट नहीं थे । उनमे शिष्टता की बू थी, पढे लिखे जो ठहरे ।

"क्यो भाई भगवती आज क्या कुछ करके आ रहे हो ? "

"कुछ नहीं भैया आज तो सब्जी काटी, कपडो पर प्रेस की,बस बाकी कुछ नहीं । "

"ये कौन सा बुरा है, भाभी प्रोफेसर जो ठहरी । अब तुम्हीं सोचो साडी के प्रेस किये बिना स्कूल जाना अच्छा लगेगा क्या ?" हरिहर ने चुटकी ली ।

मैंने कहा -"सो तो है । "

"काम बाँट कर करते होगे आधा-आधा ।" सतीशजी बोले ।

"आधा ही क्यो आधे से ज्यादा और फिर इनको काम ही क्या है सिवाय घर के कामो के ।" हरिहर उसी लहजे मे बोले ।

"काम नहीं करूँगा तो गृहस्थी की गाडी कैसे चलेगी । मानते हैं गृहस्थी का बोझ हम लोगो ने औरतो के पल्ले बाँध रखा है । मगर यह तो उसका दोहरा शोषण है । नौकरी भी करो गृहस्थी भी सम्भालो । "

"भई कहते हैं सतयुग म स्त्री पतिव्रता हुआ करती थी, पर इस कलयुग म आप जैस भाई पत्निव्रता भी होन लग । क्यो हिमाशुजी । " हरिहर फिर बाल पड ।

अक्सर बधुवर इस विषय पर अपना भरपूर मनारजन करते ।

"दरसल मैं तो औरत को नौकरी कराने के पक्ष म हूँ ही नहीं । औरत की कमाई खाने मे जरा भी मजा नहीं आता । फिर औरत तो घर के अन्दर ही अच्छी लगती है भैया । " हिमाशु ने व्यग्य बाण छोडे ।

"अर पक्ष म कौन है यार करवाना पडती है मजबूरी मे । पढी-लिखी बीवी के नाज-नखर देखे नहीं । खैर छोडो यार ।" हरिहर मुस्कान बिखरते ।

मुझे उनके सकीर्ण होते विचारो पर तरस आता । कैसे कल्याण हागा मेर देश का ? शिक्षा मे सुधार की बात करते हैं । पाठ्य पुस्तक नारी की समानता से लबालब हैं । लेकिन यहाँ तो ठीक इसके विपरीत समीक्षा करने वाले विद्वान साथी विराजमान हैं । दबी जुबान म दहेज, पर्दा प्रथा, मृत्युभोज का समर्थन करने वाल मर विद्वान साथी क्या स्वामी दयानन्द को पढा पायगे ? अपने धर्म का गुणगान करन वाल क्या कबीर क दोहा की उचित व्याख्या कर सकग । मूल अधिकारो को पढा पायेगे । और मैं तलाशता उन प्रश्नो के उत्तर जो मुझे दूर बहुत ६ ले जाते हैं ।

समय कब रोके रुकता है । मैं और सरला बुढापे के दरवाजे पर दस्तक दे रहे हैं । गृहस्थी की गाडी आराम से दौड रही है । आजकल सरला उपनिदशक (महिला) क पद पर कार्यरत है और मैं सेकण्डरी स्कूल का प्रधानाध्यापक हूँ। हरिहर, सतीश हिमाशु के भी चश्मे चढ गये हैं । वे अब भी अक्सर मेरे पास आते रहते हैं लकिन पहले सी अठखेलियो के साथ नहीं, सिफारिशो के पुलिन्दो के साथ हिमाशु की पुत्रवधू को रेत के गुब्बार छोडते गाँव मे रहना सुहाता नहीं । आखिर दार्जिलिग की ठहरी । हरिहर को पुत्री प्रशिक्षित बेरोजगार है । सतीश की पेन्शन होने वाली है । जल्दी से सब कुछ कर लेना चाहते हैं ।

"एसा है भगवती भाइ साहब आप तो जानते ही हैं कि अकेली औरत को गाँव म कितनी दिक्कतो का सामना करना पडता है । " कहकर हिमाशु थोडे रुके मेरी तरफ देखकर फिर बोलने लगे "थोडा कष्ट तो होगा पर क्या बताऊँ अपनोंके सामने तो कहना ही पडता है ना, और फिर भाभीजी तो बडी आसानी से कर भी सकती हैं। "

मैं कुछ बोलता उससे पहले ही हरिहर बोल पडे "बेरोजगारी कितनी बढ गई है । नियुक्तियाँ भी कितनी निकलती हैं और फिर उपर से ऊँची मैरिट ।

बहुत मुश्किल हो जाता है रोजगार पाना । भाभी जी तो सक्षम हैं ही । सब कुछ कर सकती हैं । कैसे भी, किसी भी तरह । समझदार को इशारा ही काफी है ।''

प्रश्न सूचक निगाहो स मैंने सतीश को निहारा तो समझ गये बोले- ''अगले माह स पेन्शन होने वाली है । चाहता हूँ सर्विश में रहते सारा काम निपटा लूँ ता अच्छा हे । फिर कौन किसकी खबर लेता है । अगर भाभी एक पत्र जिला शिक्षा अधिकारी को लिख देती तो काम बन जाता ।'' आदि-आदि ।

समझता था समय की पुकार के साथ मेरे साथियो के विचार बदल रहे हैं । उनकी सकीर्ण होती मानसिकता उनके जवान होते बच्चो के साथ विकसित हो रही है । मगर देखता हूँ मजबूरी मे एक सोच विकसित हुई है तो दूसरी ने सकीर्णता से आ घेरा है । स्वार्थ और चापलूसी उनकी जबान मे नाटक खेल रही हे । शतरज के घोड दौडा रहे हैं मगर गिर रहे हैं अपने ही पाले मे । सोच का दायरा पिद्दी को मारने तक ही सीमित हो गया है । शत्रु पर विजय प्राप्त करना उनका लक्ष्य ही नहीं रहा, वे येनकेन-प्रकारणेन पिद्दी को मार कर वीर का खिताब पाना चाहते हैं । खुद का राजा खतरे म है, वजीर मर रहा है, सेना तडप रही है मगर इन्हे कोई सरोकार नहीं । वे सिर्फ अपने हिस्से का माँस बाँट लना चाहते हैं ।

किसान की जमीन की बुद्धि सिकुड रही है । शिक्षा अधरझूल मे लटक रही है । लडखडा रही है विकलाग सी । बैसाखियो का सहारा चाहिए । कौन देगा बैसाखी? कब तक मागती रहेगी बैसाखी? क्या बैसाखियो को फेंक देने की सामर्थ्य नहीं है मेरे बन्धुआ म? उत्तर की तलाश मे दौडता हूँ विद्या मन्दिरो की तरफ । जहाँ वीणा के तार नए सुर मे बज रहे हैं ।



शाबास गीता !

मणिबावरा

सर्दियाए दिन बहुत प्यारे लगते हैं । खाने पीने के दिन । पहनने ओढने क दिन । चुस्ती स्फूर्ति के दिन और शारदीय सोनल धूप । सेवन करने का सौभाग्य मिल जाये तो एक नई ताजगी एक नई उमग हिलोर लेने लगती है जीवन म ।

पर आज की बात और है । सुबह की हल्की कुनकुनाती धूपली ठड का भला किसे अहसास । मुर्दनी छाई है । अलाव के इर्द-गिर्द उकडू बन बैठे हैं लोग । घर आगन बाहर भीतर एक ठडी खामोशी है । शाल-दुशाल ओढे कुछ लोग आ रहे हैं, जा रहे हैं । आहिस्ता आहिस्ता बतिया रहे हैं -

"आखिर रूपचन्द मर गया ।"

"हाँ उसकी यही नियति थी ।"

"पट्ठे ने मरते दम तक नहीं छोडी ।"

"लत जिसको लगती है छूटना मुश्किल है ।"

"हाँ यार नशेडी की अन्तिम इच्छा भी यही होती है कि दो घूट मिल जाय । "

पर मैं कुछ और ही सोच रहा था । सोच रहा था गीता के बारे मे जिसके बिलखते कारुणिक रुदन ने दिल दहला दिया था । सोच रहा था उसके छोटे-छोटे दो बच्चा के बारे मे जो अभी-अभी पितृ हीन हुए थे । सोच रहा था उसके ढहते हुए घर के बारे मे जो इस बरसात मे शायद ही खडा रह सके । सोच रहा था कि मनुष्य मरते हैं ट्रेन उलट जाने से, वायुयान क्रेश हो जाने से अग्निकाण्ड से युद्ध के हिसक हथियारो से, भूकम्प से काल-अकाल से, लेकिन अचम्भे वाली बात तब है जब मनुष्य जान बूझ कर मरता है । यद्यपि रूपचन्द जानता था कि अत्यधिक शराब का सेवन मौत का बुलावा है फिर भी वह पीता रहा पीता रहा । मौत के आगोश मे समा जाने तक पीता रहा ।

मैं इस मौहल्ले म पिछले 3 साल से किराए के मकान मे रहता हूँ। रूपचन्द और उसके परिवार से नाता बना तो इसलिए कि वे पडौसी हैं । एक बात और कि मुझे गन्ने का रस पीने का शौक है । पुराने बस स्टेण्ड पर गन्ने के रस की गुमटी चलाता था रूपचन्द । मैं वहाँ कभी-कभी शाम ढले पहुच जाता था । रूपचन्द बिना बर्फ डाले नींबू डालकर एक बडा सा गिलास सामने रख देता था । लाख चाहने पर भी पैसा नहीं लेता । मैं इसके एवज मे कभी गाजर मूली, हरे चने, या मूगफली खरीदकर उसके बच्चो मे बाट देता था । उसके बच्चे नीलू, कमल मुझसे हिलमिल गये थे ।

कभी कभार रूपचन्द का सम्पर्क अहसास तो कराता था कि वह शराब पीता है पर हद से गुजर गया होगा इसकी कल्पना नहीं थी ।

रूपचन्द की मृत्यु का दसवा और अन्य कर्मकाण्ड निपट जाने के बाद इच्छा हुई कि गीता से मिला जाय । परन्तु उसकी जात-बिरादरी से मालूम हुआ कि गीता छ माह तक "सोग मे रहेगी ।" घर के किसी कोने मे बैठकर प्रतिदिन दिन मे दो बार पति के नाम रोना विधवा का धर्म है । वह छ माह तक घर से बाहर निकल ही नहीं सकती और न किसी पराए पुरुष से मिल सकती है ।

मृत्यु पर सोग तो सभी मनाते हैं। पर इस प्रकार का सोग तो कारावास से भी बदतर है । एक अकेली विधवा आखिर कैसे चलाएगी घर का खर्च । कैसे होगा बच्चो का लालन-पालन । रूपचन्द तो सब कुछ शराब मे फूक कर चला गया । गन्ने के रस की गुमटी तहस-नहस हो गई । कैसे बीतेगे गीता के ये दुर्दिन, सोचकर सिहर उठता हूँ । समाज की ये खोखली पाबन्दियाँ, गलत रूढिया, बेमानी, अर्थहीन कुरीतिया तो आदमी के लिए धीमा जहर है । विकास की तमाम प्रक्रियाओ पर विराम चिन्ह लगा देती है । विशेषकर नारी की हालत तो दयनीय हो जाती है ।

गीता से नहीं मिल सकता क्योकि वह सोग मे है । परन्तु मैं बच्चो से तो मिल ही सकता हूँ । बहुत दिनो से नहीं देखा है बच्चो को । अपने पिता के न रहने का दुख तो बच्चो को भी होगा पर तथाकथित कारावासी सोग तो हर्गिज नहीं होगा । किसी को भी हक नहीं कि भोले-भाले ईश्वर के प्रतिरूप बालको की मुस्कराहट छीन ले । किसी को भी हक नहीं कि बचपन को क्षुधा की आग मे झोक दिया जाय । किसी को हक नहीं कि उन्हे शिक्षित होने से वचित किया जाय । अगर ऐसा होता है तो मानव अधिकारो का हनन करने वाले भयकर अपराधी हैं दोषी हैं । विचित्र विडम्बना है कि मानव ही मानव का शोषण करने वाला है ।

10 बजने को आ गये हैं । नौकरी पर जाने की तैयारी करता हूँ, तभी देखता हूँ कि गीता के बच्चे नीलू और कमल आ गये हैं । मैं आश्चर्य म डूबा

बोल उठता हूँ-आह ! तुम आओ-आओ । कैसी हो नीलू ? कैसे हो कमल? बच्चे रुआसे हो सिसक पडते हैं । बोल नहीं पाते । मैं पाँच वर्ष की नीलू और सात वर्ष के कमल को प्यार से पास बुला थपकिया देता हूँ । ढाढस बधाता हूँ । हाथो मे ढेर सारी चॉकलेट रख देता हूँ । आहिस्ते से पूछता हूँ- "मम्मी कैसी है ?" कमल सिसकता हुआ बोल पडता है "मम्मी घर पर नहीं है । मम्मी घर पर नहीं है ।" मैं सुनकर चौंक-सा गया और बोला- कहाँ गई मम्मी ?

"पता नहीं, सुबह से गई है । "

छ माह तक घर के कोने मे बैठकर रो-रोकर सोग मनाने वाली प्रतिबन्धित गीता आखिर कहाँ गई । एक बारगी तो मैं किसी अनिष्ट की आशका से काप गया ।

उस दिन मैं नौकरी पर नहीं जा सका । मन उदास हो गया था । बच्चो को खाना खिला कर सोच रहा था कि उन्हे घर कैसे भेजा जाय । तभी आहट होती है । देखता हूँ घर के बरामदे मे गीता खडी है । शायद बच्चो को खोजती हुई आई है । मैं दौडकर पास पहुँचता हूँ । इसके पहले कि मैं कुछ कहू, गीता बोल पडती है- "मास्टरजी ! मैंने पी डब्ल्यू डी मे चतुर्थ श्रेणी- कर्मचारी पद पर अस्थाई नौकरी कर ली है ।"

"पर तुम तो सोग मे जाति बिरादरी !"

मैंने जाति-बिरादरी की इन कुप्रथाओ की जजीरों को तोड फेका है । जात वाले मेरे घर-परिवार चलाने की जिम्मेदारी थोडे ही उठायगे । मैं अपने बच्चो को कातर दु खी मायूस भरे दिन बिताने को विवश नहीं कर सकती हूँ । मैं किसी की मोहताज होकर जीवन बिताना भी नहीं चाहती । आज नहीं तो कल मुझे कुछ न कुछ तो करना ही पडता ।

शाबास ! गीता शाबास ! यह सोग और ले डूबने वाली रूढियो को तुमने उखाड फेका । मैं एक नारी के अदम्य साहस को नमन करता हूँ ।



वह आदमी

भगवती लाल व्यास

पद एक था और प्रार्थी अनेक। एक अनार सौ बीमार। पद जिसे मिलना था वह पहले ही तय था। उसे प्रार्थी बनाया ही इसलिए गया था कि वह शेष जीवन काल म लोगो को निरन्तर प्रार्थी बनता हुआ देख सके।

फिर भी लोग थ कि तरह-तरह की अटकले लगा रहे थे। ऐसा हो सकता है कि ठीक इन्टरव्यू वाले दिन वह प्रार्थी बीमार पड जाए और वह इन्टरव्यू देने ही न आ सके या वह अपना इरादा बदल दे और जहाँ फिलहाल काम कर रहा है वहीं करता रह। और भी बहुत सी बाते हो सकती हैं। होने को क्या नहीं हो सकता।

मगर मुझ इस तरह की अटकलो का कोई अभ्यास न था। मैं तो जान रहा था कि वह शख्स इन्टरव्यू देन जरूर आयेगा। अगर बीमार भी हुआ तो स्ट्रेचर पर लेट कर आएगा पर वह इन्टरव्यू नहीं छोडेगा। लोग तो यहा तक कह रहे थे कि अगर वह नहीं आया तो इन्टरव्यू मुल्तवी हो सकते हैं। मुझे लगा कि यह भी घिसी-पिटी बात थी। हमारे देश मे आये दिन कई चीजे मुल्तवी हो रही हैं फिर इस साधारण से इन्टरव्यू म ऐसा क्या ह जिसके मुल्तवी होने की सभावना को इतनी गभीरता मे लिया जा रहा है ?

"कौन ल रहा है गम्भीरता से ?" तपाक स एक प्रार्थी बोला। अरे भाई, हमने इस मुद्दे का गभीरता से ले भी लिया तो क्या हो गया ? जिसे इस मुद्दे को गभीरता स लेना चाहिए वह तो इस समय अपने 'आनन्द भवन' में बैठा कॉफी सिप कर रहा होगा या कोई गजल सुन रहा होगा। हो सकता है खुद ही कोई गजल गुनगुना रहा हो।"

जिस उम्मीदवार को लिया जाना था उसको जानने का दावा सब कर रहे थे, और यह भी जानते थे कि वह क्यो लिया जाएगा ? मगर मुँह पर उसका नाम लेने को कोई भी तैयार न था। सब जानते थे कि वही उनका भावी अफसर होगा। जान-बूझ कर साप की बाबी म हाथ कौन डाले।

लोग मुझसे कहने लगे- "आप इन्टरव्यू देंगे ?" मैंने कहा- "हाँ इन्टरव्यू देने में हर्ज क्या है ?" -यह जानते हुए भी कि आपको नहीं लिया जाएगा ?" मैंने कहा- "यह आपसे किसने कह दिया कि मुझे नहीं लिया जाएगा ?" मेरा आत्मविश्वास देखकर प्रश्नकर्त्ता भौंचक्के रह गये।

अगले दिन किसी ने मुझसे कुछ नहीं पूछा। मैं भी यही चाहता था कि लोग फिजूल कयासो में वक्त बरबाद न करें। एक पद था इसलिए यह तो जाहिर था कि वह उम्मीदवार कइयों के मुकाबले भारी था जिसकी चर्चा जोरों पर थी। उसके भारीपन को हल्का ठहराने और अपने हल्के पन को भारी ठहराने के लिए ही लोग शायद बार-बार यह बात रेखांकित करते हुए कह रहे थे कि वह व्यक्ति केवल इसलिए लिया जाएगा क्योंकि वह व्यवस्थापकों का खासमखास है।

"तो आपको लगता है कि खासमखास का काम हो जाएगा ?" मैंने चर्चार्थी को कुरेदा। "वाह भाई साहब, आपकी इस भोली अदा पर मर मिटने को जी चाहता है। जैसे आपको मालूम ही न हो कि दफ्तर में क्या हो रहा है ? अरे परसों ही तो बात हुई है ब्रांच मैनेजर की जनरल मैनेजर से। वह ले लिया जाएगा। ब्रांच मैनेजर ने पक्का आश्वासन दिया है। हमने साफ सुना है अपने कानों से। ब्रांच मैनेजर को अपनी तरक्की नहीं चाहिए क्या जो वह जनरल मैनेजर की बात टालेगा ?"

"मगर सब कुछ ब्रांच मैनेजर के हाथ में थोड़े ही होता है ? इन्टरव्यू बोर्ड भी तो होता है। वह अगर उस खासमखास को नापसंद कर दे तो ?" मैंने तुरुप चला दी।

"इन्टरव्यू बोर्ड होता है " कह कर चर्चार्थी एक मुर्दा सी हसी हसा और बोला- "होने को सब होता है मगर आप- हम जैसों के लिए। जिसके लिए नहीं होता उसके लिए कुछ नहीं होता।"

मैंने कहा- "चर्चार्थीजी इतना निराश हो जाएं हम लोग, ऐसी स्थितियां तो नहीं हैं। मनुष्य को पहले से ही कोई राय बना कर नहीं चलना चाहिए। अभी तक तो इन्टरव्यू भी नहीं हुआ। हम पहले ही इन्टरव्यू बोर्ड की नीयत पर शक क्यों करें ?"

"आप शायद ठीक कहते हैं। "हमें ऐसा नहीं करना चाहिए।" चर्चार्थी ने मेरी बातों में शायद कोई गहरा अर्थ सूंघ लिया था। वे यह कहते हुए चल दिए- "आप भी शायद दे रहे हैं यह इन्टरव्यू। विश यू ऑल द बेस्ट। मैं चलता हूँ। सैक्शन आफिसर कल टूर पर जा रहे हैं। कई जरूरी फाइलें तैयार करनी हैं।"

केन्टीन में मैं अकेला रह गया। मुझे भी अपने सैक्शन में जाकर काम निबटाना चाहिए। मगर तभी मन ने बगावत कर दी। नहीं जाऊँगा। निष्ठापूर्वक काम किया पन्द्रह बरस तक। ले-देकर एक चांस आया और उस पर भी मैनेजमेन्ट बाहर से लाकर आदमी लादना चाहता है। क्या फायदा दिन-रात खटते रहने का। मुझसे

अच्छे तो वे लोग हैं जो पहले ही दिन से मौज मार रहे हैं। मैं असमय कैन्टीन मे बैठने को अपने आप से ही जस्टीफाई कर रहा था।

तभी वासुदेव आ गया। आते ही बोला– यार भइा, हो जाए कुछ कॉफी-साफी। "

"किस खुशी म ? " मैंने कहा।

"है खुशी, है मैन ! बहुत बडी खुशी। तुम आडर दो तो बताऊँ। "वासुदव न पास वाली कुर्सी को और करीब खींचत हुए राजदाराना लहजे म कहा।

मैंने छोकरे को दो कॉफी लाने को बोल दिया।

वासुदेव ने इधर-उधर देखा। फिर करीब होते हुए बोला- "मैंन सुना है तुम्हारा ही नाम चल रहा है ऊपर ?"

"किसके लिए ?" मैंने जिज्ञासा प्रकट की।

"अब रहने दो यार यह नाटक।" वासुदव ने बेतकल्लुफ होते हुए कहा।

"खैर तुम कहत हो तो ठीक है। वरना कई लोग एस्पायर कर रहे हैं इस पोस्ट के लिए।" मैंने तटस्थ भाव से कह दिया।

"कर रहे होगे। मगर जी एम की राय तुम्हारे बारे म बहुत अच्छी है। कल ही तो उन्होने बी एम से बात की थी तुम्हार बारे मे। मैं उस समय चैम्बर म ही था।" कॉफी का घूँट भरते हुए वासुदव बोला।

"अर, छाडा यार ! किसे बेवकूफ बना रहे हो ? यह बात ता उस व्यक्ति के बारे म थी जिसे इस पोस्ट पर लिया जाना है। " मैंने गिलास खाली करक एक तरफ सरकाते हुए कहा।

"और अगर मैं यह कह दूँ कि वह व्यक्ति कोई दूसरा नहीं, तुम हा तो तुम्हे कैसा लगेगा ? " वासुदेव न उठत हुए धीरे से कह दिया।

मैं वासुदेव को जाते हुए देखता रहा। मेरे अन्दर स किसी न कहा, वह आदमी मैं ही क्या, वासुदेव भी तो हो सकता है।



हादसा जो टल गया

कमला गोकलानी

"मम्मी मम्मी । अभी तक वह आदमी गली के लुक्कड पर बेहोश पडा था"

बार-बार बेटे की उसी बात को सुनकर उसे झिडकने के बजाय दीप्ति ने इस बार खिडकी से झाका तो उस महसूस हुआ कि आकर्षक व्यक्तित्वयुक्त शालीन वस्त्र पहने उस अजनबी का सम्बन्ध अवश्य किसी श्रेष्ठ परिवार से होगा। उसने यह भी देखा कि वहाँ से गुजरते लोग उस अजनबी से सुहानुभूति प्रकट करने के स्थान पर उस गालिया देत हुए घृणित निगाहा से देखते जा रहे थे।

सामान्य स्थिति मे दीप्ति भी ऐसा करती, पर आज न जाने क्यो उसका मन अज्ञात भय से काप उठा। अन्तर था तो केवल व्यक्ति का। और उसके समक्ष एक माह पूर्व का दृश्य साकार हो उठा, जब प्रकाश के कुछ पूर्व परिचित उसे रात्रि के नौ बजे घर छोडकर गये थे।

उनके विवाह की पन्द्रहवीं वर्षगाठ थी। उस दिन शराब पीने का उसका शौक आदत बन चुकी थी- एरियर अलग मिलना था, सो बैठ गया होगा दोस्तो के साथ पीने-पिलाने। दीप्ति कई बार पति को समझा चुकी थी और उसने प्रतिज्ञा की थी कि विवाह की वर्षगाठ के अवसर पर सदा के लिए यह बुरी आदत त्यागने की कसम लूगा। बच्च और तुम्हारे लिए बढिया गिफ्ट लाऊँगा और किसी अच्छे होटल मे ग्रेड डिनर के साथ वर्षगाठ और नये सकल्प की खुशी सेलीब्रेट करेगे।

दीप्ति बेताबी से प्रतीक्षा करती रही थी उस साझ को, पर उसे क्या पता था कि वह साझ कभी आनी ही नहीं। प्रकाश को नश म धुत समझते हुए वह रूठकर बच्चो के कमरे मे जाकर सो गयी थी। सोचा था, होश म आने पर प्रकाश स्वत उससे माफी मागेगा। पर सुबह सात बजे तक जब प्रकाश की आँख नहीं खुली तो दीप्ति को चिन्ता हुई, जाकर उसे झिझोडा पर

प्रतिक्रिया स्वरूप प्रकाश ने हाँ हूँ भी नहीं की। दीप्ति पास म ही निवास करत डॉ बनर्जी को बुला लायी, जिन्हाने उस अस्पताल ले जान का सलाह दी। दीप्ति की अन्तरात्मा अज्ञात की आशका से काप उठी। किसी तरह साहस स काम लेकर उसने ज्येष्ठ को फोन किया, वे कार लेकर आय और प्रकाश को अस्पताल ले जाया गया। विशेषज्ञो ने जाच की, सभी तरह क एक्सरे लिये गये, प्रकाश का होश मे लाने के सभी प्रयास असफल सिद्ध हुए। डॉक्टरो ने कहा - अन्दरूनी चोट लगने से ब्रेन हैमेरेज की सम्भावना प्रतीत होती ह। राजधानी क अस्पताल मे ले जाना उचित रहेगा।

प्रकाश एक सप्ताह तक उसी स्थिति मे जीवन व मृत्यु क बीच जूझता रहा। डॉक्टर प्रयास करते रहे किन्तु सब बकार। दीप्ति आर उसकी सास वहाँ बैठ-बैठे न जाने कितनी मनौतिया माग बैठी- दिल से की गयी बच्चो की प्रार्थनाएँ भा जान क्या परमात्मा ने अस्वीकार कर दीं। सभी इच्छाएँ सीने म छुपाये दीप्ति क जीवन का प्रकाश असमय ही बुझ गया। अभी चालीस वर्ष का भी तो नहीं था वह।

तीन बच्चा की पढाई व भविष्य का बोझ सूनी माग लिये जीवनपर्यन्त विधवापन का दाग लिये सघर्षमय जीवन की ऊबड-खाबड सडको पर चलना था अब दीप्ति को।

उस दिन की घटना के लिये उसे आज तक स्वय क लिये अपराध बोध का एहसास होता है। वह क्या रात भर बफिक्र सोयी रही ? क्यो नहीं सदैव की भाँति उसे नींबू या खट्टी चीज खिलाकर होश मे लाने की कोशिश की ? सम्भवत यथासमय निदान मिलने पर वह जीवित रह पाता। उस दिन से उसकी हर उस राहगीर के प्रति बददुआ निकलती है जो लगातार दो घटे तक रास्त म अचेतन पडे प्रकाश को देखकर भी अनदेखी करके मानवीय सवेदना से विमुख होकर चलत बने होग। उसके मन मे प्रकाश के उन मित्रो क प्रति भी आक्रोश है, जिन्होने वर्षगाठ मनाने का आड म उसे आवश्यकता से अधिक पिला दी तथा फिर उसे 10 किलो मीटर दूर स्थित घर जाने के लिये अकेला ही छोड दिया।

अगर डी ए की रकम घडी, अँगूठी और गले की चेन नहीं होती तो सब यही समझत कि बेदर्द लालची ने पैसो के कारण यह सितम ढाया है। कहने को वह सबको यही कहती है कि प्रकाश दुर्घटना का शिकार हो गया। पर सच्चाई यहीं तक सीमित नहीं। दुर्घटनाग्रस्त मात्र प्रकाश नहीं उसका पूरा परिवार हुआ है। दीप्ति भरी जवानी मे विधवा बन गयी। उसके बच्चे अनाथ कहलाने को विवश है उसके ससुर व ज्येष्ठ को तो अपना ही भविष्य कधा पर लिटा कर श्मसान भूमि ले जाना पडा। दीप्ति की माँ जवान जवाई की याद

मे रात-रोत दीवारा स सर टकरात-टकरात अनेक रोगो को निमन्त्रण द चुका है- दीप्ति क पिता को भी कमर टूट गयी है ।

यद्यपि सवेदना प्रकट करन वाला स यही कहा गया है कि रक्तचाप बढन के कारण स्कूटर का सतुलन बिगड जाने से यह हादसा हुआ तथापि दीप्ति का लगता हे कि हादसे का कारण प्रकाश का अधिक पीना ही होगा । काश । वह अपने बनावटी सुख क साथ परिवार का भी ध्यान रक्खा ।

प्रकाश रहित दीप्ति की कल्पना से तो गैरो के मुख स भी आह निकलती ह । इस युवा दम्पति का प्यार सब क लतीफो, महफिलो और पार्टिया की जान हुआ करत थे । उनका आगमन ही खुशी म चार चाँद लगने का पर्याय बन जाता था ।

कभा किसा कार्यवश प्रकाश के नगर से बाहर हाने की स्थिति मे दीप्ति अकली पेदल घर से निकलती ओर कोई परिचित मिल जाता तो आश्चर्यचकित हाकर पूछता " आज भाभीजान पैदल कैसे ? सब खैरियत तो है ? प्रकाश भाई कहाँ गये ?"

आर अब जीवनपर्यन्त उसे अकेले पैदल चलना होगा । सुख रगो की भडकीली साडिया जो प्रकाश उसे जन्म दिन और विवाह की वर्षगाठ के अवसर पर भट दिया करता था उन्हे वह कभी नहीं पहन सकेगी । सिन्दूर से दमदमाती उसकी माग अब हमेशा सूनी रहेगा । सौभाग्य सूचक मगल - टीक से उसका ललाट अब खाली रहेगा । शादी ब्याह के सुखद अवसरों पर अब उसका जाना अपशगुन का कारण बनेगा- तभी उनके शब्दो ने पुन झिझोड कर ख्यालो की दुनिया से आजाद करते हुए कहा- "देखो न मम्मी । लडके उसे पत्थर मार रहे हैं । कुत्ते और सुअर उसे सूघत हुए जा रहे हैं ।"

उसके भावुक मन का मोम इस व्यावहारिक विचार की गर्मी से पिघलने लगा कि अन्य राहगीर भी तो हैं उसी को क्या चिन्ता सताये जा रही है ? प्रकाश होता तब ता अलग बात थी । अब विधवा होने की स्थिति मे अजनबी को घर लाने का दुस्साहस वह कैसे करे ? सामाजिक सीमाएँ लाघने का साहस कहाँ से बटोरे वह इस तरह की विषम परिस्थितियो म ।

मन की आँख फिर डरावने दृश्य देखने लगी- एक और दीप्ति विधवा होने के कगार पर नजर आयी, एक अन्य घर से सार्थक, विवेक और विनीता अनाथ होने जा रहे हैं एक और प्रकाश को निगलने हेतु गहन अधकार तेज गति से चला आ रहा है और मन ही मन कोई फैसला करके वह उठती है । गली क बच्चो के व्यंग्य डूबे शब्द उसके कानो म पिघला सीसा घोलने लगते हैं पागल है... पत्थर मारो, मजनू है शराबी है । वह बडबडाती सी बाहर निकलती है ।





- जन्म– 17 अप्रल 1940 जम्मू तवी
- पिता स्व० प्राफसर जयदन शमा (हिन्दी और सस्कृत के प्र५ पण्डित)। वचपन म माता वश्नो की स्तुति गाते हुए कविता साता फूटा।
- प्रकाशन– डोगरी मे पाच् कविता सग्रह प्रकाशित। स ि अकादमी द्वारा पुरस्कृत कृति 'मेरी कविता मेरे गीत' का ि अनुवाद।
- सवद निलावा—डोगरी का अनूदित कवि क स पा म पद्याश। (राजकमल प्रकाशन)
- गोदभरी– डागरा हिन्दा कहानिया का सकलन ा न प्रकाशन।
- दीवानखाना—हिन्दी म माक्षात्कार।
- निनवायर—हिन्दी म माक्षात्कार राजकमल प्रकाशन।
- देश की प्रमुख पत्रिकाआ म लेखन।
- पुरस्कार
  - सावियन लेड नहरू पुरस्कार
    हिन्दी अकादनी का पुरस्कार
  - उत्तरप्रदेश का सरकार का पुरस्कार
    जम्मू कश्मीर सरकार द्वारा रोब आफ ऑनर और पुस्तकों कल्चरल अकादमी का पुरस्कार।